श्री राम लाल प्रभु जी

परब्रह्मणे नमः

श्री 1008 योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज का

चरितामृत

श्री योग महादिव्य रामायण

तृतीय खण्ड (दिव्यकाण्ड)

लेखक :-

चमन लाल कपूर 'सेवक'

प्रकाशक :-

योग साधन आश्रम, 3 - मांडल टाऊन,

होश्यारपुर (पंजाब)

ॐ

श्री राम लाल प्रभु जी

परब्रह्मणे नमः

श्री 1008 योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज का

चरितामृत

श्री योग महादिव्य रामायण

तृतीय खण्ड (दिव्यकाण्ड)

लेखक :-

चमन लाल कपूर 'सेवक'

प्रकाशक :-

योग साधन आश्रम, 3 - माडल टाऊन,
होश्यारपुर (पंजाब)

द्वितीयबार 1000
योगेश्वर राम लालाब्द 111
विक्रम संवत 2056
ईस्वी सन 1999

भेंट :- रु. 100/-

योग वन्दना

योग – विद्यां नमाम्यहम्

सौंदर्यलहरीरूपां, तापत्रयविनाशनीम् ।
तेजस्विनीं तपोरूपां, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।१।।
संस्थापकां समत्वं तां, शक्तिसर्जनकारिणीम् ।
चित्तवृत्तिनिरोधाय, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।२।।
अर्धनारीश्वरस्येमां, चैतन्यसार संभवाम् ।
पूर्णरूपकुण्डलिनीं, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।३।।

●●●●

❊ योग तुझे नमस्कार ❊

सुन्दर करे जो देह को, करे दुखों से पार ।
तेज रूप तप रूप जो, योग तुझे नमस्कार ।।१।।
करे समत्व दान जो, शक्ति सिरजनहार ।
चित्तावृत्ति निरोधहित, योग तुझे नमस्कार ।।२।।
आदिनाथ से ऊपजा, चेतनता का सार ।
जागृत कुण्डली जो करे, योग तुझे नमस्कार ।।३।।
राम लाल जिस का किया, कलियुग में उद्धार ।
मुलखराज के "सेवक", का तुझे नमस्कार ।।४।।

चमन लाल कपूर "सेवक"

ओ३म् नमः श्री रामलाल प्रभुजी परब्रह्मणे नमः

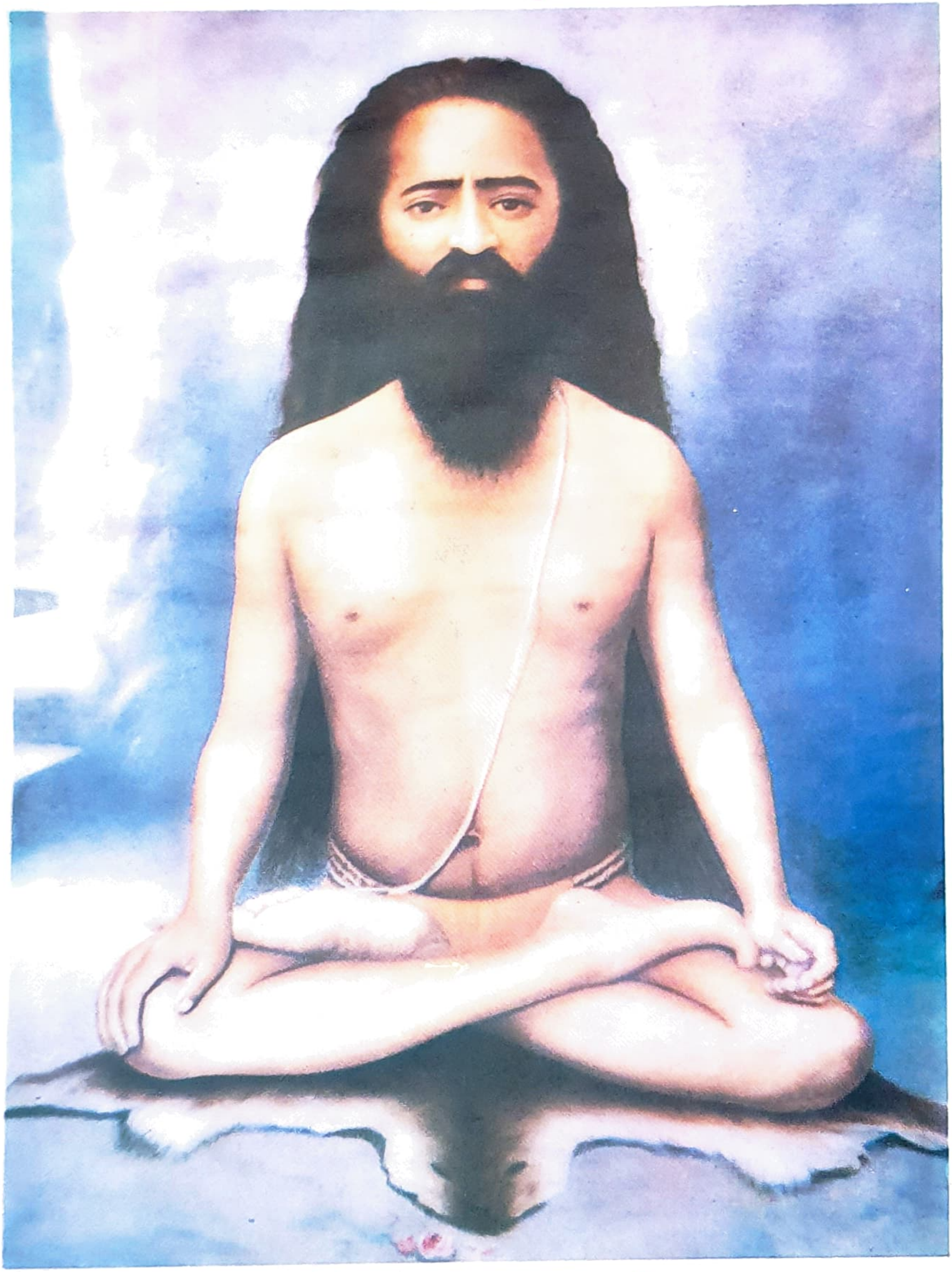

श्री 1008 योगेश्वर प्रभु रामलाल जी महाराज

समर्पण

योगेश्वर श्री १००८
प्रभु राम लाल जी महाराज

योगेश्वर श्री १००८
स्वामीं मुलख राज जी महाराज

समर्पित उन के चरणों में,
जिन की है यह जीवन गाथा ।
राम–मुलख भगवान की चरणी,
टेकत "सेवक चमन" है माथा ।

भूमिका

योगेश्वर श्री प्रभु राम लाल जी महाराज की दिव्य अनुकम्पा और परमपूज्य योगेश्वर सद्गुरुदेव स्वामी मुलरव राज जी महाराज की कृपा से योग जिज्ञासु भक्त समाज के कर कमलों में "श्री योग महादिव्य रामायण" की तृतीय रवण्ड (दिव्य काण्ड) मुद्रित हो कर पहुँच रहा है। आशा है योगी भक्त समुदाय इसे कृपा कर अपनायेंगे।

इस काण्ड की प्रमुरव विशेषता श्री सद्गुरुदेव स्वामी मुलरव राज जी महाराज के उपदेशों और उन द्वारा बतलाये अनेकों रोगों की योग साधनों द्वारा अनुभूत चिकित्सा में है। शारीरिक और मानसिक समस्त रोगों का इलाज योग साधनों द्वारा संभव है। इस काण्ड के स्वाध्याय से इस मत की दृढ़ पुष्टि होगी।

इस काण्ड में मन की एकाग्रता के साधन, करुणावतार श्री प्रभु जी की भक्तों पर दिव्य कृपा और प्रभु भक्ति पर स्वामी मुलरव राज जी महाराज के उपदेश ज्ञान के सुन्दर स्रोत हैं। जिज्ञासु भक्त जन, आशा है, इस ग्रंथ के पठन पाठन और श्रवण मनन से लाभान्वित होते रहेंगे।

होश्यारपुर

1 मार्च 1983

श्री सद्गुरु चरणों का 'सेवक'

चमन लाल कपूर

श्री योग महादिव्य रामायण (दिव्य काण्ड)

प्रसंग सूचि

क्रम संख्या	प्रसंग	पृष्ट
१.	विनय	१
२.	श्री स्वामी मुलख राज जी का यश विस्तार	२
३.	मद्रास की जनता की प्रार्थना पर श्री स्वामी मुलखराज का मद्रास गमन और भव्य स्वागत	३
४.	गण्टूर नगर के राम नाम क्षेत्र में श्री स्वामी मुलख राज जी द्वारा भक्तों पर विशेष कृपा और उन के दिव्य प्रवचन	७
५.	पाकिस्तान की स्थापना के समय देश में खुलम खुला नर संहार तथा भक्तों की दिव्य शक्ति द्वारा रक्षा - श्री स्वामी जी का प्रवचन	१५
६.	चण्डी प्रसाद की अग्नि से रक्षा - श्री स्वामी जी का प्रवचन	१६
७.	गुलाब देवी के घट में प्रकट हो श्री प्रभु जी के वचन	२०
८.	बसन्ती देवी के पुत्र की रक्षा, तुलसी के पत्तों पर दिव्य लेख- श्री स्वामी जी का प्रवचन	२२
९.	नेत्र हीन को दृष्टि दान	२७
१०.	पंगु को चलने योग्य बनाना	३०
११.	श्री प्रभु राम लाल जी की दिव्य महिमा का बखान - श्री स्वामी जी द्वारा	३३
१२.	बोबली नरेश श्री कृष्ण रंगा जी राय और उस की रानी सरस्वती का श्री स्वामी जी की शरण में आना	३५
१३.	श्री स्वामी जी का मद्रास से लौट कर हरिद्वार आना और भक्तों को उपदेश में अपने अनुभव बतलाने	४१
१४.	योग के साधनों द्वारा रोगों का उपचार :- 1. शिर के रोग 2. श्वास के रोग 3. उदर के रोग 4. सिर दर्द 5. मन्द दृष्टि 6. कान पीड़ा 7. गले की सूजन 8. ज्वर 9. आमाशय, जिगर व तिली के रोग 10. दमा 11. क्षयरोग-तपेदिक 12. उदर वृद्धि	४४

13. कब्ज 14 पेट के कीड़े 15. दस्त 16. नाभि का टलना या धरण पड़ना 17. बवासीर-गुदावर्त 18. रक्त दोष, त्वचा के रोग और कैंसर 19. देह की स्थूलता व कृषता 20. हृदय के रोग 21. पक्षाघात, अधरंग व झोला रोग 22. जोड़ों की दर्दें 23. रक्त चाप (Blood-pressure) 24. पीलिया 25. खांसी, कास रोग 26. उलटियां, कय, छर्दि रोग 27. पेट दर्द या शूल, सर में दर्द 28. प्रमेह, मधुमेह आदि मूत्र रोग 29. अपस्मार या मिरगी रोग 30. उदर व्रण (Peptic Ulcer) 31. पागलपन 32. गले पड़ना (Enlargement of Tonsils) व कण्ठमाल 33. नज़ला, जुकाम

१५. योग अनुकूल जीवन और उस के लक्षण ८४
१६. तुतलाने का उपचार ८६
१७. देश का बटवारा, भक्तों की पुकार पर श्री प्रभु जी द्वारा उन की रक्षा, श्री स्वामी मुलख राज ने भक्तों का संकट अपने तन पर लिया ९२
१८. श्री राम प्यारा का श्री स्वामी मुलख राज के चरणों में आना १००
१९. श्री देवी दयाल का सद्गुरु शरण में आना १०४
२०. श्रीमती गुरु माता जी और श्री स्वामी मुलख राज जी का संवाद १०६
२१. श्रीमती गुरुमाता जी का देह त्याग और श्री स्वामी मुलखराज का जनता को ज्ञानोपदेश १०७
२२. श्री प्रभु जी की आज्ञा से होश्यारपुर में योग साधन आश्रम की स्थापना और दिव्य योग प्रचार ११८
२३. होश्यारपुर में श्री सद्गुरु स्वामी मुलख राज जी महाराज का योग उपदेश, सूर्य ध्यान और चन्द्र ध्यान की विधि और उस का फल १२२
२४. श्री स्वामी जी द्वारा ओकाड़ा मन्डी जा कर अपनी समाधि अवस्था में ही मक्की खरीद करने का निज अनुभव वर्णन करना १२८
२५. एक भक्त का प्रश्न "प्रभु चरणों में प्रीति और मानसिक एकाग्रता कैसे बढ़े ?"— श्री स्वामी जी का उत्तर १३५
२६. एक भक्त का प्रश्न " प्रभु कृपा कैसे प्राप्त हो ?" श्री स्वामी जी का उत्तर १३७

क्रम संख्या	प्रसंग	पृष्ठ
२७.	एक भक्त का प्रश्न "ध्यान में बैठने के लिए कौन सा आसन हो ?" श्री स्वामी जी का उत्तर	१४४
२८.	खेचरी की सिद्धि का स्वरूप	१४८
२९.	श्री स्वामी जी का होश्यारपुर से प्रस्थान और अमृतसर में पदार्पण तथा भक्तों को प्रभु भक्ति का उपदेश	१५५
३०.	श्री स्वामी जी द्वारा होश्यारपुर के आश्रम का परिचय अमृतसर के भक्तसमाज को देना तथा भक्ति का माहात्म्य कथन करना	१६१
३१.	योग की पुरातन परम्परा - भगवान शिव, मत्स्येन्द्र नाथ आदि तथा श्री प्रभु जी का कलियुग में योग उद्धार हेतु अवतार	१६९
३२.	योग विद्या के प्राचीन ग्रंथों का ज्ञान श्री स्वामी जी द्वारा भक्तों को देना	१७६
३३.	योग धर्म के पतन के मुख्य कारण	१८६
३४.	योग धर्म के उद्धार हेतु श्री प्रभु राम लाल का अवतार कथन और शरणागत भक्तों को योग व क्षेम का दान	१८८
३५.	प्रभु स्वरूप के ध्यान की सरल विधियां	१९९
३६.	मन - देवताओं का स्वामी कैसे ?	२१६
३७.	आत्म ज्योति का ध्यान और विश्व दर्शन	२१७
३८.	ध्यान में शरीर की सुधि न रहना, श्री स्वामी जी महाराज का निज अनुभव	२२५
३९.	पं० चक्रधारी 'बेजर' का सद्गुरु शरण में आना	२३०
४०.	श्री योग महादिव्य रामायण की रचना। उस के पाठ का विधान व फल	२३९
४१.	श्री योग महादिव्य रामायण के अखण्ड पाठ की विधि। पाठ का महात्म्य	२४३
४२.	'ब्रह्माण्डयोग शक्ति वर्षा' की रचना और उस का विषय	२५१
४३.	अमृत-मन्थन व योग	२५३
४४.	कनखल (हरिद्वार) आश्रम स्थापना	२५६
४५.	श्री स्वामी मुलखराज जी महाराज का समाधि अवस्था में देह त्याग कर प्रभु चरणों में महा प्रस्थान	२८०
४६.	'सेवक' पर प्रभु कृपा	२८५

—०—

योगेश्वर श्री १००८ प्रभु राम लाल जी महाराज
के दिव्य चरित की संक्षिप्त जानकारी

१. पूज्य पिता जी का नाम... ... ... (श्री पं० गण्डा राम जी)

२. पूज्या माता जी का नाम ... ... (श्रीमती भागवंती जी)

३. जन्म स्थान... ... ...(कटड़ा भाई सन्त सिंह, अमृतसर)

४. जन्म की तिथि... ... ...(चैत्र शुक्ला नवमी सं० १९४५; ई० सन १८८८)

५. वृद्धा को जीवन दान .. .. (वि० सं० १९४८; ई० सन् १८९१)

६. विद्या आरम्भ... ... ... (वि० सं० १९५० ई० सन् १८९३)

७. कनखल में विद्याध्ययन... ... ... (वि० सं० १९५६; ई० सन् १८९९)

८. कुरुक्षेत्र में विद्याध्ययन... ... ... (वि० सं० १९५९; ई० सन् १९०२)

९. विवाह... ... ... (वि० सं० १९६०; ई० सन् १९०३)

१०. पूज्य पिता जी का देहान्त... ... ...(वि० सं० १९६४; ई० सन् १९०७)

११. घर त्याग कर वन प्रस्थान... ... ...(वि० सं० १९६५; ई० सन् १९०८)

१२. नर्वदा नदी की परिक्रमा तथा हरिहरानन्द को अपनाना... ... ...(वि० सं० १९६६; ई० सन् १९०९)

१३. नासिक में दो शरीरों की रचना ... (वि० सं० १९६७; ई० सन् १९१०)

१४. बिहार प्रदेश में राम रत्ती को योग दान ... (वि० सं० १९६७; ई० सन् १९१०)

१५. बंग देश में रामा को भक्ति दान ... (वि० सं० १९६८; ई० सन् १९११)

१६. आसाम में घोर वन यात्रा का आरम्भ तथा नागाओं द्वारा श्री प्रभु जी का अपहरण... (वि० सं० १९६९; ई० सन् १९१२)

१७. मय ग्राम में राजा रण सिंह और उस के योगी गुरु से मिलाप... ... ... (वि० सं० १९६९; ई० सन् १९१२)

१८. नेपाल राज्य में भव्य स्वागत... ... (वि० सं० १९६९; ई० सन् १९१२)

१९. श्री महा प्रभु जी से मिलाप और सुमेरु गिरि पर वास... ... ...(वि० सं० १९६९-१९७०; ई० सन् १९१२-१३)

२०. सुमेरु गिरि से लौटकर सवाई में गुफा निर्माण (वि० सं० १९७०; ई० सन् १९१३)

२१. अणिमा सिद्धि द्वारा सवाई की बन्द गुफा से निकल आकाश मार्ग से हरिद्वार प्रस्थान ... (वि० सं० १९७१; ई० सन् १९१४)

२२. हरिद्वार में भाई से मिलाप .. .. (वि० सं० १९७२; ई० सन् १९१५)

२३. अमृतसर में पुनः गृह प्रवेश ... ... (वि० सं० १९७२; ई० सन् १९१५)

२४. अमृतसर में योग प्रचार आरम्भ... ... ...(वि० सं० १९७३; ई० सन् १९१६)

२५. श्री मुलख राज जी को शरण में लेना... ...(वि० सं० १९७६; ई० सन् १९१९)

२६. योग साधन आश्रम की स्थापना... ... (वि० सं० १९७७; ई० सन् १९२०)

२७. भक्तों सहित सवांई ग्राम (आगरा)में फिर जाना (वि० सं० १९८७; ई० सन् १९३०)

२८. दिव्य लीला : एक शरीर को अमृतसर में
त्याग दूसरे शरीर से पुनः सुमेरु प्रस्थान) ... (वि० सं० १९९५; ई० सन् १९३८)

२९. 'सेवक' को स्वप्न में प्रभु दर्शन और
श्री सद्गुरुदेव मुलखराज जी महाराज से दीक्षादान (वि० सं० १९९७; ई० सन् १९४०)

३०. 'सेवक' द्वारा प्रभु आज्ञा से श्री योग महादिव्य
रामायण का लिखना आरंभ... ... ...(वि० सं० २०२७; ई० सन् १९७०)

ॐ

श्री दिव्य रामायण सहगान

दिव्य रामायण की गाथा को,
जो नर सुने सुनावे ।
जीवन में रहे सुखी हमेशा,
अंत परमपद पावे ॥
श्री प्रभु गंडाराम दुलारे,
इस में उन के खेल हैं न्यारे ।
पतित पावनी कथा मनोहर,
भक्तन के मन भावे ॥
सुन्दर यह इतिहास मनोहर,
लीला कीनी जिमि योगेश्वर ।
योग साधना की पावस ऋतु,
योगामृत बरसावे ॥
उत्तम नीति इस में आई,
भक्त जनों के जो मन भाई ।
इस के सुनने से प्राणी का,
पाप नाश हो जावे ॥
श्री प्रभु राम लाल हैं नायक,
जीव चराचर के सुखदायक ।
उन के चरण कमल का भौंरा,
'सेवक' शीश झुकावे ॥

ॐ

अथ श्री योग महादिव्य रामायण का चतुर्थ काण्ड

दिव्य काण्ड

१. विनय

दो० दिव्य काण्ड करूं आरंभ, ले मैं प्रभु का नाम ।
कृपा नाथ की हो यदि, पूर्ण होय शुभ काम ॥ २०७९छ

दिव्य काण्ड अब करूं बखान, सद्गुरु चरणों का धर ध्यान ।
प्रभु चरणों को कर प्रणाम, महाप्रभु का ले कर नाम ।
दिव्य काण्ड का होय आरंभा, श्रवण करें जन सहित अचंभा ।
दिव्य लीला इस में है आई, प्रभु चरणों में जो लख पाई ।
सद्गुरु देना प्रतिभा दान, सिद्ध भये जिमि कार्य महान ।
गुप्त रहस्य जो हैं जग माहीं, प्रकट भयें अब सब के ताहीं ।
राम लाल प्रभु ले अवतार, खोला योग का गुप्त द्वार ।
योग रहे नहीं जग से गुप्त, रह कर गुप्त न कहीं हो लुप्त ।
योग भानु का अब उद्योत, होय जगत में ओत प्रोत ।

२. श्री स्वामी मुलखराज जी का यश विस्तार

दो० राम लाल जब नगर से, लीन विदाई आप ।
विस्तृत कीना मुलख का, बस्तिन में प्रताप ॥ २०८०क

फैल गया जब मुलख[1] में, मुलख राज प्रताप ।

---

१. जगत

जन आर्कषित होंय तब, दूर दूर से आप ।। २०८०ख

दूर दूर से जन चलि आते, मुलखराज को शीश झुकाते ।
मुलख राज से पा उपदेश, लौट जायें निज निज वे देश ।
कथन करें जा अपने स्थान, मुलख राज गुरु एक महान ।
स्पर्श मात्र से करत नीरोग, अथवा देत समाधि योग ।
उस सम जग में हम न देखें, मुलख राज जिमि योगी पेखें ।
वाणी मधुर नूरानी रूप, दिव्य पुरुष वह परम अनूप ।
आडंबर लेश न वेष साधारण, गर्व का उस में है न कारण ।
ज्ञान प्रपूर्ण सरल व्यवहार, मिले न उस सम शुद्ध आचार ।

दो० उस सम मिलत न जगत में, सरल पुरुष लो जान ।
योग धर्म जिमि पालता, मुलख राज धीमान ।। २०८१क
तन से रहता जगत में, मन में है भगवान ।
चल सब देखो हम संग, निश्चय हो कल्याण ।। २०८१ख

बार एक सब हम संग चालो, दिव्य योगी के दर्शन पा लो ।
मानव तन का करो उद्धार, योगी के चल कर तुम द्वार ।
ग्राम छेहरटा अति ही प्यारा, जहां अनूपम योग द्वारा ।
प्रभु की शक्ति का वहां वासा, कर दर्शन हो दृढ़ विश्वासा ।
उस आश्रम की छू है न्यारी, माटी धरती की उस प्यारी ।
वहां का अमृतसम है नीर, पीयूष भरी है वहां समीर ।
वृक्ष वहां जो प्रभु लगाये, कामतरू सम भक्तन भाये ।
उनकी छाया में गुण भारी, जन गण की वह हरत बिमारी ।

दो० उस धरती का क्या कहें, किस विध होय बखान ।
चल कर ही सब जान लो, प्रत्यक्ष को क्या प्रमाण ॥ २०८२क
मानव की तो बात क्या, जीव जन्तु भी जोय ।
वास करें जो थल उसी, भाग्य उदय बहु होय ॥ २०८२ख

उस आश्रम में फूल जो पात, उन में भी दिव्य गुण साक्षात ।
वहां के पुष्प भी हरते रोग, दूर करें तन मन का सोग ।
मुलख राज सद्गुरु महाराज, सुधारे भक्त जनों के काज ।
जो भी जन आश्रम में आता, लौट यही वह बात सुनाता ।
योग साधन के गुण वह गाता, प्रभु शक्ति की कथा बताता ।
मुलख राज का करत बखान, कलि में प्रकटे सिद्ध महान ।
प्रेरित हो बहु जन चलि आते, भक्ति भाव आ कर दिखलाते ।
देख मुलख का दिव्य स्वरूप, उपजत तत्क्षण प्रीत अनूप ।
दिव्य विग्रह व दिव्य स्वरूप, जान अलौकिक मुलख का रूप ।

दो० रूप अलौकिक जान कर, शरण गिरें जन आन ।
चरण स्पर्शन जब करें, विसरे देह का भान ॥ २०८३

३. मद्रास की जनता की प्रार्थना पर श्री स्वामी मुलख राज का मद्रास गमन और भव्य स्वागत

ख्याति देश विदेश विस्तारी, आवें दूर से नर व नारी ।
मद्र देश से नर कुछ आये, ख्याति प्रभु की जो सुन पाये ।
तेरह जन इस सेवक देखे, भक्ति उन की कौन उल्लेखे ।

कुल मर्यादा सकल भुलाई, भये सेव रत आश्रम आई ।
देख मुलख उन का शुभ भाव, सेवा धर्म नेम सद्भाव ।
कृपा कीनी चरणी लगाया, उन को ध्यान समाधि बिठाया ।
अनुभव दिव्य उन्हें हो पाये, जा कर सब निज देश बताये ।
लोग लोगाइन चरचा चाली, प्रभु प्रकटे हैं जग में आली ।
उनके दर्शन को कर पाये, दूर देश उन डेरे लाये ।

दो० वास करें वे देश उस, पंचनद जिस का नाम ।
दूरी शतशः कोस की, अमृतसर है धाम ॥ २०८४

जौन धाम में उनका वासा, देव लोक वह तुल्य आवासा ।
देव लोक से बढ़ कर शोभा, दर्शन हित हमरा मन क्षोभा ।
हम दीन वहां किस विध जायें, दीन दयालु दया कर आयें ।
जन्ननायक जो उन के भारी, पाती तब उन ने लिख डारी ।
"दीन दयाल दया कर आइये, कृतकृत्य हम को कर पाइये ।
मद्र देश की जमता सारी, देख रही है राह तुम्हारी ।
योग धर्म आ कर सिखलायें, तन मन के आ कष्ट दुरायें ।
मन चंचल है चैन न पावे, योग बिना न वश में आवे ।
गुरु बिन योग का दुर्लभ पाना, तुम योगी हो आ अपनाना ।

दो० आ कर मद्र देश में, करें योग प्रचार ।
सन्मार्ग बतलाय कर, हमें लगावें पार" ॥ २०८५

स्वामी जी जब पाती देखी, विनय शीलता उन की पेखी ।
चलने का विचार बनाया, संग में एक भक्त ले पाया ।

उन्नीशत पैंतालीस साल, दिसम्बर पंचदश चले दयाल ।
गंटूर नगर तब आन पधारे, लम्बी यात्रा थके वे भारे ।
गाड़ी रुकी उतरे जन सारे, ठाड़े उतर वे एक किनारे ।
भीड़ का था न पारावार, स्वागत हित जन खड़े अपार ।
किस के स्वागत हित सब आये, हाथी घोड़े रथ संग लाये ।
कहें स्वामी निज सेवक ताहीं, भीड़ छटे तब हम भी जाहीं ।
इतने में इक सज्जन आया, स्वामी जी को शीश झुकाया ।

दो० मस्तक अपना टेक कर, कहन लगा सविनीत ।
"मिल पाये न रेल में, व्याकुल हमरा चीत ॥ २०८६

आप चलें हम संग अब स्वामी, करिये किरपा अन्तर्यामी ।
चरण आप के दीना नाथ, पूज बनें हम सभी सनाथ" ।
सुन कर उसकी ऐसी वाणी, प्रेम सहित बोले महादानी ।
"भीड़ जभी यह सब छट जाय, चलने का तब करें उपाय" ।
अचरज से नर वही उचारे, "स्वामी तेरे सेवक सारे ।
आप को लेने हैं ये आये, सेवा में है हस्ती लाये ।
हस्ती पर चल हों अस्वार, दर्शन आतुर हैं नर नार ।
बिलंब कारण हैं सब विस्माय, संयोजक हैं अति घबराय ।

दो० सब को चल कर दीजिये, दर्शन दीना नाथ ।
दर्शन कर के आप का, जन गण भयें सनाथ" ॥ २०८७

सुनी नाथ जब बिनती जन की, जानी प्रीती उस के मन की ।
चले नाथ जब उस के संगा, जनता उमड़ी सहित उमंगा ।

जयकारों ने गगन गुंजाया, जनसागर का पार न आया ।
वाद्य वादन का नाद अनंता, दर्शन हित बहु आये सन्ता ।
देव लोक से देव भी आये, जनता के संग सब मिल पाये ।
हस्ती पर जब नाथ विराजे, देव लोक में बाजे बाजे ।
हस्ती पर थे मुलख विराजे, ऐरावत पर जिमि इन्द्र साजे ।
शारद नारद देव महान, जनता मध्य मिले सब आन ।
सब में था आह्लाद महान, दक्षिण दिग आये भगवान ।

दो० आपा सब जन भूल कर, करें प्रभु गुण गान ।
मुलख राज महाराज का, भया दक्षिण बहु मान ॥ २०८८

राम लाल के शिष्य प्यारे, मुलख राज मुलख से न्यारे ।
उत्तर से दक्षिण दिग आये, नयनों पर जनता बिठलाये ।
देव जनों ने भी सत्कारा, भूमि पर सब स्वर्ग पधारा ।
हस्ती पर थे स्वामी स्वार, देव चलें पग भूमि धार ।
ब्रह्मा विष्णु शिव भगवान, दिव्य पुष्प बरसावें आन ।
देवांगना लाज बरसावें, नारी नर निरख हर्षावें ।
गंटूर नगर का भाग्य महान, आये आज जहां भगवान ।
नारी नर निज भाग्य सराहवें, चल कर जगद् गुरु जहां आवें ।

दो० जग के स्वामी सद्गुरु, मुलख राज भगवान ।
भक्तन की सुन वेनती, स्वयं पधारे आन ॥ २०८९

शोभा यात्रा जब चल पाई, देवों ने नग्गार बजाई ।
बैठ अटालिन नर व नारी, वर्षा करें पुष्पन की भारी ।

त्याग के जन सब काम व काज, गुरु दर्शन हित धाये आज ।
जिस जिस ने दर्शन कर पाये, वही जन अपना भाग्य सराहे ।
बाढ़ बढ़ी जनता की भारी, उमड़ पड़ी जिमि गंग मातारी ।
महानदी भी देख लज्जावे, जन समूह जब बढ़ता जावे ।
सागर के गर्जन सकुचाये, भक्तन जब जय घोष लगाये ।
वीण नग्गारे और मृदंग, बजे अनेक संगीत के अंग ।
गावे नाचे भक्त समाज, हर्ष का पारावार न आज ।

४. गंटूर नगर के रामनाम क्षेत्र में श्री स्वामी मुलखराज द्वारा भक्तों पर विशेष कृपा और दिव्य प्रवचन

दो० जनता में जो हर्ष था, होय न वर्णन लेश ।
भूला आपा सबन को, देख मुलख निज देश ॥ २०६०

राम नाम क्षेत्र में आया, भक्तन का सब जन समुदाया ।
उच्च मंच पै मुलख बिठाये, जनता नीचे आसन लाये ।
एक दृष्टि उन सब पै डाली, जिस में थी कुछ शक्ति निराली ।
तन मन की तब सुध विसराय, भक्ति विभोर भक्त हो पाय ।
चित्त सबन उल्लास था भारी, भये कृतार्थ नर और नारी ।
उछलें कूदें आपा भूल, लगावें मस्तक गुरु पग धूल ।
गान लगे कई मंगल गान, प्रभु से मांगे भक्ति का दान ।
उच्च ध्वनि से मिल उन गाया, प्रभु का मंगल गान सुहाया ।

दो० प्रभु के मंगल गान को, गान लगे मिल लोग।
महादानी श्री मुलख से, लागे मांगन योग ॥ २०६१

योग योगेश्वर मुलख स्वामी, जग में आप एक शुभ नामी।
मंगलकारी आप का नाम, मंगल कारी सद्गुरु राम।
मंगल कारी वह शुभ धाम, आप करें जहां पै विश्राम।
मंगल कारी उच्च हिमानी, जहां बसें महाप्रभु जी दानी।
मंगलकारी साधन योग, तरें अनेकों जिस से लोग।
मंगल कारी आश्रम सारे, जहां करें प्रभु चरित न्यारे।
मंगल भवन अमंगल हारी, राम मुलख प्रभु जग सुखकारी।
अमंगल हारी मंगल कारी, साधन योग धर्म मातारी।

दो० मंगल कारी महाप्रभु, मंगल कारी राम।
मंगलकारी मुलख जी, सब बोलो मिल राम ॥ २०६२

हे गुरु देव जगत के स्वामी, हे गुरु देव परम शुभ नामी।
हे गुरु देव पाप तम हारी, तव चरणों पर हम बलिहारी।
हे गुरुदेव करो अब दाया, बाधे हमें न जग की माया।
हे गुरु देव विनय स्वीकारो, भव बंधन से हमें नीकारो।
हे गुरुदेव हम शरणी लागे, शरण पड़े हम जीव अभागे।
हे गुरुदेव अब चरण तिहारे, बनें ये संबल सदा हमारे।
हे गुरुदेव किमि करें बखान, देव सबन से आप महान।
जहां तक है यह सकल जहान, आप के और न कोई समान।
ब्रह्मा विष्णु और महादेव, आप के सम न हैं गुरुदेव।

दो० गुरु समान नहीं जगत में, ऐसा है विश्वास ।
सीख हमें अब दीजिये, शरणी आये दास ॥ २०६३क

ऐसी विनय उच्चार कर, मौन भये जब लोग ।
निज मुख से गुरुदेव ने, कथन किया तब योग ॥ २०६३ख

राम क्षेत्र में बैठ कर, किया श्रवण उपदेश ।
उस नगरी के जनन ने, कहा जो गुरु महेश ॥ २०६३ग

प्रभु प्रेमी सब भक्त सुजान, हो तुम ऋषियन की सन्तान ।
गौतम वसिष्ठ अगस्त महान, ऋषि सभी थे योगी पुमान ।
जग को उन बहु योग सिखाया, योग शिरोमण हिन्द कहाया ।
भारत का आकाश सम्पूर्ण, योग शक्ति से था परिपूर्ण ।
जो जन आया यहां सुभागी, छू थी उस को योग की लागी ।
गया जो यहां से शिक्षा पाय, पीर पैगम्बर भया वह जाय ।
ऋद्धि सिद्धि उस जन में देख, जग ने दीना मस्तक टेक ।
जग में जो जन भया महान, शक्ति योग की उस में जान ।

दो० योग बिना किमि हो सकें, अद्भुत जग में कर्म ।
ईश्वर की विभूति ही, कहा योग का मर्म ॥ २०६४क

योगी नर वह जान लो, जिस का आत्म शुद्ध ।
मन इन्द्रिन को जीत कर, भया जो हो प्रबुद्ध ॥ २०६४ख

भया जो हो प्रबुद्ध जन, कर्म करे जग मांझ ।
सब जीवों के हित विषय, प्रातः से ले सांझ ॥ २०६४ग

प्रातः से ले सांझ तक, कर्म करे वह आप ।
लिप्त न होवे कर्म से, सत्गुरु के प्रताप ॥ २०९४घ
सब भूतों की आत्मा, का उस में हो वास ।
आत्म उस का सब जगह, ऐसा मम विश्वास ॥ २०९४ङ

आत्मवान योगी को जानो, उसको आत्म लीन पहचानो ।
ज्ञान से होवे संशय छिन्न, भ्रम से चित्त न होवे खिन्न ।
फल से राखे न सरोकार, त्यागे न वह निज का कार ।
ऐसा योगी कहूँ महान, उस के न कोई और समान ।
विरला जन यह योग कमावे, जीवन मुक्ति वह जन पावे ।
ऐसा जन धारे सन्यास, जग तृष्णा से रहे उदास ।
चित्त में होय ज्ञान प्रकास, संशय सर्व का होय विनास ।
आत्म ज्योत विकासे चित्त, बन्धन पड़े न किसी निमित्त ।

दो० चित्त के बन्धन काट सब, होता योगी मुक्त ।
ऐसा योगी जानिये, सदा योग में युक्त ॥ २०९५

योग में रह जो कर्म कमावे, आसक्ति को न चित्त में लावे ।
सिद्धि असिद्धि में रहत समान, समत्वधी वह योगी जान ।
एक बात मैं और बतावूं, योगी का अभ्यास सुनावूं ।
योगी योग में रहता लीन, स्थान गुप्त में होय आसीन ।
रह अकेला शुद्ध स्थान, वश करता चित्त आत्मवान ।
त्यागत सकल जगत की आस, परिग्रह राखत न कुछ पास ।
प्रभु की प्रीत जिस मांझ अनन्त, सब से जानो श्रेष्ठ वह सन्त ।

प्रभु प्रीति है योग का सार, प्रीति बिना सब यत्न निःसार ।

दो० जिस सज्जन के मन बसे, साधन योग विचार ।
श्रद्धा भक्ति से भजे, जग का सिरजन हार ॥ २०९६क
राम भजो तुम भक्त जन, यह मेरा उपदेश ।
मन अपने में स्मरण कर, बैठो निश्चल लेश ॥ २०९६ख
स्वामी जी ने जब कही, लोगन को यह बात ।
बैठ गये तत्र ध्यान में, विसरा उन निज गात ॥ २०९६ग

विसर गया सब को निज गात, निज निज इष्ट दीखा साक्षात ।
योगीजन जब सन्मुख आये, ध्यान में साधक को बिठलाये ।
प्रकटे इष्ट बिना सन्देह, इष्ट बसे तब उस के देह ।
दिव्य रूप में इष्ट पधारे, साधक के वह कष्ट निवारे ।
इष्ट ही होता प्रभु का रूप, प्रकट भये प्रभु इष्ट स्वरूप ।
जो जो जन जिस इष्ट को ध्यावे, उसी रूप प्रभु सन्मुख आवे ।
ध्यान में इष्ट रहे संग ऐसे, सगा सम्बन्धी जन का जैसे ।
अथवा मित्र घनिष्ट महान, संग रहे या पिता समान ।
मात पिता सम करता प्यार, या उपदेशे धर्म का सार ।
ज्योतिर्मय हों दर्शन ऐसे, प्रकाशे घन में विद्युत जैसे ।
हुताशन का या जो प्रकाश, रवि शशी या जिमि आकाश ।

दो० रवी शशी आकाश में, जिमि करते प्रकाश ।
उदय भये तिमि इष्ट भी, साधक चित्त आकाश ॥ २०९७क
स्वामी जी ने देख कर, जनता प्रेम विभोर ।

एक दौड़ाई दृष्टि, जन गण की तब ओर ॥ २०८९ख

लौटाई निज शक्ति तब, खुले सभी के नयन ।

सन्मुख देखा सद्गुरु, फिर बोले जिस बयन ॥ २०८७ग

"हे भक्तजन तुम्हें बतावें, शास्त्र योग की बात सुनावें ।

जीवन योगी का हो ऐसे, रहत कमल है जल में जैसे ।

जल से कमल रहत निर्लेप, योगी भी जग में निर्लेप ।

योगी होत उदार महान, उसका चित्त सागर सम जान ।

सागर सीमा न जिमि त्यागे, सदा परिपूर्ण निज में पागे ।

योगी को न संग लुभावें, आत्मानन्द में रह वह पावे ।

आत्म जोत में स्थिर हो ऐसे, दीप शिखा अडोल हो जैसे ।

विषयों के न वश में आवे, इन्द्री संयम पाल दिखावे ।

इन्द्रियों को वह इमि समेटे, कछवा जैसे अंग लपेटे ।

दो० आत्म संयम जो करे, आत्म में होय लीन ।

ऐसा योगी जगत में, करत चौरासी क्षीण ॥ २०८८क

सद्गुरु सेवा योगिजन, करत श्रद्धा साथ ।

सद्गुरु कृपा के बिना, योग न लागे हाथ ॥ २०८८ख

गुरु सेवक हो जो जन मीत, गुरु चरणों में रखता प्रीत ।

उस को योग न दुर्लभ भाई, उस की ही हो सफल कमाई ।

गुरु योगी जब नर ले धार, उसी के आश्रित करता कार ।

ईश्वर सम गुरु में विश्वास, स्मरण करे प्रत्येक श्वास ।

गुरु की शक्ति मिले तिस ताहीं, बहे न वह जन भव के माहीं ।

गुरु के बिन जो योग कमावे, उस का परिश्रम निष्फल जावे ।
दुरावे सद्‌गुरु जन के दोष, शुद्ध करे उस के सब कोष* ।
गुरु पारस सम हो के लागे, स्वर्ण करे न क्षण भी लागे ।

दो० शिष जो आवे लोह सम, पारस सद्‌गुरु होय ।
कञ्चन सम उस को करे, कलुष सम्पूर्ण धोय ॥ २०९९

गुरु का शिष्य पर बहु उपकार, जग से उस का करत उद्धार ।
भव वारिध में डूबत प्राणी, पार लगावें सद्‌गुरु ज्ञानी ।
गुरु के चरण हैं नाव समान, खेवट सद्‌गुरु परम सुजान ।
लेते शिष्य की सार संभार, मंझधार से लेत उभार ।
गुरु की दया कथी नहीं जाय, शिष्य में सुन्दर गुण उपजाय ।
मलयगिरि सम सद्‌गुरु भाई, काठ जहां चन्दन हो जाई ।
योगी सद्‌गुरु जब मिल जाय, आपा शिष्य तुरन्त भुलाय ।
माटी जिमि कुम्हार के हाथ, शिष्य रहे तिमि सद्‌गुरु साथ ।

दो० जानो शिष्य ऐसा भला, जैसे माटी मोय ।
आपा सौंपि कुम्हार कूं, जो कुछ होय सो होय ॥ २१००

ज्ञान के दीपक सद्‌गुरु सन्त, सूझ पड़े सब थां भगवन्त ।
गुप्त रहे नहीं कुछ भी भेद, भ्रांत मिटे वा रहे न खेद ।
गुरु का ज्ञान प्रकाश समान, प्रकाशित जिस से सकल जहान ।
सूरज सम गुरु जानो भाई, सकल सृष्टि को वह सुखदाई ।
राजा रंक का भेद न होय, प्रकाश पाय उस से हर कोय ।

*पंचकोष—१. अन्नमयकोष २. मनोमयकोष ३. आनन्दमयकोष ४. प्राणामयकोष ५. विज्ञानमयकोष

योगी सद्गुरु योग सिखावे, भेद भाव न चित्त में लावे ।
गुरु को जानो मेघ समान, सब पर बरसे एक समान ।
नीच ऊंच देखे वह नाहीं, सम दृष्टी उस के मन माहीं ।

दो० सम दृष्टि गुरु जानिये, करत जगत उपकार ।
करुणा उस के मन बसे, सब सन सद्व्यवहार ॥ २१०१

शिष के मल को सद्गुरु हरता, अन्तर के पट निर्मल करता ।
गुरु लोकोत्तर धोबी जानो, करत शरणागत निर्मल मानो ।
कथन करें किमि गुरु उपकार, समरथ सद्गुरु जग भरतार ।
शरण पड़े की राखें लाज, उस के करें सम्पूर्ण काज ।
गुरु भृंगी सम जानो भाई, शिष्य गुरु का रूप हो जाई ।
तन मन धन गुरु को दे पाये, रूप गुरु का वह हो जाये ।
रंग चढ़े उस तन नूरानी, कृपा करें जहं गुरु अतिदानी ।
रंगरेज समान गुरु हों मीत, रंग नूरानी रंगते चीत ।

दो० गुरु मिलें रंगरेज सम, रंगें प्रेम के रंग ।
सुन्दर पट जो श्वेत हो, चढ़े अनोखा रंग ॥ २१०२

कहा मुलख ने संगत ताहीं, सद्गुरु राम कृपालु आहीं ।
उन की शरण जिस किसी ग्राही, रक्षा उस ने उन से पाई ।
ऐसी कुछ हम घटन सुनावें, जिस को सुन सब सुख को पावे ।
दीन दयाल प्रभु की दाया, श्रवण करें छूटे जग माया ।
श्रवण करे जो जन मन ला कर, प्रभु की महिमा माथ झुका कर ।
हृदय में सुन उसे विचारे, श्रवण करे और मन में धारे ।

संशय लाये न मन में लेश, प्रभु को मान समर्थ अखिलेश ।
प्रभु को मानव न कर माने, उन को जगदाधार पहचाने ।

५. पाकिस्तान की स्थापना के समय देश में खुलम खुला नर संहार तथा भक्तों की दिव्य शक्ति द्वारा रक्षा और श्री स्वामी जी का प्रवचन

दो० घटन सुनो ला ध्यान तुम, सार गहो सुन मीत ।
प्रभु राम की दयालुता, स्मरण रहे फिर चीत ॥ २१०३क
एक जिला बिजनौर है, भारत में प्रख्यात ।
नगर है उस में चांद पुर, कहूँ वहां की बात ॥ २१०३ख
इक लाला उस नगर में, हर स्वरूप है खास ।
और भक्त उस नगर के, श्री गुरु वर के दास ॥ २१०३ग

प्रभु भक्त हर स्वरूप था प्यारा, नगर जाने है उस को सारा ।
ऐसा आया काल भयंकर, क्रांति देश में थी अलयकर ।
हिन्दू मुस्लिम करें लड़ाई, हो गये दुश्मन भाई भाई ।
मानव मानवता खो पाई, दया रही न किसी में राई ।
लाज हय्या सब हुई हवा, विषैली चली जब एक हवा ।
शासन का मनु न कहीं नाम, मचा देश में एक कुहराम ।
लूटे जिस को जो कोई चाहे, जिसे चाहे जो मार मुकाये ।
किसी के घर को आग लगाना, और किसी पै छुरा चलाना ।
इन में दोष न जाने कोई, ऐसा काल था आया सोई ।

दो० विकट काल वह देश में, शासन का न नाम ।
वचे वही उस काल में, जिन्हें बचाया राम ॥ २१०४

हमदर्दी का भया सफाया, मनु देश में प्रलय ही आया ।
जनता जनता को ही लूटे, करे उपद्रव लूट खसूटे ।
छोड़ घरों को जनता भागे, प्राण बचाये सब कुछ त्यागे ।
माताओं से बच्चे बिछुड़ें, घात भये उन का जो पिछुड़ें ।
गृह आवास जनता के छूटे, मिले न आगे छप्पर टूटे ।
गगन तले ही भये आवास, भोजन हेत नहीं तिल पास ।
बहु जनों का यही हवाल, किसी की न कोई करे संभाल ।
इत उत पावें शव घनेरे, कोई न उन के लागे नेरे ।

दो० घायल पड़े थे इत उत, और मरे भी लोग ।
भयंकर कैसा काल वह, व्याप रहा जग सोग ॥ २१०५

देश बंटे जिस किस भी हेतु, चढ़ सर नाचे यह राहु केतु ।
कलंक लगा देश पै ऐसा, जग ने कभी न देखा जैसा ।
धर्मी पुरुष ईश को ध्यावें, शंकित मन से यही मनावें ।
संकट पाप से मिले त्राण, देश बचे किस विध भगवान ।
खण्डित होय न देश हमारा, प्राणों से यह हमें प्यारा ।
महापुरुषों के पग की धूल, यहां बिखरी किमि जायें भूल ।
लण्डीकोतल और पेशावर, रावल पिण्डी पुर बहावल ।
सिन्ध प्रांत बलोचिचस्तान, ये तो सिगरे देश की शान ।
बन्नू और कोहाट को जानें, भारत मां के अंग पहचानें ।

ढाका और जो चट्ट्‌ ग्राम, भारत का इन से बहु नाम ।

दो० ये सिगरे तो नगर हैं, भारत मां के अंग ।
परस्पर की पर फूट अब, करे देश को भंग ॥ २१०६

हैदराबाद सक्खर मुलतान, लायलपुर लाहौर महान ।
सुन्दर सभी ये हैं इस्थान, परस्पर फूट ने कीन हैरान ।
सुन्दर सुन्दर नदियां प्यारी, जिन का पावन जल बहु भारी ।
जेहलम और चिनाब पहचान, ब्रह्मपुत्र और रावी मान ।
सिन्ध नदी के कौन समान, सब ही मानें खेद महान ।
खैबर घाटी और पहाड़, देखें चकित वे आंखें फाड़ ।
हिन्दुकुश पर्वत सुलेमान, भये दुःखी सब सच लो मान ।
सभी भये हैं बहु परेशान, परस्पर फूट ने कीन हैरान ।

दो० सिगरे जन अब यह कहें, और कहे सब देश ।
अरे विधाता क्यों भया, ऐसा विकट क्लेश ॥ २१०७

मन में पर यह सब जन जानें, जहां फूट वहां संकट मानें ।
पर न पेश किसी की जाये, तीजा जन आ उन्हें लड़ाये ।
उस को भारत से क्या प्रीत, रिपु की हो रिपु सम ही नीत ।
शत्रु स्वार्थ परक पहचानो, कभी न उसे हितैषी मानो ।
नीति शत्रु वही अपनाई, भारत की जिमि होय बुराई ।
नीति के जो अंग बखाने, साम दान दण्ड भेद जो माने ।
उस ने सब का कीन प्रयोग, भ्रांत भये भारत के लोग ।
चकित होय सब जनता देखे, लड़े, परस्पर दोष उल्लेखे ।

दो० भारत की जनता सकल, करे परस्पर वार ।
हिन्दू मुस्लिम भिड़ पड़े, करते नित प्रहार ॥ २१०८क
चांद पुरी के नगर में, हर स्वरूप के वास ।
मुस्लिम चढ़ कर आ गये, लूटन हेत आवास ॥ २१०८ख

देख के मुस्लिम का यह वार, भयभीत भया तब सब परिवार ।
मुस्लिम कहें "अल्ला-हु-अकबर, लूटो काफ़िर का घर मिल कर ।
देखो न कोई बच के जाये, काफ़िर ढेर यहीं हो पाये" ।
इस विध मुस्लिम कीन चढ़ाई, घटना विकट बहु दुःखदाई ।
लाठी भाले और तलवार, घुमाते आते कर ललकार ।
हर स्वरूप का सब परिवार, निरख सकल यह भीड़ अपार ।
"हे प्रभो तुम ही रखवार", लागा करन बस यही पुकार ।
सुनी प्रभु तत्काल आवाज़, भीड़ पड़ी भक्तन पर आज ।
भीड़ पड़ी भक्तन पर ऐसे, नाश भये मनु सब कुछ जैसे ।

दो० काफ़िर का जिमि घर लुटे, और बचे न कोय ।
मुस्लिम चढ़ कर आ गये, क्षण में क्या कुछ होय ॥ २१०९

भक्तन ने जब प्रभु पुकारे, प्रभु जी ने निज विरद संभारे ।
भयंकर रूप प्रभु जी धारा, मुख से बहती अग्नि धारा ।
जिस जिस ने वह रूप निहारा, कांप उठा उस का तन सारा ।
भगधड़ मची भीड़ में भारी, भागी पीछे को वह सारी ।
क्षत विक्षत बहु जन हो पाये, पांव तले थे कई ही आये ।
तोबा तोबा कर सब भागे, दोहाई गुरु की देवन लागे ।

हर स्वरूप का गुरु महान, लीना सब यह जगती जान ।
मुस्लिम कान लगावें हाथ, तोबा करें वा टेकें माथ ।

दो० तोब तोब करने लगे, देख प्रभु का रूप ।
विकट रूप जिन धार कर, राखा हर स्वरूप ॥ २११०

स्वामी जी जब बात सुनाई, गण्टूर की जनता बहु हर्षाई ।
प्रभु जी का जयकार उच्चारा, सद्गुरु रक्षणहार पुकारा ।
स्वामी जी तब कहा सब ताईं, लीला और सुनो चित्त लाई ।

६. चण्डी प्रसाद की अग्नि से रक्षा
(श्री स्वामी जी का प्रवचन)

चांद पुरी इक लाला जानो, चण्डी प्रसाद नाम पहचानो ।
बसन्ती उस की भगिनी भाई, प्रभु भक्ति जिस के चित्त आई ।
उन का एक सम्बन्धी प्यारा, दैव गति वह स्वर्ग सिधारा ।
गये लोग मिल उसे जलाने, सब अन्तेष्टी कर्म कराने ।
जब ही चिता को आग लगाई, चण्डी प्रसाद निकट था भाई ।

दो० चण्डी प्रसाद निकट था, खड़ा अतीव उदास ।
जान पाया न लेश भी, लपट आई इक पास ॥ २१११क
जिस ने उस को घेर कर, वस्त्र दीन जलाय ।
'प्रभु प्रभु' ही कहने लगा, अग्नी से घबराय ॥ २१११ख
आये प्रभु तत्काल ही, कीनी अग्नि शांत ।
दूर हटाया भक्त को, नर नारी भये भ्रांत ॥ २१११ग

क्षण में ही सब घटना भई, आग लगी और बुझ भी गई ।
वस्त्र जले सभी ने देखे, चण्डी तो 'धन्य प्रभु' उल्लेखे ।
प्रभु को था उस सिमरण कीना, प्राण दान प्रभु उस को दीना ।
उस के वस्त्र तभी उतारे अन्य वस्त्र फिर उस ने धारे ।
बसन्ती देवी घर में ठारी, पास में बैठी थी इक नारी ।
प्रभु की भक्त वह नार सुजान, गुलाब देवी जिस का अभिधान ।
उस के घट में प्रभु तब आये, और उच्चारण इमि कर पाये ।

७. गुलाब देवी के घट में प्रकट हो श्री प्रभु जी के वचन

"सुन बासन्ती तुम्हें सुनाऊँ, मरघट की सब बात बताऊँ ।
बन्धु तेरा जो मर पाया, प्रेत योनि में वह है आया ।

दो० प्रेत योनि में आय कर, कीन उपद्रव घोर ।
फेंकी लपटें आग की, चण्डी की उस ओर ।। २११२क
चण्डी ठाडा शोक में, कीना न उस ध्यान ।
वस्त्र उस के जभी जले, तभी भया कुछ ज्ञान ।। २११२ख

व्याकुल हो उस हमें पुकारा, मैंने आ तब उसे निकारा ।
उस के देह की आग बुझायी, मिल आये तब लोग लुगायी ।
दुर्घटना से सभी हैरान, शुकर मनावें बच गये प्राण ।
चल कर अभी सभी यहां आवें, निज संग चण्डी को वे लावें ।
मेरे तन पर पड़े निशान, फफोले अग्नि ताप के जान" ।
सुन कर प्रभु जी की यह वाणी, कहा बसन्ती "धन्य महादानी ।
तुम ने मेरा भाई बचाया, भूत प्रेत से उसे छुड़ाया ।

किस मुख से हो स्तुति तुम्हारी, मन्द मन्द है बुद्ध हमारी" ।
ऐसा कह उस कीन प्रणाम, बोली "धन्य धन्य प्रभु राम" ।

दो० धन्य धन्य वह बोलती, करती शुकर हजार ।
भाई बचाया नाथ ने, भूत प्रेत के वार ॥ २११३क

इतने में शमशान से, आ गये लोग तमाम ।
सब के मुख पै वचन यह, "जय जय जय प्रभु राम" ॥ २११३ख

वसन्ती ने निज भाई देखा, कुशल क्षेम में उस को पेखा ।
सुख का सांस उसे तब आया, लोगन ने तब उसे बताया ।
जिस विध आग लगी उस देह, आप ही शांत भयी जिमि वेह ।
जले हुए उस वस्त्र देखे, स्वस्थ देह वह भ्राता पेखे ।
धन्य धन्य मुख से कह पायी, जान भाई की प्रभु बचायी ।
सब लोगन को उस बतलाया, समाधि में जो प्रभु फरमाया ।
आग स्वयं थी प्रभु बुझाई, प्रेत ने जो थी स्वयं लगाई ।
गुलाब देवी का तन तब देखा, अग्नि ताप से पीड़ित पेखा ।
जिस तन में प्रभु जी चल आयें, उस पर निज कुछ चिह्न दिखायें ।
अनोखी बात सकल यह जान, लोग अचंभित भये महान ।

दो० लोग अचंभे में खड़े, सुन कर सारी बात ।
'धन्य धन्य' सब जन कहें, "भवतन के प्रभु त्रात" ॥ २११४क

स्वामी जी के वदन से, श्रवण करी जब बात ।
गण्टूर नगर के जन तभी, नमन करें साक्षात ॥ २११४ख

नमन करें भगवान को, स्वयं भक्त के हेत ।
आ पहुँचे तत्काल जो, दुःखी किया जब प्रेत ।। २११४ग

८. बसन्ती देवी के पुत्र की रक्षा, तुलसी के पत्तों पर दिव्य लेख

स्वामी जी ने फिर फरमाया, प्रभु की किरपा को जतलाया ।
बसन्ती संग घटी इक बात, प्रभु किरपा जिस माहीं तात ।
बसन्ती का सुत भया बीमार, औषध आय न कोई भी कार ।
निराश होय वह रोने लागी, "हे प्रभो ! मैं अतीव अभागी ।
मैं अनाथा, नाथ तुम्हीं हो, मैं निमानी, मान तुम्हीं हो ।
मैं दोषी तुम दोष निवारण, मैं पतिता तुम पतित उद्धारण ।
मैं दुखिया तुम दुख विभंजन, मेरे ताप को हरो निरंजन ।
तेरे दर यह पड़ी भिखारिन, घोर रोग के तुम्हीं निवारिन ।

दो० घोर रोग में सुत पड़ा, औषध आये न कार ।
दया दृष्टि तुम ही करो, कर मुझ पर उपकार" ।। २११५क
इस विध करत पुकार वह, गई जो आंगन मांझ ।
पत्तों पर लिपि बद्ध मिले, दिव्य शब्द उस सांझ ।। २११५ख

दिव्य लेख उसने वहां देखे, पत्तों पर जो सभी उल्लेखे ।
"तुम्हारे सुत के प्राण बचावें, रक्षा स्वयं प्रभु कर पावें" ।
शब्द पढ़े तो बंध गई धीर, दृष्टि सन्मुख प्रभु तस्वीर ।
आ कर सुत को हाथ लगाया, उस का रोग घटा ही पाया ।
प्रभु ने कीना उसे नीरोग, प्रभु किरपा से टलते रोग ।

जिस जन ने हो दीन पुकारा, संकट से उसे प्रभु निकारा ।
यह तो प्रभु की बात सनातन, पढ़ देखो इतिहास पुरातन ।
द्रौपदी अथवा गज की बात, गौतम पत्नी वा साक्षात ।
बालीबन्धु था जो सुग्रीव, अथवा दुःखी करे दशग्रीव ।
विभीषण चल शरण में आवे, राज्य पदवी प्रभु से वह पावे ।
अहल्या को जिस ने था तारा, बसन्ती का दुख उसी निवारा ।

दो० बसन्ती का दुःख हर लिया, कीना पूत नीरोग ।
जिन के सर पर राम जी, सुखी भयें वे लोग ॥ २११६

श्रवण किया जब यह इतिहास, बढ़ा सभी के मन विश्वास ।
"जय जय राम लाल" सब बोले, "मुलख राज जय" कह मुख खोले ।
गण्टूरः नगर की जनता भारी, प्रभु की भयी प्रशंसक सारी ।
स्वामी जी का सुन उपदेश, सब के मनहिं हर्ष विशेष ।
स्वामी जी ने पुनः बताया, योग सिद्धि का रहस्य सुनाया ।
योग से न कोई बढ़ कर सिद्धि, मानो योग परम ही ऋद्धि ।
संयमी नर योग को पावे, उत्तम संयम योग कहावे ।
ध्यान समाधि में जो रहता, वह ही संयमी जन कहलाता ।

दो० संयमी नर में बसत हैं, सिद्धि परम अनूप ।
ईश्वर की ही शक्ति वह, जो योगी में गूप ॥ २११७क
उसी शक्ति से करत हैं, सिद्ध पुरुष दिव काज ।
राम लाल भगवान जी, प्रसिद्ध जगत में आज ॥ २११७ख

बसन्ती का जिस पूत जिवाया, अग्नि से जिस चण्डी बचाया ।

गुलाब देवी को योग कराया, दिव्य समाधि जिस बिठलाया ।
अनेकों जिस ने सिद्ध बनाये, राम योगेश्वर वही कहाये ।
हर स्वरूप की रक्षा कीनी, यवनों को भय भीति दीनी ।
हरि हरानन्द जिस ने तारा, राम रत्ती को जिस उबारा ।
फल सेवा का रामा पाय, राम योगेश्वर वही कहाय ।
वन गजों से भक्त बचाये, नागा बुढ़िया दर्शन पाये ।
नर की बलि जो देना चाहें, अपने कर्मों का फल पायें ।

दो० अन्धकार में जन बसें, रहें ज्ञान से दूर ।
पाप कर्म अज्ञान वश, कर फल पायें जरूर ॥ २११८क
फल को पांय जरूर वे, रह चौरासी मांहि ।
चक्र चौरासी तब छुटे, ज्ञान गुरु से पांहि ॥ २११८ख

भक्तों को जो मोक्ष प्रदाता, सिद्धों को भी सुख के दाता ।
राजा रणसिंह जिस ने तारा, तान्त्रिक जग का जो सरदारा ।
गुरु हेत जिस बहु तप कीना, भूख प्यास पर ध्यान न दीना ।
वन में कष्ट बहुत सह पाये, राम योगेश्वर वही कहलाये ।
उच्च हिमालय लायी समाध, सञ्चित कीनी शक्ति अगाध ।
जग हेत जो जग में आये, राम योगेश्वर वही कहलाये ।
सिद्ध पुरुषों के संशय टारे, महा प्रभु के बन कर प्यारे ।
जिनका मान सिद्ध कर पाये, राम योगेश्वर वही कहलाये ।

दो० सिद्धों के जो हैं प्रिय, प्रिय है जिन को योग ।
राम योगेश्वर जगत में, कहते हैं सब लोग ॥ २११९क

हिमालय से जो उतर कर, आय समाहीं गाम ।
बंद गुफा से उड़ गये, वही योगेश्वर राम ॥ २११९ख

भक्त समाहीं अनेक तराये, सूखे खेत में घिये लगाये ।
विषधर सांप उन दूर भगाये, राम योगेश्वर वही कहाये ।
बाबू राम व प्यारे लाल, भक्त अनेकों किये निहाल ।
माला पा कर चन्दन सिंह, और चवन्नी जौहरी सिंह ।
इन दोनों का बदला हाल, राम योगेश्वर परम दयाल ।
बाबू राम को दीन खडांव, महालक्ष्मी के पड़े वहां पांव ।
गुलाब सिंह जो प्रभु का प्यारा, प्रभु से होत न लेश न्यारा ।
कुएं में गंग दर्श दिलाये, राम योगेश्वर वही कहाये ।

दो० राम योगेश्वर महाप्रभु, जग के तारन हार ।
उन को मन में जो भजे, भव से होवे पार ॥ २१२०

ठाकुर दास था संतति हीन, चार पूत प्रभु उस को दीन ।
सूखा धीमर परम सुभागा, प्रभु चले तब चरणी लागा ।
गगन मध्य उस दर्शन पाये, ऐसे उस के भाग्य सुहाये ।
नारी नर सभी जिस तराये, राम योगेश्वर वही कहाये ।
श्याम नारायण जिन अपनाया, ब्राह्मण का जिन पूत बचाया ।
मृत्यु दण्ड से कीना मुक्त, मन राखो उस प्रभु से युक्त ।
आशुतोष व हरिहर राये, दोनों जज जिस ने अपनाये ।
जनता जिस का यश बहु गाये, राम योगेश्वर वही कहाये ।

दो० राम योगेश्वर जान लो, अनन्त कला अवतार ।

अनन्य भाव से जो भजे, बेड़ा उस का पार ॥ २१२१

मेण्डु नाविक जिस ने तारा, हरणाम दास था साध उबारा ।
अवधूता को जिस दे उपदेश, उस के सब हर लीन क्लेश ।
माटी का दे कर प्रसाद, राम गोपाल को दीन समाध ।
नेत्र हीना कन्या तारी, काञ्चन सम थी देह कर डारी ।
जिस का यश सब जग ही गाये, राम योगेश्वर वही कहाये ।
जसपुर में जब प्रभु पधारे, कुम्हार के बालक ने सत्कारे ।
उस को दीना जिस उपदेश, और हरे थे विघ्न अशेष ।
उस प्रभु को लो चित्त धार, भव से चाहो जो होना पार ।

दो० भव की बाधा जीव को, चक्र चौरासी सोय ।
आवागमन का रोग जो, दूर भजन से होय ॥ २१२२

स्वामी जी ने यह समझाया, धर्म का मार्ग सरल बताया ।
आगे कीना तभी बखान, प्रभु शक्ति का जिमि हो ज्ञान ।
गुलाब देवी थी हम बतलायी, समाधी में जो प्रभु लगायी ।
इक दिन गई बागीचे मांझ, समाधी से वह उठ कर सांझ ।
तुलसी दल लेने वह आई, पास तुलसी के जब खड़ पाई ।
वचन तभी सुनने में आये, "योगिराज हैं लेने आये" ।
प्रभु की महान अलौकिक माया, जड़ पादप ने वचन सुनाया ।
गुलाब देवी मन में हर्षाई, सिमर प्रभु तुलसी ले पाई ।

दो० सिमर प्रभु उस ले लिए, तुलसी के कुछ पात ।
नभ से जय जय तब भयी, ध्वनि मधुर साक्षात ॥ २१२३

इस विध दिया वहां उपदेश, स्वामी जी गण्टूर प्रदेश ।
करतल ध्वनि जनता कर पाई, हर्ष प्रफुल्लित नहीं समाई ।
धन्यवाद अधिकारिन कीना, भाग्योदय उन अपना चीना ।
"ईश्वर रूप आये महाराज, कृतार्थ कीनी जनता आज ।
सब जनता की यह अभिलाषा, काल बहु रहें हमरे पासा ।
चल विश्राम करें अब स्वामी, कष्ट सहा बहु अन्तर्यामी ।
तुच्छ प्रेम हमरा बहु माना, स्वीकार किया यहां इन आना" ।
आभार नम्र इस विध प्रकटा, चले नाथ को सभी लिवा ।

दो० बहु जनता तब संग चलि, विश्राम गृह की ओर ।
नाथ पहुँचाये भवन में, परम मनोहर ठोर ।। २१२४

परम मनोहर ठौर पहुँचाये, नाथ ठहर सुख से वहां पाये ।
नित्य प्रति जनता चलि आवे, स्वामी जी से शिक्षा पावे ।
भक्ति वश भगवान प्यारे, दें उपदेश जगत से न्यारे ।
योग धर्म का सार सुनाते, मुक्ति की वे राह बतलाते ।
रोगी जन जब चल कर आते, कर कृपा तब रोग दुराते ।
केवल करते दृष्टी पात, रोगी रोग मुक्त हो जात ।
अथवा देते फूल की पात, नाशे तन मन का उत्पात ।
चमत्कार यह सब ने देखा, जनता तब मन मांझ उलेखा ।

९. नेत्रहीन को दृष्टि दान

दो० जनता के मन मांझ तब, उपजा यह विश्वास ।
ईश्वर धर गुरु रूप हैं, आय हमारे पास ।। २१२५

निज दुख को जन आय सुनावें, सद्गुरु से शुभ शिक्षा पावें ।
सद्गुरु सब की हरते पीर, बंधाते दीन दुःखी को धीर ।
कीर्ति फैल गई चहुँ ओर, अंध पुरुष इक आया भोर ।
निज मुख से उस कीन पुकार, "दीन दयाल मैं हूँ लाचार ।
नेत्रहीन जन बहु दुःख पावे, अंधकार जग माहीं लखावे ।
उस के हेत न कहीं उजाला, गुरु देव ! अब बनो दयाला ।
आप की शक्ति सुनी महान, देते दिव्य दृष्टि का दान ।
बहु जन हैं कृतकृत्य हो पाये, शरणी जो तव चल कर आये ।

दो० शरण में जो जन चल कर, आवें दीन दयाल ।
दिव्य दृष्टि के दान को, पा कर बनें निहाल ।। २१२६क
मैं तो केवल स्थूल ही, दृष्टि चाहूँ नाथ ।
समरथ सद्गुरु आप हैं, करिये मुझे सनाथ ।। २१२६ख

दृष्टि स्थूल का मैं हूँ याचक, भिक्षा दीजो हे जग पालक ।
दर से नहीं भिखारी मोड़ो, मम दृष्टि निज चरणी जोड़ो ।
आप के चरणों का कर दर्श, अलौकिक प्राप्त करे जन हर्ष ।
नेतर याचक के दें खोल, जिमि देखे तव चरण अडोल ।
जिन चरणों से गंग मतारी, निकली है और सृष्टि तारी ।
उनके दर्श का दास प्यासा, ले कर आया है बहु आशा ।
दास की आस न करो निरास, हे स्वामिन मैं दासन दास ।
तेरे दर से जाऊँ न खाली, जगवाली[1] ! मैं अधम सवाली[2] ।

1. जग के स्वामिन् 2. क्षुद्र प्रार्थी

दो० तेरा कुछ न जाये गा, बनेगा मेरा काम ।
ऐसा सौदा कीजिये, तेरा बनूं गुलाम" ॥ २१२७क
इस विध करत पुकार को, श्रवण किया जब नाथ ।
एक पुष्प उस को दिया, वरद उठाय हाथ ॥ २१२७ख
साधारण हि न पुष्प था, सद्‌गुरु का वरदान ।
उस पुष्प को पाय कर, खुले अन्ध के नयन ॥ २१२७ग
देवों ने जय जय किया, अन्धे के मन चाव ।
कहन लगा पुकार कर, अपने मन के भाव ॥ २१२७घ

कहा अन्धे ने सबन सुनाय, "अन्धेपन मैं बहु दुःख पाय ।
अन्धा था मैं जन्म से जाया, रूप किसी का देख न पाया ।
मेरे लिए था जग वैरान, जगत देख अब भया हैरान ।
कैसे सुन्दर हैं सब रूप, रचना सचमुच बड़ी अनूप ।
देव रूप हैं सद्‌गुरु प्यारे, जिन खोले मम नयनन तारे ।
मैं तो इन पर हूं कुरबान, नयनन का जिन दीना दान ।
नयन जायें तो गया जहान, जीवन हो जिस विध बिन प्राण ।
मैं तो हूँ अब जग में आया, नयनों से सब कुछ दिख पायां ।
भया मुझे अब पूर्ण ज्ञान, भाग्यवान जिन के हैं नयन ।
भाग्यवान सनयन प्राणी, किमि कथे यह दुर्बल वाणी ।

दो० गुरु कृपा से हूं भया, भाग्यवान मैं आज ।
अब करूंगा मैं सकल, अपने खुद ही काज ॥ २१२८क
मग टटोलूं नहीं कभी, लठिया ले अब हाथ ।

गुरु कृपा से है लगी, दृष्टि मेरे हाथ ॥ २१२८ख
भाइयो बहनों देख लो, खुल गये मम नयन ।
सब को हूँ मैं देखता, सत्य कहूँ यह बयन ॥ २१२८ग

सत्य वचन मैं कहूँ पुकार, सद्गुरु ने इस नगर पधार ।
दीना मुझ को है जो दान, उसका मैं किमि करूं बखान ।
जीवन भर मैं नहीं भुलाऊँ, सद्गुरु रूप जो दर्शन पाऊँ ।
सदा रहूँ मैं इन का दास, ऐसा बने मेरा विश्वास ।
इन्हीं चरणों की रज पुनीत, धारूं मस्तक नित्य हो रीत ।
इस जीवन गुरु कीनी दाया, जन्मान्तर में पड़े न माया ।
ऐसा रहे मन पर प्रभाव, बिगड़े न कभी चित्त का भाव ।
सदा रहे चित्त चरणी लीन, भाव न मम कभी होंय मलीन ।

दो० मेरे मन के भाव जो, होंय न कभी मलीन ।
नमो नमो गुरुदेव जी, पड़ा चरण में दीन" ॥ २१२९क
इस विध विनय उचार कर, दीना मस्तक टेक ।
सद्गुरु ने दीनी उसे, निज चरणों की टेक ॥ २१२९ख

१०. पंगु को चलने योग्य बनाना

अंधे को प्रभु दृष्टि दीनी, जन गण ने यह सुध पा लीनी ।
कीर्ति सकल देश में व्यापी, महिमा योग की भी बहु थापी ।
"पंचनद से जो योगी आये, उन जन्मांध सनेत्र बनाये" ।
योग का जग में बजा नगारा, मुलख[1] को मुलख[2] का मिला सहारा ।

1. दुनिया 2. स्वामी मुलख राज

जिस दुखिया ने सुन यश पाया, सद्गुरु द्वारे वह चलि आया ।
पंगु नर इक दिन वहां आया, दो पुरुषों ने उसे लिवाया ।
आ कर उसने कीन पुकार, "सद्गुरु स्वामी मैं लाचार ।
मैं तो चलने में असमर्थ, गति दो मुझ को सर्व समर्थ ।
तरे आप से बहुत प्राणी, मैं शरणी तव जग कल्याणी ।
मुझ को भी प्रभु करो नीरोग, श्रवण करू मैं नित्य आ योग ।

दो० नित्य शरण में आय कर, श्रवण करूं उपदेश ।
ऐसी किरपा कीजिये, रहे न लेश क्लेश ॥ २१३०

मेरे जैसा दीन न और, दीना नाथ आया तव ठौर ।
दीन दयाल नहीं तुझ समान, मुझ जैसा भी दीन न आन ।
मेरा तेरा नाता अटूट, रोग मेरा अब जाये छूट ।
जिस ने तेरा लिया सहारा, सहज ही तुम ने उसे उबारा ।
गज ने तुम को जभी पुकारा, ग्राह से मिल गया छुटकारा ।
मैं भी तो अब तुम्हें बुलाऊँ, विलंब क्यों मैं फिर भी पाऊँ ।
द्रौपदी की तुम सुनी पुकार, विलंब क्यों है मेरी बार ।
नेत्र दीने अंध के ताईं, मुझ को भी तुम तारो साईं ।

दो० अंध को नेत्र जिस दिये, खड़ा उसी के द्वार ।
दुःख मेरा भी दूर हो, दास की यह पुकार" ॥ २१३१

इस विध कीन विनय जब पाई, सद्गुरु दया मनहिं तब लाई ।
मस्तक प्रभु चरणों में टेक, माला दीन पुष्पन की एक ।
माला के प्रसाद को पाय, विश्व की दौलत जिमि उठाय ।

लौट गया वह निज आवास, जपत प्रभु को श्वास प्रश्वास ।
अगले दिन खुद चल के आया, उसे देख जन गण विस्माया ।
जो था पंगु परमोहताज, स्वयं था चल कर आया आज ।
इस से बड़ा क्या कौतुक भाई, विस्मित भई सकल जगताई ।
स्वामी जी को कर प्रणाम, उस ने स्तोत्र गाये ललाम ।
फिर जनता को कीन संबोध, पा कर सद्गुरु से कुछ बोध ।

दो० जनता को संबोध कर, अपनी बात सुनाई ।
जिस विध सद्गुरु देव की, उस ने कृपा पाई ॥ २१३२

अपनी सब को बात सुनाता, हर्ष न उस के मनहिं समाता ।
"तुम सज्जन सब मुझ को जानो, पंगु परवश अधम पहचानो ।
सद्गुरु आये यहां मैं जाना, अंधों को जिन दीने नयना ।
मैं भी तब कल चरणों आया, अपना दुःख वृतांत सुनाया ।
दीन दयाल दया मन लाई, दास को माला एक दिलाई ।
चमत्कार उस माला कीना, मेरा कष्ट सभी हर लीना ।
कल तक था जो पर आधीन, सद्गुरु कीना आज अदीन ।
चल कर आज स्वयं हूं आया, आ कर चरणो शीष झुकाया ।
मेरा जीवन भया सुखारी, गुरु जी कीनी किरपा भारी ।

दो० सद्गुरु किरपा पाय कर, सुखी भया हूँ आज ।
निश्चय से ही कष्ट का, नष्ट भया सब साज" ॥ २१३३क
अपनी बात बताय कर, कर के तब प्रणाम ।
भागा भागा वह गया, जय जय करता राम ॥ २१३३ख

११. श्री प्रभु राम लाल जी की दिव्य महिमा का बखान श्री स्वामी जी द्वारा

स्वामी जी ने तब बतलाया, भक्त जनों को कह समझाया ।
'राम लाल प्रभु हैं अखिलेश, उन के चरण की रज पा लेश ।
घोर से घोर भी दुःख हों नाश, शरणागत भक्त न होत हताश ।
अनेकों जन प्रभु जी ने तारे, तन मन के बहु कष्ट निवारे ।
त्रय ताप का करें निवारण, दु:ख दारिद का रहे न कारण ।
धनद रूप वे धन को देते, गणपति सम सब दु:ख हर लेते ।
शंकर सम शांति के दाता, भैषजराज नैरोग्य प्रदाता ।
ब्रह्मारूप वे भाग्य विधाई, विष्णु रूप हो बनें सहायी ।
सर्वरूप प्रभु सर्वसमर्थ, सब भक्तन के साधें अर्थ ।

दो० धर्म अर्थ वा काम भी, और मोक्ष का धाम ।
प्रभु से पावें भक्त जन, सिद्ध सकल हों काम ॥ २१३४

क्षुद्र जन भी शरण में आवे, वही बड़प्पन को पा जावे ।
रोगी रोग मुक्त हो जावे, बन्दी बन्धन से छुट पावे ।
दरिद्र होवे धन का स्वामी, दोष मुक्त हो क्रोधी कामी ।
नेत्र हीन नयनों को पावें, पंगु को प्रभु अंग लगावें ।
विलक्षण शक्ति प्रभु के पास, सुख पाये जिस मन विश्वास ।
भक्त की भक्ति प्रभु बढ़ावें, योग युक्त कर योग सिखावें ।
नास्तिक भी कर ले विश्वास, कृपा करें यदि प्रभु जी खास ।
बिन कृपा नहीं बनती बात, मुक्ति मिले कृपा से तात ।

दो० कृपा जानों तात तुम, सर्व सुखों की मूल।
भ्रांति में क्यों कर रहो, जानों यही असूल ॥ २१३५

किरपा सर्व सुखों को मूल, किरपा से सब निकलें शूल ।
किरपा से हो जन मन शुद्ध, किरपा से अन्तर प्रबुद्ध ।
किरपा से नहीं भीती व्यापे, किरपा से सब नीति जापे ।
किरपा से हो निर्मल ध्यान, किरपा से ही उपजे ज्ञान ।
किरपा से परलोक आनन्द, किरपा से ही मिटते द्वन्द ।
किरपा से रोगों का नाश, किरपा से सब व्याधि विनाश ।
किरपा से दुःख दारिद दूर, किरपा से चहुँ नूरो नूर ।
किरपा से सब हो प्रत्यक्ष, किरपा से जगदीश समक्ष ।

दो० किरपा से सब कुछ मिले, बिन कृपा कुछ नाहीं ।
गुरु किरपा को गहत हैं, निश्चय जिन मन माहीं ॥ २१३६क
गुरु किरपा को पाय कर, अन्धा भया सनैन ।
पंगु को पग मिल गये, दोनों के मन चैन ॥ २१३६ख

श्रद्धा का मग प्रभु बतलाया, श्रद्धा बिन किस सुख को पाया ।
श्रद्धा ज्ञान की जननी जानो, श्रद्धा से नर योगी मानो ।
श्रद्धा से दुःख दोष नशावें, श्रद्धा से प्रभु दर्शन पावें ।
श्रद्धा सर्व विभूति दायी, श्रद्धा बिन कुछ मिले न भाई ।
जिस जिस श्रद्धा कर दिखलाई, उस उस ने गुरु किरपा पाई ।
जो जन श्रद्धा से चलि आता, गुरु किरपा को शीघ्र पाता ।
श्रद्धावान को मिलता ज्ञान, श्रद्धा का फल कथा महान ।

जिस मन श्रद्धा उत्पन्न होय, श्रद्धा का गुण जाने सोय ।

दो० श्रद्धा का गुण वह लखे, जिसे राम से प्रीत ।
राम भजे बिन हेतु ही, गहे भक्ति की रीत ॥ २१३७क
ऐसे जन पै राम जी, तुष्ट रहें सब काल ।
योग क्षेम उस का गहें, दुःख नशें तत्काल" ॥ २१३७ख
सद्‌गुरु इमि उपदेशते, नित्य प्रति उस देश ।
दूर दूर से जन बहुत, चल कर आत हमेश ॥ २१३७ग

१२. बोवली नरेश श्री कृष्ण रंगा जी राय और उसकी रानी सरस्वती का श्री स्वामी जी की शरण में आना

राजा रंक सभी चलि आते, आशिष सद्‌गुरु का आ पाते ।
मन के संशय तन के रोग, आय निवारें बहु वहां लोग ।
नृसिंह मूर्ति प्रभु का प्यारा, तैलुगु तामिल जानन हारा ।
सब जनता को था समझाता, सद्‌गुरु मुख से जो सुन पाता ।
जो जो सज्जन चरणी आये, और जो दीक्षित तब हो पाये ।
सब के नाम न 'सेवक' जाने, भक्त अल्प ही वह पहचाने ।
राजा कृष्ण रंगा जी राय, बोबली का नृप जो कहलाय ।
सरस्वती रानी उस की नार, चल के आये प्रभु दरबार ।

दो० गुरु चरणों में आय कर, लीनी उन पग धूर ।
नाम धाम निज कथन कर, बैठे छोड़ गरूर ॥ २१३८

राजा सब के संग ही बैठे, अपनी परजा के संग पैठे ।

गुरु चरणों में सभी समान, होय न धन पद का अभिमान ।
गुरु के चरण सेवा के मूल, सेवक गर्व को जावे भूल ।
प्रजा संग उन दीक्षा लीनी, गुरु की सेवा उन बहु कीनी ।
सरस्वती रानी नार सुजाना, गुरु सेवा को मुख्य कर माना ।
गुरु को ईश्वर कर पहचाना, निरन्तर रहत वह गुरु के ध्याना ।
गुरु को मानुष लेश न माने, परब्रह्म परमेश्वर जाने ।
ज्योति रूप लख गुरु को पावे, कथनी में वह दशा न आवे ।

दो० कथनी से किमि कथ सकें, गुरु का दिव्य स्वरूप ।
सरस्वती रानी जो लखा, गुरु का रूप अनूप ॥ २१३९

गुरु के रूप अनूप को देख, मन में उस ने कीन उल्लेख ।
गुरु मिले मुझे जगदाधार, इन की सेव से लागूं पार ।
जन्म अनेकों व्यर्थ गंवाये, गुरु सेवा हित नहीं लगाये ।
एक जन्म गुरु सेव में हारूं, जन्म जन्म की विपदा टारूं ।
जन्म जन्म से काल का भय, गुरु कृपा से भये वह क्षय ।
जन्म चौरासी का यह फेर, लीना जिस ने जीव को घेर ।
गुरु किरपा जब होय इक बेर, चौरासी छूटे बिन ही देर ।
ग्रहण करूं अब गुरु की टेक, त्यागूं मन की दुविध अनेक ।

दो० मन की दुविधा त्याग कर, गहूं गुरु के चरण ।
पूरण सद्गुरु हैं मिले, रहूँ इन्हीं की शरण ॥ २१४०क
इस विध मन में धार कर, लीना सेवा नेम ।
आ सके नहीं कथन में, था जो उस मन प्रेम ॥ २१४०ख

तन मन धन उस गुरु को अर्पा, अहं भाव गुरु चरणी समर्पा ।
गुरु का इंगित और आदेश, वही था उस का धर्म विशेष ।
सेवक गणं उस राज्य के सारे, गुरु चरणों के भये वे प्यारे ।
आश्रम बना उन का प्रासाद, सभी जनों में प्रेम अगाध ।
गुरु चरणों में लिव थी लागी, जन गण भये गुरु पग अनुरागी ।
यथा राजा प्रजा हो वैसी, उक्ति सार्थक भयी अनैसी ।
अकिंचन जन भी प्रभु अपनाये, समत्व भाव योग सिखलाये ।
प्रभु की दया अपार लो जान, शरण आये जन पाये ज्ञान ।

दो० प्रभु शरण में आय कर, मिले समत्व योग ।
माया के तब भेद को, भूल जायें सब लोग ॥ २१४१क
राजा के प्रासाद में, लगे सभी का ध्यान ।
दरिद्र और अदरिद्र की, हो न वहां पहचान ॥ २१४१ख

रानी को भी मिलता ज्ञान, चिटम्मा दासी को भी ध्यान ।
स्वामी सेवक भये समान, सद्गुरु मिले उन्हें भगवान ।
सेवा सद्गुरु की मिल करते, भेद भाव न चित्त में धरते ।
सब के मन में एक ही बात, हम सेवक सद्गुरु के तात ।
सेव करें हम चित्त को लाय, स्वामी हर क्षण होंय सहाय ।
अपना लेवें जन्म सुधार, जावें मोह ममता से पार ।
इस तन के सब दु:ख व दोष, और सकल जो जग का रोष ।
मिटें सभी गुरु के प्रताप, जन का वहे सकल संताप ।

दो० सेवा गुरु की हम करें, मिले हैं सद्गुरु पूर्ण ।

लोक वेद सब यह कहें, सच्चित गुरु संपूर्ण ॥ २१४२
यह निश्चय उन का बन पाया, गुरु की सब पर थी सम दाया ।
गुरु सेवा की यही विशेष, अभाव रहे न जन को लेश ।
जन के मन की ज़ो ही आस, कृपा पा नहीं रहे निरास ।
सरस्वती को था इक अभाव, प्रकट करत न निज वह भाव ।
मन में कभी दुःखी हो पाती, और वह मन में शोक मनाती ।
करती प्रभु से मौन अरदास, नाथ जानो मम तुम दुःख खास ।
इतनी संपत राज की भारी, इस का उत्तर न अधिकारी ।
जग में दीखे मुझे अंधेरा, कमल खिले न चित्त का मेरा ।
वंश सरोवर सरसिज हीन, खाली झोली मैं हूँ दीन ।
क्या कहूँ तुम जानन हारे, दुखिया चित्त बस तुम्हें पुकारे ।

दो० दुखिया मन मम नाथ जी, करता यही पुकार ।
स्पष्ट बात मैं क्या कहूँ, मेरा करो उद्धार । २१४३

इस विध थी वह मिनत मनाती, निशदिन सद्‌गुरु को वह ध्याती ।
मुख पै न इक शब्द भी लाती, गुरु भक्ति में ही रंगराती ।
गुरु अन्तर के जानन हारे, अनन्य भक्त सद्‌गुरु को प्यारे ।
गुरु पर राखे जो जन आस, गुरु शक्ति पर कर विश्वास ।
उस की लें गुरु सार संभार, गुरु शक्ति का मिले आधार ।
उस के दुःख का जो भी कारण, उस का सद्‌गुरु करें निवारण ।
दुःख निवारें कार्य सुधारें, जीवन में हों नयी बहारें ।
कौन सके गुरु का गुण गाय, परोक्ष में सद्‌गुरु होंय सहाय ।

दो० सद्‌गुरु होंय सहाय जब, मिटें सकल संताप।
पाप ताप न रह सकें, सद्‌गुरु के प्रताप ॥ २१४४क
सद्‌गुरु के प्रताप से, बनें शिष्य के काम।
शिष्य के मन में आ बसे, राम राम बस राम ॥ २१४४ख
सरस्वती पर जब हो गयी, गुरु कृपा इक बार।
राम नाम उन मन बसा, मिला सुखन का सार ॥ २१४४ग

सद्‌गुरु भये जब उस पर दयाल, सरस्वती घर तब जाया बाल।
राज वंश प्रभु कीन निहाल, बहती नौका लीन संभाल।
बालक जाया गुरु प्रसाद, नाम धराया गुरु प्रसाद।
गुरु किरपा से बालक पाया, भाग्य वंश का उदय हो आया।
गुरु योगी जब नर ले पाय, और सेवा में चित्त लगाय।
सर्मपित तन मन धन कर पाय, गुरु ईश्वर में भेद न लाय।
कौन सा सुख जो वह न पाय, रुष्ट विधाता तुष्ट हो जाय।
ग्रह की चाल भी हो अनुकूल, रह पाय नहीं कुछ प्रतिकूल।

दो० सद्‌गुरु जब अनुकूल हों, सब कुछ हो अनुकूल।
गुरु किरपा को पाय कर, कंटक भी हों फूल ॥ २१४५

कंटक फूल हैं होते देखे, भाग्य बदलते सेवक पेखे।
पर्वत[1] की जो करते राई, शूली शूल जिन कर दिखलाई।
रे मन उसी राम को भज ले, भाग्योदय तू भी निज कर ले।
रामरत्ती का दोष निवारा, हरिहरानन्द सिद्ध कर डारा।

1. अर्थात् पर्वत समान बड़े दुःख को जो राई के समान लघु करने में समर्थ हैं। और शूली अर्थात् मृत्यु को शूल अर्थात् कांटा चुभने की पीड़ा दे कर समाप्त करने में सामर्थ्यवान है।

मुलख राज निज रूप बनाया, सेवक पापी चरणि लगाया ।
पत्तों पर जिन लिख दिखलाया, बसन्ती को विश्वास दिलाया ।
हरस्वरूप जिन लीन बचाय, यवन जभी थे घिर कर आय ।
गुलाब देवी व मूंगा बाई, दिव्य समाधी जिन से पाई ।
रे मन उसी प्रभु को भज ले, भाग्योदय तू भी निज कर ले ।
लेवो अपना भाग्य सुधार, और करो भवसागर पार ।

दो० राम प्रभु का भजन कर, भव से लागो पार ।
शरण जो आवे राम की, उस का हो निस्तार ॥ २१४६

हे मन राम की चरणी लाग, प्रभु चरणों से कर अनुराग ।
दृढ़ अनुराग न जब तक होवे, मोह ममता में तब तक सोवे ।
मोह जाल ले दृढ़तम जान, छूटन इस से सरल न मान ।
इस से छूटे वही जन धीर, और न व्यापे भव की पीर ।
जिस का प्रभु से निछल प्यार, जग जीवन के जो आधार ।
प्रीत प्रभु से ला इक बार, मिटे सकल तब भ्रांत अपार ।
प्रभु की ख्याति जग विस्तारी, मुलख राज ने थी प्रचारी ।
उत्तर दक्षिण सब प्रदेश, प्रचारा धर्म 'मुलख मुलखेश* ।
उत्तर दक्षिण सबन स्थान, प्रचारा मुलख ने धर्म महान ।

दो० मुलख राज ने धर्म का, कीना बहु प्रचार ।
योग धर्म का जगत में, भया पुनः विस्तार ॥ २१४७

* जग के स्वामी

१३. श्री स्वामी जी का मद्रास से लौट कर हरिद्वार आना और भक्तों को उपदेश में अपने अनुभव बतलाने

दक्षिण दिक में कर प्रचार, स्वामी लौटे हरि के द्वार ।
हरिद्वार जब स्वामी आये, भक्तों के चित्त बहु हर्षाये ।
उत्तरायण जिमि भानु होवे, जीव जन्तु के दुःख विगोवे ।
तिमि स्वामी का उत्तर आना, भक्तों ने सुखमय बहु माना ।
निरखें सद्गुरु का मुख ऐसे, चकवा देखे चांद को जैसे ।
निरख निरख नहीं नयन अघाते, सब जन भक्ति के रंग राते ।
पूछें सब जन सद्गुरु ताहीं, यात्रा सुखद रही कि नाहीं ।
सब जन सुख हैं आप से पाते, सुख तो आप के पाछे धाते ।
फिर भी चित्त चंचल न माने, श्रवण किए बिन नहीं पतियाने ।

दो० कर किरपा सब कुछ कहें, यात्रा का प्रभु हाल ।
चित्त हमारे बसत है, नाथ यही इक सवाल ॥ २१४८

सुन कर उनकी यह जिज्ञास, स्वामी जी कही बात यह खास ।
"भक्त जनो तुम लो यह जान, दीन दयाल न राम समान ।
निमानों के वे ही इक मान, कृपा के वही परम निधान ।
उन की टेक को ले कर जीव, लांघ जाये आकाश की सींव ।
उस मग आवे विघ्न न लेश, दया सिन्धु की दया विशेष ।
इसी बात में लो तुम जान, मम यात्रा का मर्म महान ।
प्रभु सेवक का सब जां मान, देश विदेश में लो तुम जान ।
जो भी ले प्रभु पग चित्त धार, शक्ति उस को मिले अपार ।

दो० प्रभु की शक्ति जब रहे, अंग संग लो जान ।
जन की चितवन में बसे, एक आकर्ष महान ॥ २१४९क
दक्षिण में हम चल दिये, पा कर प्रभु संकेत ।
एकत्र जंह असंख्य जन, दर्शन के सब हेत ॥ २१४९ख

उनकी भाषा न हम जानें, हम बोलें वे न पहचानें ।
सिमरा तब हम प्रभु इक बार, देखा जनता को इक सार ।
लागा अनेकों का तब ध्यान, योग युक्त भये बहुत पुमान ।
सब की दशा न वर्णी जाये, भावावेश में वे जन आये ।
देह की सुधि को वे विसराय, निज निज इष्ट में सुरत जमाय ।
उच्छलें कूदें गावें गान, भक्ति का रंग चढ़ा महान ।
योग युक्त भये उनके प्राण, श्वास चलें जिमि हफे महान ।
उनके श्वास इमि चल पावें, सांप जिमि फुंकार लगावें ।
मांडूकी मुद्रा देह उठावे, भूमि ऊपर गिर फिर जावे ।
सब ने देहाध्यास भुलाया, प्रभु कृपा की अद्भुत माया ।

दो० प्रभु कृपा जब हो गई, जनता पर उस काल ।
समय विलक्षण बंध गया, जन गण भये निहाल ॥ २१५०

जनता भई प्रभु अनुयायी, राजा रंक व लोक लुकाई ।
प्रभु कृपा न कथन में आवे, जो कथे सो कथ नहीं पावे ।
सब जनता ने लीना जान, जग में उतरे हैं भगवान ।
रोग पीड़ित भी जन बहु आये, प्रभु जी रोग मुक्त कर पाये ।
लंगड़े लूले पंगू प्राणी, स्वस्थ किये प्रभु जी महादानी ।

एक बार जो चल कर आया, प्रभु कृपा से उस सुख पाया ।
तन मन से जन भया सुखारी, प्रभु कृपा का बन अधिकारी ।
शापित भी यदि चल कर आया, प्रभु शक्ति से शाप नशाया ।

दो० प्रभु की शक्ति देख कर, जन गण में विश्वास ।
राजा रय्या सब भये, परम प्रभु के दास ॥ २१५१

कहा मुलख तुम सब लो जान, कोई नहीं है राम समान ।
राम लाल कलियुग में आये, शरण पड़ों के दोष दुराये ।
जिस ने राम के चरण ग्राहे, मन वांछित सुख उस ने पाये ।
लोक और परलोक के सारे, सुख पाये उस राम से न्यारे ।
विधाता भी जिस को हो वाम, सुखी भये वह भज कर राम ।
उसी राम के हम अनुयायी, धन्य भये हम सब विध भाई ।
दुख दारिद हैं राम निवारे, सुखी भये हैं जन दुःखयारे ।
राम लाल की शक्ति न्यारी, राम भजा जिस भया सुखारी ।

दो० राम लाल के भजन से, योगी बने सुजान ।
योग युक्त जन होय कर, पावे पद निर्वाण" ॥ २१५२क
इतनी बात सुनाय कर, मुलख राज भये मौन ।
धन्य धन्य सब जन कहें, राम लाल सुख भौन ॥ २१५२ख

रामलाल के गुण जन गाते, मुलख राज के यश को गाते ।
चरणों में उन शीश झुकाये, विदा सभी जन तब हो पाये ।
मुलख राज भये ध्यानामग्ना, नित्य कर्म में भी वे लग्ना ।
मुलख राज का निशदिन काम, उपदेश करें व सिमरें राम ।

राम सिमर उन पाया राम, मुलख राज भये सुख के धाम ।
जो भी चल उन चरणी आया, सुख अलौकिक उस जन पाया ।
जन गण को थी भयी प्रतीती, सुख मिलता है इस ही रीती ।
जन दुःखी थे चल कर आते, नित्य निरन्तर सुख को पाते ।

दो० नित्य प्रति जन सुखन को, पाते उस थल जाय ।
मुलख राज जंह बसत थे, राम चरण चित्त लाय ॥ २१५३

१४. योग के साधनों द्वारा रोगों का उपचार

एक दिवस कुछ जन चलि आये, मन में निज जिज्ञासा लाये ।
मुलख राज को कर प्रणाम, प्रश्न कीन उन "हे सुखधाम ।
आज सकल जग है दुखयारा, रोगों का घर घर प्रसारा ।
रोगों से जन बहु दुःख पावें, अनेक उपाय कार्य में लावें ।
मन्तर औषध का उपचार, जिन का जग में बहु प्रचार ।
आज भये हैं वे निःसार, रोग सकें वे नहीं निवार ।
जनता में है बढ़ी निराशा, टूट गई है सुख की आशा ।
औषध करे न रोग निवार, उलटा इस से होत पसार ।

दो० ज्यों ज्यों औषध जन गहें, बढ़त रोग की बेल ।
खेती जिस विध खाद से, अजब चलत है खेल ॥ २१५४

औषध रोग को नहीं दुरावें, उल्टी इस में वृद्धि लावें ।
ज्यों ज्यों जग में बढ़त दवायें, रोगों में हम वृद्धि पायें ।
जनता में आतंक है छाया, रोग के भय ने सबन दबाया ।
ऐसा कोई बतायें उपाय, स्वस्थ रहे जग जन समुदाय ।

आप योगी सब जानन हारे, सकल जीव हैं तुम को प्यारे ।
जग पर आप करो अब दाया, रोग नाश का कहें उपाया ।
भूत रोग का सबन डरावे, जन जीवन न सुख को पावे ।
आज एक कल दूजा रोग, दुःखी रोग से सब हैं लोग ।
दुःख का कारण रोग महान, दूर भये जिमि दो यह ज्ञान ।

दो० वही ज्ञान अब दीजिये, जिस पर चल कर लोग ।
पाप ताप से मुक्त हों, और न व्यापें रोग" ॥ २१५५क
ऐसी विनय उचार कर, नत माथ भये लोग ।
श्रवण करें वे नाथ से, जिस विध नाशें रोग ॥ २१५५ख
मुलख राज ने श्रवण कर, कहा सबन के ताहीं ।
"सज्जन वृन्द यह ठीक है, रोग बहु जग माहीं ॥ २१५५ग

रोगों का घर घर प्रसार, रोग सबन को करें खवार ।
रोग पिशाच ने सभी दबाये, ऊँच नीच का भेद न लाये ।
राजा रंक हैं भये समान, पीड़ित रोग से सभी जहान ।
मैं बतलावूं अब वह बात, जो प्राचीन नई नहीं तात ।
गुरु मुख से जो मिला है ज्ञान, वही बखानूं तुम्हें सुजान ।
चण्डकपाली मुनि इक बार, आया घेरण्ड के वह द्वार ।
प्रेम सहित ऋषि ने बिठलाया, चण्डकपाली तब कथ पाया ।
हे प्रभो हम को बतलायें, घट को स्वस्थ किमि रख पायें ।
घट छीजे घट छीजन हार, कहें प्रभो इस का प्रतिकार ।
चण्ड कपाली की सुन वाणी, बोला घेरण्ड योगी ज्ञानी ।

दो० जो कथा मुनिवर्य तुम, अनुभव का यह सार ।
प्राणी का घट जगत में, पल पल छीजन हार ॥ २१५६क
काचा घट न टिक सके, रहे पका बहु काल ।
योग को अग्नि जानियें, देह दृढ़े तत्काल ॥ २१५६ख

योग साधन जो नर कर पावे, देह को दीर्घ काल ठहरावे ।
रोग न आवें उसके पास, दूर रहें सब रोग जो खास ।
घेरण्ड ने तब सब बतलाये, चण्डकपाली को समझाये ।
योग के साधन रोग निवारक, मानव तन के जो हितकारक ।
हे भक्तो मैं तुम्हें बताऊं, जो पूछा है वह समझाऊं ।
भिन्न भिन्न रोग किमि हों दूर, श्रवण करो यह बात जरूर ।
बिन औषध के रोग नशावें, वे साधन तुम को बतलावें ।
जो घेरण्ड ने थे बतलाये, चण्डकपाली को समझाये ।
वे ही साधन लो तुम जान, और आश्रम में सीखो आन ।

दो० योग के साधन सीख लो, व्याधी का हो नाश ।
बिन औषध उपचार के, स्वास्थ्य की पूजे आश ॥ २१५७क
स्वास्थ्य की पूजे आश जब, सुख का हो संचार ।
स्वास्थ्य बिना नहीं जगत में, जीने का कुछ सार" ॥ २१५७ख

स्वामी जी का सुन उपदेश, भक्तन चित्त उत्साह विशेष ।
कहन लगे "हे योग के नाथ, आज भये हम परम सनाथ ।
करके श्रवण ओज़स्व वाणी, रहा न मन में भ्रम महादानी ।
आप करें अब वही बखान, साधन सबन का दीजो ज्ञान" ।

इतना कथ उन कीन प्रणाम, सद्गुरु पग उन छुए ललामे ।
स्वामी जी तब कथन में लाये, क्रम से वर्णे सभी उपाय ।

१. शिर के रोग

शिर के रोग प्रथम लो जान, आंख, कान व नाक सुजान ।
अनेकों विध ये कष्ट हैं पाते, रोग अनेकों इन्हें सताते ।

दो० करत अनेकों रोग हैं, पीड़ित सर के अंग ।
केवल नेति साध कर, होय रोग का भंग ॥ २१५८

सर पीड़ा हो या ज़ुकाम, कान बहे दक्षिण वा वाम ।
दृष्टि का कोई रोग हो भाई, ऐनक यदि हो किसी लगाई ।
दुखने को यदि आंख हो आई, सूज चुकी हो या कुम्हलाई ।
मसूड़ों के जो रोग अनेक, नेति परम साधन है एक ।
जैसे गुरु का हो आदेश, पालन करे जन वही निशेष ।
नेति के जो भेद अनेक, गुरु बतावे देख के एक ।
श्रद्धा से जो जन कर पावे, उस का रोग नष्ट हो जावे ।
बिन औषध ही सब कुछ होय, गुरु बिन भेद न जाने कोय ।

२. श्वास के रोग

दो० गुरु बिन योग न कीजिये, गुरु ही जाने भेद ।
देखा देखी जो करे, हाथ लगे उस खेद ॥ २१५९

आगे श्रवण करो मम मीत, चित्त में धार योग से प्रीत ।
श्वास विकार फुप्फुस के रोग, प्राणायामी बने नीरोग ।
प्राणायाम अति गुणकारी, श्वास की हरता सकल बीमारी ।

दमा व तपदिक कुछ भी होय, प्राणायाम हरे वह सोय ।
छाती के विकार अनेक, प्राणायाम से रहे न एक ।
खून का शोधन भी हो पावे, स्फूर्ति देह में प्राण लयावे ।
पास गुरु के रहे जो प्राणी, अभ्यास करे तो होय न हानि ।
रोगों से वह मुक्ति पावे, बनता स्वस्थ सुखी हो जावे ।

दो० छाती के जो रोग हैं, प्राण साध हों दूर ।
योगी जाने भेद यह, होवे लाभ ज़रूर ॥ २१६०

सुन कर सद्गुरु की यह वाणी, सोचन लागे सकल प्राणी ।
हम तो रहे अंधेरे मांही, योग से हम न लाभ उठांही ।
रोगों से हैं दुःख बहु पाते, योगी की न शरण में जाते ।
लाखों जन तपदिक के रोगी, जीवन से निराश वा सोगी ।
प्राणायाम का हो यदि ज्ञान, रोग करे न फिर परेशान ।
जग से क्षय का होय विनाश, जीवन की भये विकसित आश ।
औषध का जो खर्चा भारा, धन लगे शुभ काज वह सारा ।
योग से इस विध लाभ अनेक, सुखी भये यहां जन प्रत्येक ।

३. उदर के रोग

दो० सुखी भयें सब जन यहां, शिक्षा योग की पाय ।
रोग मुक्त जनता भये, गांठ से धन न जाय ॥ २१६१

सद्गुरु से तब कीन अर्दास, "साधन और कहें कुछ खास ।
श्रद्धा से हम सब सुन पावें, उपदेशामृत जो आप सुनावें" ।
स्वामी जी मुख से फर्माया, भक्तन को उपदेश सुनाया ।

रोग उदर के जौन हैं भाई, धौति कर्म उन में सुखदायी ।
द्वादश† धौति के हैं भेद, सीख उन्हें जन पायें न खेद ।
कण्ठ, आमाशय, अन्न की नाल, आन्तें, जिगर तिली तत्काल ।
धौति कर्म से रहें निरोग, रोग मुक्त हों इन से लोग ।
पक्वाशय पित्ताशय जानो, क्लोमनली और गुर्दा मानो ।
मूत्राशय व मलाशय दोय, धौति कर्म से निर्मल होय ।
रोग बहुत जो उदर अधीन, धौति कर्म से क्षीण हों दीन ।

दो० पेट रोग का मूल है, ऐसा कहते लोग ।
धौति कर्म को सीख कर, सब जन रहें निरोग ॥ २१६२

रोग अनेकों हैं जग माहीं, साधन भी असीम गोसाईं ।
योगी गुरु से पावें पार, स्वस्थ होंय सुख पायें अपार ।
स्वास्थ्य बिना न सुख जग माहीं, धन संपत न सुख दे पाईं ।
स्वास्थ्य ही जग में सुख का मूल, योग कथे यह महान असूल ।
योग से नाशें देह के रोग, निर्मल करता मन को योग ।
आत्मोद्धार योग से होय, लाये न संशय चित्त में कोय ।
स्वामी जी का सुन उपदेश, कथन किया इक जन उस देश ।
"गुरुदेव तुम योग के स्वामी, सिद्धेश्वर प्रसिद्ध हो नामी ।
ज्ञान आप से जो यह पाया, हर लीनी उस ने है माया ।

† धौति के द्वादश (१२) भेद :
१. वातसार २. वारिसार ३. वह्निसार ४. बहिष्कृत ५. दन्तमूल ६. जिह्वामूल
७. कर्णरंध्र ८. कपालरन्ध्र ९. दण्ड धौति १०. वस्त्र धौति ११. वमन धौति
१२. मूल शोधन

देह सुखी तो सुखी जहान, योग बिना नहीं दुःख का हान ।
दो० सुख कर यह उपदेश जो, दीना है इस काल ।
ज्ञान मिला इस से हमें, सुन कर दीन दयाल ॥ २१६३
एक बात प्रभु और बतावें, रोगों का कुछ ज्ञान करावें ।
किस विध उपजे कौन सा रोग, और हरे उसे जौन सा योग ।
उस जन की यह सुन जिज्ञास, कहा नाथ ने प्रश्न यह खास ।
इस का ज्ञान न जग को लेश, इस कारण बहु व्यापे क्लेश ।
रोग के कारण कथन में लाऊं, और उन का उपचार बताऊं ।
इस विध मिले जगत को ज्ञान, होय योग से रोग का हान ।

४. सिर दर्द

सर के रोग प्रथम कथ पाऊँ, कारण सहित उपचार बताऊँ ।
सर की पीड़ा को लो जान, दुःखी करे यह सकल जहान ।
दुर्बल सर दुखने को आता, अथवा शीत का वेग सताता ।
गर्मी से भी होत यह रोग, अथवा कफ से पीड़ित लोग ।
बात वेग से सर चकरावे, प्राणी जिस से दुःख बहु पावे ।
योगी इस का करे निदान, साधन से फिर हो दुःख हान ।
दो० कफ पित्त और बात का, होता जब प्रकोप ।
अथवा दुर्बल देह भी, पीड़ करे सुख लोप ॥ २१६४क
पीड़ करे सुख लोप सब, सुध बुध सकल नसांय ।
नेती किरया जन करे, जिस विध हम कथ पांय ॥ २१६४ख
दुर्बलता में जन करे, दुग्ध नेति लो जान ।

सर की पीड़ा दूर हो, तत्क्षण लो यह मान ॥ २१६४ग
गर्मी से सर पीड़ हो, पित्त बढ़ा लो मान ।
शीतल जल तब नाक से, तुरन्त करे जन पान ॥ २१६४घ
वायु का प्रकोप होय, होय चित्त परशान ।
नासिक से तब जन करे, ऊष्ण जल का पान ॥ २१६४ङ
कफ बढ़ा हो देह में, बलगम और जुकाम ।
सूतर नेति तब करो, बने उसी से काम ॥ २१६४च
दण्ड धौति भी जन करे, सर पीड़ जब होय ।
अथवा गुरु की सीख ले, जानन हार है सोय ॥ २१६४छ

५. मन्द दृष्टि

आंखों के अब रोग जो, उन का करूँ बखान ।
आंख आई हो दुःखन को, अथवा दृष्टि मांद ॥ २१६४ज

मन्द दृष्टि को नेति साधे, सूत्र नेति नित्य आराधे ।
नाक से करे दूध का पान, दृष्टि का नहीं हो तब हान ।
तीव्र दृष्टि इसी विध होय, नेत्र रोग न व्यापे कोय ।

६. कान की पीड़ा

कान बहें या हों दुखयारे, सूतर नेति रोग निवारे ।
नेति से होय मल का नाश, रोगों का जो कारण खास ।
मल से उपजें रोग अनेक, निवारे सब को नेति एक ।

७. गले की सूजन

गले में सूजन जब हो भाई, परहेज़ करो न खाओ खटाई ।

वमन करो नेति भी साथ, लागे स्वास्थ्य शीघ्र ही हाथ ।
सूजन कारण ज्वर हो जाए, ये ही साधन होंय सहाय ।
दो० वमन व नेति कीजिये, होय गले जब दोष ।
ज्वर भी चाहे संग हो, निरोग भये घट कोष ॥ २१६५

८. ज्वर

सुन कर स्वामी जी की बात, चकित भये वे जन साक्षात ।
कैसी काम की बात बताई, सकल जगत को यह सुखदाई ।
जिस व्याधी का कौन बखान, उस से पीड़ित सकल जहान ।
'फ्लू' कहते सब उस को जानो, उस से कौन बचा है मानो ।
जिस घर में आ पैर टिकाये, सब परिवार रोगी बन पाये ।
सुन कर उस का अब उपचार, हम सब के यह आवे कार ।
सुखी बने इस से परिवार, आप का स्वामी बहु उपकार ।
आगे और बतावें बात, योग की मूर्त हे साक्षात ।
दो० वमन करें हम नेति संग, फ्लू का जो उपचार ।
और कहें अब नाथ जी, हम पर कर उपकार ॥ २१६६

९. आमाशय, जिगर, तिली के रोग

स्वामी जी ने तब बतलाया, कर किरपा उन को समझाया ।
आमाशय के बहुत से रोग, नशें जन के जब कर ले योग ।
साधन मुख्य वमन ही जानो, करत आमाशय शुद्ध वह मानो ।
शुद्धि से सब रोग नशावें, अशुद्धि से बहु विध बढ़ पावें ।
मेदे को कर के इमि शुद्ध, रोग मुक्त रहे जन प्रबुद्ध ।

जिगर तिली भी यदि बढ़ पावे, वमन क्रिया उपयोग में लावे ।
खाटे मीठे आयें डकार, छाती में या जलन अपार ।
वमन क्रिया बहु गुण हो कारी, शीघ्र ही वह हरत बीमारी ।
खांस खांस जन होय बेहाल, चैन मिले न किसी भी काल ।
वमन करे जन नित्य प्रात, चैन मिले तब दिन वा रात ।
इस विध रोग अनेक में भाई, एक वमन ही बने सहाई ।

दो० अनुभव की यह बात है, संशय है न लेश ।
नित्य करे जो नर वमन, पावे लाभ विशेष ॥ २१६७

१०. दमा

अब कुछ और रोग कह पाऊँ, उन के मैं उपचार बताऊँ ।
श्वास रोग जब जनहिं सतावे, क्षण भी एक न चैन वह पावे ।
औषध तब कोई काम न आवे, कहें दमा दम साथ ही जावे ।
जीना जन का होवे दूभर, सुख मिले न एक भी पल भर ।
हाय मरा ही बस कह पावे, यम भी उस की न सुन पावे ।
ऐसा कष्ट जब होय अपारा, योग का ही बस तभी सहारा ।
पास गुरु के वह चलि जावे, वस्त्र धौति वहां कर पावे ।
सीखे वहां वह प्राणायाम, श्वास रोग से मिले आराम ।

दो० वस्त्र धौति तब जन करे, श्वास रोग जो होय ।
संयम राखे साथ ही, खान पान में सोय ॥ २१६८

११. क्षयरोग–तपेदिक

एक रोग का और बताऊँ, परम भयंकर जो कथ पाऊँ ।

इस रोग में ग्रस्त जो होय, उस के संग लगे नहीं कोय ।
क्षीण होय उस की सब काया, रोग क्षय इस विध कहलाया ।
धीरे धीरे देह क्षय होय, यम का ग्रास बने फिर सोय ।
क्षय रोगी के हेत बताऊँ, दूध की नेति सुखकर पाऊँ ।
नाक से पान करे जन दुग्ध, लौट जाये तब यम जो लुब्ध ।
काय न क्षीण उस की फिर होय, स्वस्थ बने तब नर वह सोय ।
लाभ उठावे कर उपचार, ले जो शिक्षा गुरु की धार ।

दो० गुरु से शिक्षा ग्रहण कर, करे जो योगाभ्यास ।
रोग मुक्त जन वह भये, यह मेरा विश्वास ॥ २१६९

स्वामी जी ने जब कथ पाया, क्षय रोग का उपचार बताया ।
जनता भयी बहुत हैरान, क्षय से तो भयभीत जहान ।
कहन लगे सब "हे प्रिय नाथ, आज लगा बहु ज्ञान है हाथ ।
रोग असाध्य जिन को जग माने, आप ने वे ही साध्य बखाने ।
उनका सरल उपचार बताया, योगी गुरु की परम है दाया" ।
कहा नाथ जी सुन लो भाई, बात सत्य है तुम कथ पाई ।
योग असाध्य कुछ भी न माने, योग की शक्ति योगी जाने ।
जग तो केवल नाम ही जाने, योग को कर के न पहचाने ।
अभ्यास करे सो योगी होय, शक्ति योग की वह ही गोय ।
विन अभ्यास बने नहीं बात, लाख करे कोई इच्छा तात ।

दो० जन अभ्यासी जो भये, होय रोग से मुक्त ।
योग दुरावे रोग को, सत्य कथी यह उक्त ॥ २१७०

१२. उदर वृद्धि

कुछ उपचार मैं और बताऊँ, रोग साधारण ही कथ पाऊं ।
उदर बढ़े जब जन का भाई, जिस से बोझल तन हो जाई ।
यौवन तत्व करें जब प्रात, शीघ्र उदर घटत साक्षात ।
वायु का यदि होय प्रकोप, सर्वांगासन जन लेवे रोप ।
पेट का शूल तुरत ही जावे, जब सर्वांग को जन कर पावे ।

१३. कब्ज

बद्ध कोष्ठ जिसका हो भाई, वारिसार क्रिया सुखदाई ।
आंतों में यदि हो कृमि दोष, वारिसार कर हो निर्दोष ।
कृमियों का होय नाश संपूर्ण, रोगी रोग मुक्त हो पूर्ण ।

१४. पेट के कीड़े

दो० जिस विध के भी हों कृमि, उदर किसी के माँहि ।
वारिसार करे जन सोय, नष्ट कृमि हो जाँहि ।। २१७।

१५. दस्त

अतिसार का करूं बखान, दस्त लगे हों यदि महान ।
कौन उपाय करे वह सोई, श्रवण करो जिस विध सुख होई ।
खान पान पर संयम राखे, बिन खिचड़ी न कुछ भी चाखे ।
सो भी अतीव मृदु हो जोई, मात्रा अल्प में ही हो सोई ।
सर्वांगासन का ही अभ्यास, बार बार कर रख विश्वास ।
जन निरोगी होय वह ऐसे, रोग लगा ही था न जैसे ।
एक रोग तुम और भी जानो, नाफ टली हो जब पहचानो ।

१६. नाभि का टलना या धरण पड़ना*

डाक्टर वैद्य के पास न जाना, उस की करें न वे पहचाना ।
आसन कर सर्वांग ही भाई, नाफ ठिकाने शीघ्र आई ।

दो० गति नाफ की ठीक हो, कुछ ही क्षण में मीत ।
सर्वांग आसन जन करे, गुरु चरणी ला चीत ॥ २१७२क

१७. बवासीर या गुदावर्त

बवासीर के रोग का, सुन लो अब उपचार ।
मिर्च खटाई छोड़ कर, साधन से हो प्यार ॥ २१७२ख
साधन से ही प्यार हो, मत प्रमादी होय ।
चिह्न रोग के दूर जब, तब भी करता जोय ॥ २१७२ग
रोग उसी का दूर हो, नहीं तो वृद्धि गोय ।
रोग सर्पवत जानिये, छिप कर रहता सोय ॥ २१७२घ
साधन से वह डरत हैं, लठिया से जिमि सांप ।
नाम योग का श्रवण कर, रोग जायेगा कांप ॥ २१७२ङ

सांप व रोग में भेद न कोई, यह धरती वह घट में होई ।
लठिया से इक का हो घात, योग से रोग मरे साक्षात ।
बवासीर के हेत पहचानो, अश्वनी मुद्रा को बहु मानो ।
संग में मूल शोधन भी होय, ये साधन कर लाभ को गोय ।
वारिसार भी है उपयोगी, कब्ज से पीड़ित यदि हो रोगी ।
तीनों साधन हैं गुणकारी, रहे करता जन आयु सारी ।

* नाफ टलना—धरण पड़ना

दुःखी करे नहीं फिर यह रोग, सुखी भये जन कर के योग ।
बवासीर का यह उपचार, गुरु से सीखें नर और नार ।

दो० गुरु से यह सब सीख कर, रोग से हो जन मुक्त ।
रोग न पीड़ित कर सके, योग में हो जो युक्त ॥ २१७३क
योग में होवे युक्त जो, जाने सकल उपाय ।
ऐसा योगी जानिये, रोग मुक्त रह पाय ॥ २१७३ख

१८. रक्तदोष, त्वचा के रोग, कैंसर

एक बात मैं और बताऊं, रक्त की शुद्धि की कथ पाऊं ।
दूषित रुधिर होय जिस जन का, पीड़ित रोग करे तन उस का ।
विविध विधि का ज्वर जो होय, अथवा रोग त्वचा के जोय ।
अलसर, कैंसर भयंकर रोग, मधुमेह जिस से पीड़ित लोग ।
रोग अनेक और जो भाई, पहचाने जिन को न जगताई ।
दूषित रक्त से उपजें सारे, इक ही साधन इन्हें निवारे ।
वारिसार वह साधन जानो, कायाकल्प उसी से मानो ।
गुरु से सीख करे नर नार, देह के दुख से पावे पार ।
योग की जानो यह प्रभुताई, रोग के जड़ की करे खुदाई ।
इक साधन बहु रोग मुकावे, जिमि हुताशन सबन जलावे ।

दो० योग की यह विशेषता, रोग का समझे सार ।
इक साधन बहु रोग में, पूर्ण आवे कार ॥ २१७४

१६. देह की स्थूलता वा कृषता

हे सज्जन अब लो तुम जान, विकृत देह की होय पहचान ।

अतीव कृष व अतीव स्थूल, ऐसा स्वास्थ्य के है प्रतिकूल ।
समदेह ही तुम उत्तम मानो, दीर्घायु वह दायक जानो ।
समदेही जन रहत निरोग, प्रसन्न चित्त वह करता योग ।
सम देह जन का किस विध होय, कौन योग जो कर सुख गोय ।
अब तुम को वह बात बताऊँ, साधन गुप्त जो हैं समझाऊँ ।
वे साधन हैं प्रभु जी लाये, प्रथम बार इस जग में आये ।
असंख्य जनों का हो उपकार, निरोग भयें नर हो वा नार ।

दो० नर नारी जो भी भये, कर यह योग अनूप ।
प्रभु कृपा को पाय कर, धारे सुन्दर रूप ॥ २१७५

जीवनतत उस योग का नाम, जगती जीवन पाये तमाम ।
युवा वृद्ध व बाल भी होय, नर नारी सब कर सुख गोय ।
वे सब साधन आश्रम आन, लेवे जन उन की विधि जान ।
नित्य करे उन का अभ्यास, जैसे पावे गुरु का शास ।
अब सुनो तुम यह चित्त लाय, कृषता में जन क्या कर पाय ।
हो पावे कृष तन किमि स्थूल, जठराग्नि है देह की मूल ।
मन्दाग्नि जो तन हो जावे, भोजन पूरा न पच पावे ।
रक्त मांस न मेद उपजावे, देह घटे और कृषता आवे ।
मन्दाग्नि जब होय प्रदीप्त, भोजन आहुत से होय दीप्त ।
वह तन कृष न रहने पाये, शीघ्र मांसल तभी हो जाये ।

दो० ऐसी विध जो सीख ले, भोजन पचे तुरन्त ।
तन की कृषता दूर हो, दुर्बलता का अन्त ॥ २१७६क

दुर्बलता का अन्त हो, कर के साधन योग ।
जीवनतत के कारणे, कृष तन भये निरोग ॥ २१७६ख

जीवनतत जन नित्य करे, पौष्टिक करे आहार ।
खाया भोजन जब पचे, देह हो स्थूलाकार ॥ २१७६ग

युक्ति युक्त सुन कर गुरु वाणी, इक जन बोला "हे महादानी ।
आप हमें यह भी बतलायें, पौष्टिक आहार किसे कथ पायें ।
जग में तो है बहुत भांती, कथन करें जन भांती भांती ।
मद्य मांस को बहु जन ग्राहें, पौष्टिक उस को वे कथ पायें ।
कुछ जन फल को ही बहु मानें, फलाहार में बहु रुचि आनें ।
कई जन औषध को ही सेवें, 'टानिक' कथ उस में रुचि लेवें ।
आप कथें निज निश्चय खास, हम धारें उस में विश्वास ।
जीवनतत कर के भगवान, सब से उत्तम खान क्या पान

दो० किस विध का आहार जन, कर के होय स्वस्थ ।
दुर्बलता का नाश हो, रोग में हो न ग्रस्त" ॥ २१७७

सुन कर उस जन की यह वाणी, बोले स्वामी जी महादानी ।
भक्त जनो मम यह विश्वास, सात्विक अन्न ही भोजन खास ।
स्थिर शक्ति को वही जन धारे, सात्विक भोजन जो स्वीकारे ।
राजस तामस से हो हानि, लोलुपता से अन्त ग्लानि ।
जीवनतत को कर नर नार, दूध दही का ले आधार ।
माखन आदिक पौष्टिक भोग, कच्ची सब्जी को भी लोग ।
खाते हैं और भूख बढ़ाते, देह की पुष्टि को तब पाते ।

इस विध जीवनतत्व महान, कर के जन बहु हो बलवान ।

दो० सात्विक पौष्टिक अन्न को, जो सेवे नर नार ।
जीवनतत को साध कर, गज सम ले बल धार ॥ २१७८क
गज सम ले बल धार वह, योग का ले आधार ।
दुर्बलता सब देह की, निकल जाय इक बार ॥ २१७८ख
अब सुनो चित्त लाय कर, मेद किमि घट पाय ।
स्थूल अति जो देह हो, उस में कौन उपाय ॥ २१७८ग

देह हो यदि स्थूल महान, संयमित भोजन करे सुजान ।
रसना की न बात ले मान, करे अल्प ही खान व पान ।
जीवनतत्व करे जब सोई, मेद घटे तन भी कृष होई ।
इस विध स्वामी जी बतलाया, जीवनतत का गुण जतलाया ।
किस विध कृष तन होये स्थूल, स्थूल भये कृष जिस असूल ।
सब के चित्त तब आई बात, सिद्ध योगी ये हैं साक्षात ।
साधन सिद्ध किये इन सारे, जग में रह कर जग से न्यारे ।
इक सज्जन तब यह कह पाया, योगिराज तव अद्‌भुत माया ।
साधन एक प्रभाव अनेक, आप से ज्ञान मिला यह एक ।
योग विलक्षण विद्या साईं, विद्या और न इस के न्याईं ।

२० हृदय के रोग

एक बात अब यह बतलावें, रोग हृदय के किस विध जावें ।

दो० हृदय का जो रोग है, उस का बहु प्रकोप ।
हृदय की गति फेल हो, प्राणों का हो लोप ॥ २१७९

इस का कारण क्या भगवान, हृदय रोग का दीजो ज्ञान ।
कईयों को दिल पीड़ सतावे, कईयों का दिल बुझ बुझ जावे ।
कुछ की तो गति रुक ही जावे, प्राण पखेरू भी उड़ पावे ।
इसका मिले न लेश संकेत, नाथ होवे यह सब किस हेत" ।
सुन कर उस की स्वामी बात, कहन लगे "सुन मम तुम तात ।
हृदय रोग के कारण अनेक, तुम लेवो वे जान प्रत्येक ।
द्विविध व्याध यह साध्यासाध्य, बखान करें बस केवल साध्य ।
साध्य रोग से पीड़ित प्राणी, साधन से हो रोग की हानी ।

दो० साधन से इस रोग का, होवे शीघ्र नाश ।
जीव करे अभ्यास जब, हो जीवन की आश ।। २१८०

प्रथम कारण इस का लो जान, अतीव शोक व हर्ष पहचान ।
राजस गुण जिस मनहिं प्रधान, रोग करे उस को परेशान ।
शोक के वेग को न सह पावे, हर्ष में भी वह अति फुल जावे ।
ऐसे जन की औषध ज्ञान, सद्गुरु शरण में पावे आन ।
समत्व योग वह गुरु से पावे, चित्त उस का फिर न विकलावे ।
इक कारण है और भी भाई, हृदय रोग का जो दुखदाई ।
वातोदर जब कोप में आवे, दिल की गति में बाधा पावे ।
श्वास रुके वा चित्त घबरावे, धक धक दिल संग में कर पावे ।

दो० वायु का जब कोप हो, हृदय भये सदोष ।
वायु दोष यदि दूर हो, भये हृदय निर्दोष ।। २१८१

वायु अतीव प्रबल बलकारी, इस का वेग भयंकर भारी ।

जिस विध रुके न यह तन माहीं, ऐसा योग करो तुम साईं ।
वायु का स्वभाव यह जानो, ऊर्ध्व गति ही इस की मानो ।
ऊर्ध्व वेग जब इस का होय, हृदय की गति रोके सोय ।
कुयोग भयंकर सम्मुख आवे, औषध से न जन सुख पावे ।
इस का सरल उपाय भाई, मुद्रा विपरीत करी सुखदाई ।
इस की शिक्षा सब कोई लेय, संकट में बस यह सुख देय ।
जब कोई हो न संग सहायी, प्राण बचावे यह ही भाई ।
विपरीतकरी से निकले वात, प्राण बचें हो नहीं उत्पात ।

दो० यह क्रिया जब जन करे, नशे वात का वेग ।
हृदय पर का बोझ जोय, हल्का भये सवेग ॥ २१८२क
हृदय के उद्वेग का, कारण यह भी जान ।
खून घटे जब देह में, लागत निकलन प्राण ॥ २१८२ख

खून घटे तो देह हो क्षीण, नस नाड़ी सब हों बल हीन ।
हृदय भी होय शिथिल महान, जिस के आश्रित टिक रहे प्राण ।
ऐसे रोग का सुन उपचार, योग साधन बहु आवे कार ।
नेति दुग्ध इस में गुणकारी, शक्ति देत जो देह को भारी ।
दुग्ध नेति से शक्ति आवे, हृदय को यह बल दे पावे ।
नस नाड़ी सब होंय सशक्त, देह में पावे वृद्धि रक्त ।
इस विध दिल का दोष हो दूर, शक्ति देह में बढ़े ज़रूर ।
हृदय की गति उल्टे नाहीं, नेति दुग्ध जो नित कर पाहीं ।

दो० दुग्ध नेति को जानिये, पुष्ट करे यह देह ।

जिस को दिल का रोग हो, सुख इसी से लेय ॥ २१८३
रोग का कारण यह भी जानो, शक्ति से बढ़ परिश्रम मानो ।
निज शक्ति का कर उल्लंघन, कार्य करे निशिदिन जो बहुघन ।
उसके दिल में आये विकार, कार्य करे जन को बेकार ।
इस का भी लो सुन उपचार, रोगी करे सुपाच्य आहार ।
शवासन की सीख के रीत, करे उसे जन नित सप्रीत ।
दुग्ध नेति भी हो सुखदायी, स्वस्थ बने जन शीघ्र भाई ।
घृत नेति भी होय सुखकारी, सशक्त बने जिस से नस नारी ।
बने फिर से जन का दिल स्वस्थ, योगी जन नहीं रहे अस्वस्थ ।

दो० योगी जन को जानिये, स्वस्थ रहे सब काल ।
शिव शंकर को जान लो, वश में जिन के काल ॥ २१८४क
वश में जिन के काल है, ऐसे वे भगवान ।
महा प्रभु के रूप में, रहते जो हिमवान ॥ २१८४ख
राम प्रभु जिन संग रहें, शिष्य रूप को धार ।
वर्ष जहां पर बीतते, समाधि में सब काल ॥ २१८४ग
भक्त जनों उस देव का, नित्य करे जो ध्यान ।
दिव्य धारा मन में बहे, बसे चित्त में ज्ञान ॥ २१८४घ

२१. पक्षाघात, अधरंग, झोला रोग

अब हम तुम को यह कथ पावें, एक भयंकर रोग बतावें ।
इस से जन हो परमोहताज, हाथ हिले न हो कुछ काज ।
पांव चलें न ठाडन पावे, गिर गिर लोथ ही जन की जावे ।

मुख में सके न भोजन पाय, मुख में धरा मुश्किल से खाय ।
मुख से तुतली बातें निकलें, मरण चाहे पर प्राण न निकलें ।
मल मूत्र का नहीं आभास, नरक से बढ़ कर दुःख यह खास ।
पर अधीन जीवन दुखदाई, कर्म की गति किस देखन पाई ।
वृद्धावस्था जब चलि आये, जन को इस की शंक सताये ।

दो० इस आशंका में रहें, वृद्ध पुरुष व नार ।
अंग चलें व नहीं चलें, किस क्षण होंय लाचार ॥ २१८५क
वृद्धावस्था जब भये, हो न सकत उपचार ।
योग करे जो प्रथम ही, वार्धक करत न वार ॥ २१८५ख
जरता से यदि भय लगे, व्याधी की जो मूल ।
जब तक देह में सबलता, योग करन मत भूल ॥ २१८५ग

योग करे जो नित्य प्रात, अजर होय उस नर का गात ।
पक्षाघात वा झोला रोग, रक्षा इस से करत है योग ।
जिस पै रोग का हो प्रहार, गुरु बतलावे तब उपचार ।
साधन बहुत हैं योग अधीन, गुरु बतलावे रोगी चीन ।
नेति आसन जो उपचार, गुरु करवावे किरपा धार ।
साधन करे जभी गुरु अधीन, बनत योग से देह नवीन ।
जन प्रमादी योग न साध, संचित करता अनेक व्याध ।
बनता देह तब रोग भण्डार, नित्य करे वह रोग प्रसार ।
भण्डारी बन वह रोग को बांटे, इस विध पाप की खाटी खाटे ।

दो० जन प्रमादी जब भये, करत न गुरु से योग ।

रोग ग्रस्त वह होय कर, जग विस्तारे रोग ॥ २१८६
स्वामी जी कहा भक्तन ताहीं, योग धर्म उत्तम जग माहीं ।
योग धर्म जो देत भुलाय, जग में सुख वह किस विध पाय ।
तन से रोगी मन से सोगी, जन्म बितावे बन वह भोगी ।
आयु भर जो योग कमाये, जीवन में सुख अक्षय पाये ।
परमारथ को जग में साध, ध्यान समाधि ईश आराध ।
आत्मा का वह करत उद्धार, भव सागर से होता पार ।
गुरु योगी से योग कमाना, जिस ने इस को धर्म है माना ।
उस ने ही सन्मार्ग पाया, सफल उसी की है नरकाया ।

दो० नरकाया दुर्लभ बड़ी, श्वास व्यर्थ न जाय ।
गुरु योगी को खोजना, उत्तम यही उपाय ॥ २१८७
गुरु योगी जिस को मिल पाया, उस ने सुख का मग अपनाया ।
गुरु कृपा से साधन पाये, जिस से रोग निकट न आये ।

२२. जोड़ों की दर्दें

एक रोग मैं अब कथ पाऊँ, दुःखी करे तन को बतलाऊँ ।
तन के अंग भयें दुखयारे, जोड़ जोड़ में पीड़ चिंगारे ।
पीड़ा से जन हो लाचार, औषध कोई न आवे कार ।
उठना बैठना हो दुश्वार, निज तन जन को लागे भार ।
शयन करे तो भी दुःख पावे, करवट भी न बदली जावे ।
उस रोगी का हो उपचार, योग करे यदि धैर्य को धार ।
जीवन तत्व करे जन सोय, वमन क्रिया भी सुखकर होय ।

वारिसार भी बहु गुण कारी, गुरु से क्रिया सीखे सारी ।

दो० गुरु शिक्षा पा जन करे, क्रिया ये जब मीत ।
अंग अंग की पीड़ सब, निकल जाय इस रीत ॥ २१८८क
बहु रोगों की मैं कथी, शिक्षा मेरे मीत ।
और यदि कुछ पूछना, पूछ लेवो सप्रीत" ॥ २१८८ख

सुन कर स्वामी जी की वाणी, सज्जन इक कहे "महादानी ।
विद्या दान आप बहु दीना, श्रवण किया हम ज्ञान को लीना ।
बिन औषध जन बनें निरोग, ऐसा अद्भुत आप का योग ।
ऐसा योग करें जब लोग, जग से दूर हटे तब रोग ।
आज जगत है बहु दुःखयारा, घर घर रोगन कीन पसारा ।
यम ने रोग का जाल बिछाया, औषध का है चारा पाया ।
ज्यों ज्यों औषध देह में जाय, पाश रोग का दृढ़ हो पाय ।
आप ने ऐसी रीत बतायी, यम पाश जिमि शिथिल हो जायी ।

दो० आप हितैषी जगत के, दीन दुखिन के मीत ।
रोग रहित जिमि जन रहें, वही बताते रीत ॥ २१८९

२३. रक्त चाप (Blood Pressure)

आप सर्वज्ञ सर्व हित कारी, योग से हरते सकल बिमारी ।
एक रोग का मैं कथ पाऊँ, जिस से पीड़ित बहु जन पाऊँ ।
रक्त चाप का रोग पहचानें, घटे बढ़े इस में उलझानें ।
कारण इस का न कोई जानें, शीर्ष भाग में दुःख बहु मानें ।
इस का नाथ क्या हो उपचार, इस ने जग को कीन लाचार ।

आयु भर का होय यह रोग, करते कथन चिकित्सक लोग ।
आप ही अब बतलावें नाथ, किस विध दूर भये इक साथ ।
करिये जग पै यह उपकार, स्वामी कथ इस का उपचार ।

दो० सरल चिकित्सा जो मिले, इस रोग की नाथ ।
दुःख जगत का बहु कटे, जन गण भये सनाथ" ॥ २१९०

सुन कर उसकी ऐसी वाणी, स्वामी बोले जग कल्याणी ।
"सज्जन गण मैं तुम्हें बताऊँ, साध्य सकल मैं योग से पाऊँ ।
जिस को जाने जग बहु रोग, पल में उस को हरता योग ।
ऋषि मुनियों की विद्या योग, हरत विश्व के सब यह रोग ।
रक्त चाप का रोग बखाना, असाध्य जिसे हैं जग ने माना ।
दुःखी करे जिस को यह रोग, दुग्ध नेति से भये निरोग ।
चिह्न सकल जो रोग के होंय, नसें सभी सुख को जन गोंय ।
योग चिकित्सा उत्तम जानो, इस सम और न इक भी मानो ।

दो० कथन किया मैंने सभी, सूक्ष्म में ही मीत ।
स्वास्थ्य जगत को चाहिए, न शब्द जाल से प्रीत ॥ २१९१क
चाहो अब जिस रोग का, जानन तुम उपचार ।
कथन करो वा पूछ लो, विद्या योग अपार ॥ २१९१ख

राम बाण सम योग को जानो, स्वस्थ रहे देह इस से मानो ।
औषध की जहां पहुँच न भाई, योग वहां भी हो सुखदायी ।
योग निवारे सकल व्याध योग से जन को सुख अगाध ।

सब नाड़िन का कर के शोध, छूत[1] रोग का कर अवरोध ।
दुष्ट कृमिन[2] का कर के नाश, तीन दोष[3] उत्पात विनाश ।
कर के दुर्बलता[4] को दूर, दुष्ट दृष्टि[5] को कर के चूर ।
मारण मन्तर[6] को यह मार, तन्त्र शक्ति[7] का कर संहार ।
भूत प्रेत[8] को दूर भगाय, कुग्रह दोष[9] को दूर हटाय ।
करता योग साधक का हित, गुरु पग स्मरण करे जो चित ।

दो० गुरु पग चित्त में धार कर, योग को ले जो साध ।
सब विध के जो रोग हैं, करें न जन को बाध" ।। २१६२

स्वामी जी का सुन उपदेश, चित्त में भ्रांत रही न लेश ।
कहन लगे वे सज्जन सारे, "नाथ निवारे भरम हमारे ।
हमें मिला है अद्भुत ज्ञान, योग चिकित्सा लीनी जान ।
सर्व रोगों का योग निदान, आप ने कथन किया भगवान ।
बहुत रोग हैं आप बखाने, साधन हम ने उन के जाने ।
हमारे मन में अब जिज्ञास, ज्ञान पावें कुछ और भी खास ।
नाथ जगत में रोग अनेक, पूछ सकें न हम प्रत्येक ।
कुछ रोग जो चित्त में आवें, उन का ज्ञान आप से पावें ।

दो० अनेक रोग हैं जगत में, रहें सशंकित लोग ।
साधन सुखकर योग के, हरते तन का सोग ।। २१६३

1. छूत से लगने वाला रोग 2. रोग के कीटाणु 3. वात, पित, कफ 4. नाड़ियों की दुर्वलता से होने वाले रोग 5. नजर लगना 6. काला जादू 7. तान्त्रिक विद्या 8. प्रेतों की पकड़ से होने वाले रोग 9. दुष्ट ग्रहों के कारण उत्पन्न कष्ट ।

२४. पीलिया या पांडु रोग

प्रथम हमें यह आप बतावें, पांडु रोग विषय समझावें ।
इस रोग का कहें उपचार, योग सकत इसे किमि निवार ।
पीलापन जब देह में व्यापे, रुधिर का नाम कहीं न जापे ।
ओठों पर हो लेश न लाली, नेत्र दीखें खून से खाली ।
चेहरे पर पीलापन छाया, ऐसे रोग का कहें उपाया ।
उन की श्रवण करी जब वाणी, बोले स्वामी जी महादानी ।
पांडुरोग जो है विख्याता, पित्त का दोष इसे उपजाता ।
वमन क्रिया जब नित कर पावे, रोगी रोग मुक्त हो जावे ।

दो० नित्य करे जो वमन को, संग सुपाच्य आहार ।
रोग मुक्त वह जन भये, लो मन निश्चय धार ।। २१९४

श्रवण किया जब यह उपचार, गुरुमुख से जो ज्ञान भण्डार ।
भया मन में सन्तोष विशेष, उपजा न चित्त संशय लेश ।
साधन योग हरे जब रोग, औषध कड़वी क्यों लें लोग ।
योगी सद्गुरु योग हैं लाये, बहुत हैं जिस में सरल उपाय ।
जिस को गुरु पर हो विश्वास, वही सीखे यह विद्या खास ।

२५. खांसी का रोग

इक सज्जन तब बोला "नाथ, हमें बताइये इस के साथ ।
कास रोग से पीड़ित जोय, साधन कौन करे नर सोय ।
श्वांस खांस जन होय बेहाल, खांसी उपजे काल बेकाल ।
खांस खांस नर चैन न पावे, खांसी का क्रम बढ़ता जावे ।

ऐसी विधि कुछ आप बतावें, मुक्ति जन इस रोग से पावें ।

दो० ऐसी शिक्षा दीजिये, दुःखी करे न कास ।
यौगिक साधन कौन वह, फूले न जिमि श्वास" ॥ २१९५

कहें नाथ हे सज्जन प्यारे, साधन योग के गुण बहु भारे ।
कास रोग का साधन न्यारा, धौति कर्म कास हत्यारा ।
वस्त्र धौति को कर ले जोय, कास से मुक्ति पावे सोय ।
खांसी यदि साधारण भाई, वमन क्रिया ही हो सुखदाई ।
मिर्च खटाई न जब खावे, साधन से बहु लाभ उठावे ।

२६. उलटियां, कय-छर्दि रोग

सुन कर खांसी का उपचार, इक सज्जन ने कर नमस्कार ।
कहा प्रभो अब हमें बतावें, कय के रोग को किमि नशावें ।
छर्दि रोग भी जो कहलावे, भोजन निकले उलटी आवे ।
जब ही जन भोजन को खाये, दिल मचले और उलटी आये ।
इस रोग का कहें उपचार, उलटी आये न जिस प्रकार ।

दो० खाया भोजन पच सके, दिल मचलावे नाहीं ।
ऐसा योग बताइये, सुखी भये जन साईं ॥ २१९६

सुन कर जन की यह जिज्ञास, स्वामी दीना ज्ञान यह खास ।
उस का जानो पेट मलान, पचे न जिस में खान व पान ।
इस का जानो सरल उपाय, वमन करे जन जब उठ पाय ।
पेट का शोधन जो हो जाय, खाया भोजन सब पच पाय ।
यह तो अनुभव गम्य है बात, इस में लेश न संशय तात ।
एक बात पर मैं बतलाऊँ, अशुद्धि आंतों में यदि पाऊँ ।

वारिसार क्रिया गुणकारी, हर लेती जो सकल बीमारी ।
कथ का कारण होवे दूर, खाया भोजन पचे ज़रूर ।
दो० रोग का कारण जान कर, साधन करे सुजान ।
रोग मुक्त जन तुरत हो, प्रत्यक्ष को क्या प्रमाण ॥ २१९७
स्वामी जी से सुन यह ज्ञान, जाना योग महा विज्ञान ।
स्वस्थ रखे जो जन को भारी, और हरे जो सकल बिमारी ।
ऐसा रोग न जग में कोई, दूर होय न योग से जोई ।
ऐसा निश्चय सब मन माहिं, कीना प्रश्न पुनः "हे साईं ।
ज्ञान पीपूष हम कीना पान, कर किरपा तुम दीना दान ।

२७. पेट दर्द या शूल और सर में दर्द

और रोग अब कहें गोसाईं, शूल उठे जब पेट के माहीं ।
कौन सा योग करे तत्काल, आप बतावें दीन दयाल ।
अथवा सर की पीड़ सतावे, हें नाथ, वह किस विध जावे ।
दो० शूल उठे जो पेट में, अथवा सर में पीड़ ।
कौन उपाय जन करे, पड़े जो ऐसी भीड़" ॥ २१९८
सुन कर उनकी यह जिज्ञास, उत्तर दीना सद्गुरु खास ।
उदर शूल सर्वांग दुरावे, नेति से सर पीड़ भी जावे ।
सर्वांग करे जो सांझ प्रात, सुख की नींद सोए सब रात ।
पीड़ा उदर न करे हताश, ऐसा गुण इस योग का खास ।
सिर की पीड़ नेति से जाये, कौन नेति यह गुरु बताये ।
सूत्र, पानी, दूध वा घृत की, सीख मिले सब गुरु से इस की ।

प्रकृति का गुरु होत ज्ञाता, वह बतावे रहस्य की बाता ।
सीखे योग जो सद्गुरु पास, रोग न आवे उस के पास ।
देखा देखी करता योग, काया छीजे बढ़ते रोग ।

दो० गुरु से सीखे योग जो, काया भये निरोग ।
रोग शोक से मुक्त हो, सके भोग सब भोग ॥ २१९९

सुन कर प्रभु की स्पष्ट यह बात, कहा एक ने "हे जग त्रात ।
आप की बात सबल बहु भारी, सकल संदेह निवारण हारी ।

२८. प्रमेह, मधुमेह आदि मूत्ररोग

आप हमें अब यह बतलावें, प्रमेह रोग हित योग सिखावें ।
शक्ति नाशक मधु का मेह, अथवा विविध विधी प्रमेह ।
इन से मुक्ति किमि जन पावें, ऐसा नाथ जो योग सिखावें" ।
कहा स्वामी तुम सच कह पाते, जन इस रोग से दुःख बहु पाते ।
शक्ति का यह करत ह्रास, रोगी का चित्त रहे उदास ।
औषध आये न जन के कार, सके न उस का रोग निवार ।
भाग्य भला जो जीव का होय, पावे योगी गुरु को सोय ।
वारिसार जो योग करावे, नशे रोग चित्त शांति आवे ।

दो० मधुमेह प्रमेह हित, गुरु करावे योग ।
किरया वारिसार से, स्वस्थ भये बहु लोग ॥ २२००

सुन कर सद्गुरु की यह वाणी, सभी जनों ने बहु सन्मानी ।

२९. अपस्मार या मिरगी

बोला जन इक "सद्गुरु दयाल, मेरे मन इक और सवाल ।

मिरगी रोग वा अपस्मार, क्या इस का भी है उपचार ।
भयंकर रोग इसे सब जानें, इस को तो असाध्य ही मानें ।
संज्ञा हीन जन इसमें होवे, देह गेह की सुध सब खोवे ।
देखे न यह ठांव कुठांव, लगता इस का हर थां दांव ।
हे स्वामी कर दया अपार, इस रोग का कहें उपचार ।
औषध आये न इसमें कार, रोगी दुःख से भये लाचार ।

दो० मिरगी का अब नाथ जी, कथन करें उपचार ।
दीन जनों पर कर दया, करें प्रभो उपकार ॥ २२०१क
राम लाल के शिष्य परम, आप जगत विख्यात ।
लाखों पीड़ित जनन के, स्वस्थ किये तुम गात" ॥ २२०१ख

कहा मुलख ने भक्त प्यारे, अनाथ नाथ के खेल न्यारे ।
राम लाल भगवान महान, योग का जग को दीना दान ।
तन मन सुखी भयें जिस हेत, आत्म तुष्टि पायें जिस हेत ।
ऐसा केवल योग का ज्ञान, जिस का दीना प्रभु जी दान ।
वही योग सब हरे बीमारी, अपस्मार या मिरगी भारी ।
जिस विध जन का दूर हो रोग, कथूं मैं तुम से वह ही योग ।
श्रवण करो तुम ला कर ध्यान, स्मरण रहे जिस से सब ज्ञान ।
मिरगी का जो रोग कहावे, मन के दोष से भी उपजावे ।
मानसिक तार हिले विपरीत, सुधी को भूले जन इस रीत ।

दो० कथन में आवे न सकल, मन की जो गति होय ।
रोगी सुध को भूल कर, ज्ञान बाह्य सब खोय ॥ २२०२

मन की गति कथी नहीं जाये, मन में अनेक संकल्प समाये ।
गुप्त रहें वे जन से ऐसे, सांप छिपे हों बिल में जैसे ।
छिप छिप कर वे करें प्रहार, करते जीव को दुःखी अपार ।
जीव की बुद्ध को डालें मार, भव में करें वे जीव ख़्वार ।
सदा रहे यह जीव भ्रांत, जागत सोवत परम अशांत ।
वडवानल सम उन का ताप, कौन सके सह वह संताप ।
अथवा वे भूगर्भ की आग, भस्म भये जाय जिस को लाग ।
तब तक ही जन का कल्याण, शांत रहे यह अग्न महान ।

दो० मन का ऐसा एक कण, उमड़ ग्रसे जब बुध ।
जीव बेसुधी में पड़े, भूल जाये निज सुध ॥ २२०३क
मन में छिपे अनेक जो, जन्म जन्म के कर्म ।
सद्गुरु योगी के बिना, कोई न जाने मर्म ॥ २२०३ख

सद्गुरु की जो शरण ग्राहवे, नाम मिले जो जप सो पावे ।
मन के भाव रहें तब शांत, मन्त्र जपे सो होय न भ्रांत ।
मन्त्र से चित्त वश में आवे, मन्त्र से यह रोग नशावे ।
मन्त्र जपे जन दिन वा रात, मन्त्र जपे जन सायं प्रात ।
मन्त्र जपे जन हर क्षण मीत, मन्त्र में होय मन की प्रीत ।
मन्त्र से होय मन्त्रित चित्त, मन्त्र जपे जन रोग निमित्त ।
मन्त्र में अति शक्ति जानो, शांत भये मन इस से मानो ।
जपे निरन्तर प्रभु का नाम, जो संवारे बिगड़े काम ।

दो० प्रभु का नाम जहाज है, जो जपे दिन रात ।

रोग समुद्र पार कर, स्वस्थ करे निज गात ॥ २२०४क
दैहिक साधन भी करे, मिरगी से जो ग्रस्त ।
घृत नेति को साध ले, रोग राहु हो अस्त ॥ २२०४ख

घृत नेती को वह जन साधे, नित्य करे जिमि देव आराधे ।
गुरु योगी पर रख विश्वास, जीवन से न होये हताश ।
चित्त में वास करे जब योग, समूल नशे तब मिरगी रोग ।
शांत रहे मन सदा तुम्हारा, स्मरण रहे उपदेश हमारा ।
अशांत चित्त रोगों का धाम, हनन करे यह शक्ति तमाम ।
ऐसे स्थल पर करे जन वास, विक्षेप न आवे मन में खास ।
रहे शोक से दूर ही रोगी, रोग बढ़े यदि हो वह सोगी ।
शोक से होवे बुद्ध ग्रस्त, स्वास्थ्य भानु का होवे अस्त ।

दो० इस विध मिरगी रोग में, सावधान रह साध ।
करे निरन्तर साधना, रोग करे न बाध ॥ २२०५

स्वामी जी का सुन उपदेश, उपजा सब मन हर्ष विशेष ।
अलौकिक विधि यह रोग निवारे, योग से हों तन मन सुखयारे ।
योग ही ऐसा ज्ञान बतावे, पूर्व जन्म के रोग दुरावे ।
ऐसा ज्ञान कहीं न पाया, जहां सब हो इस विध समझाया ।
जन्म जन्म के कारण भाई, रोग में उन की भी प्रभुताई ।
कारण जान करें प्रतिकार, बिन जाने क्या हो उपचार ।
योगी सद्गुरु करें बखान, और निवारें रोग महान ।
आज भया हम को विश्वास, योग ज्ञान विज्ञान है खास ।

दो० योग साधना के बिना, रोग न हों निर्मूल ।
मूल कटे जिमि रोग का, जाने योग असूल ॥ २२०६क
सब ने मिल कर तब कहा, स्वामिन दीन दयाल ।
अभी रोग कुछ और हैं, उन का पूछें हाल ॥ २२०६ख

३०. उदर व्रण

कर जोड़े इक जन कथ पाया, श्रवण किया सब ध्यान में आया ।
जानूं एक मैं रोग भयंकर, होते पीड़ित जिस से कुछ नर ।
उस का कथन करें उपचार, जग का जिस विध हो उपकार ।
ज़ख़म उदर में हो जब नाथ, थूक में आवे खून भी साथ ।
उल्टी में कभी खून भी आवे, मन्द पीड़ा तो सदा सतावे ।
इस में क्या होता उपचार, कौन सा साधन आवे कार ।
जानें हम यह भयंकर रोग, रहें आतंकित मन में लोग ।
रोगी समझ पाये बस यह, रोग करेगा जीवन क्षय ।

दो० रोगी के मन यह बसे, लगा है कैसा रोग ।
वमन करूं मैं रुधिर को, बना हूँ यम का भोग ॥ २२०७

सुन कर स्वामी जी यह बात, कथी सबन को कह साक्षात ।
मैं यह भयंकर रोग न मानूं, साधारण ही इस को जानूं ।
इस का सरल उपचार है भाई, त्यागे जन सब मिर्च खटाई ।
दुग्धाहार को जन कर पावे, अथवा लाघव खाना खावे ।
परिश्रम करना भी जन त्यागे, सुगम से कार्यों में ही लागे ।
शवासन की वह सीखे रीत, चले न गुरु आज्ञा विपरीत ।

मानसिक चिन्ता को दे त्याग, प्रसन्न रहे गुरु के पग लाग ।
पाक्षिक करे वह वारिसार, रोग से उस का हो निस्तार ।
कुछ ही मास में भये स्वस्थ, पुनः न भये वह रोग ग्रस्त ।
उदर का वृण जो तुम कह पाया, मैंने हे उपचार बताया ।

दो० अति विकट जो रोग हैं, वे भी होते ठीक ।
योग के साधन जो करे, चले गुरु की लीक ॥ २२०८

गुरु की लीक पै जो नर चाले, विपरीत मार्ग पर पग न डाले ।
तन मन से वह रहे निरोग, होवे सफल भी उस का योग ।
तन स्वस्थ और मन भी शांत, बुद्धि कभी भी होय न भ्रांत ।
ऐसा जीवन ही सुखकारी, जिसे लगे न कोई बीमारी ।
प्रभु किरपा से लगे सुयोग, सद्गुरु मिलें करावें योग ।
योग साधन को अमृत मानो, अमर भये वहु योगी जानो ।
योग बिना तो नहीं कल्याण, रोगी को है नरक जहान ।
सब रोगों को योग दुरावे, योगी के न पास वह आवे ।
ऐसा योग करो मम मीत, गुरु शिक्षा पर रख प्रतीत ।

दो० गुरु पर कर प्रतीत जो, करता रहता योग ।
स्वस्थ रहे वह जगत में, जानें यह सब लोग ॥ २२०९

वे सज्जन सुन कर गुरु वाणी, भये हर्षित वह उन सन्मानी ।
कहन लगा इक नर तब सादर, प्रश्न और भी है इक इस दर ।

३१. पागलपन

सब रोगों की औषध योग, सुनें आप से सज्जन लोग ।

पागलपन इक रुज[1] भयदायी, उस की योग में कौन दवाई ।
पागल हम ने देखे कई, आयु जिन की व्यर्थ है गई ।
जन गण को वे कर परेशान, स्वयं रहें वे दुःखी महान ।
ऐसा रोग यह है अभिशाप, उपाय बतावें इस का आप ।
ऐसा कोई उपाय बतायें, जिमि रोगी को वश में लायें ।

दो० कौन उपाय नाथ जी, कर पायें जो लोग ।
जिस से पागल शांत हो, और ठीक हो रोग ॥ २२१०

श्रवण करी जब उसकी वाणी, मनन किया तब गुरु महादानी ।
सचमुच रोग यह बहु दुःखदायी, दुःखी करे जन गण को भाई ।
सुख की नींद न जन सो पाये, जहां पर रोगी पागल आये ।
स्वामी जी तब बात बताई, ला कर ध्यान सुनो तुम भाई ।
पागलपन जो रोग बताया, मानसिक रोग कथन में आया ।
कोमल शीशा मन का मानो, क्लेश बढ़ें तो टूटत जानों ।
मन में दरार पड़े जब भाई, बुध सुध अस्थिर तब हो जाई ।
उस की बुद्ध किमि रहे स्थीर[2], जिस के मन में सदा ही पीर ।
अथवा लगे कठोर आघात, पाश[3] पाश मन बुद्ध हो तात ।

दो० पागलपन का रोग जो, रोग न उस को जान ।
अन्तर का जो द्वन्द्व हो, बाहर आया मान ॥ २२११

पागल का यदि चाहो इलाज, विरुद्ध उसके कर कुछ न काज ।
उस की बात को न तुम टोको, धमकी देय कर न तुम रोको ।

1. रुज-रोग 2. स्थिर 3. टुकड़े टुकड़े

प्रेम सहित सब करो व्यवहार, प्रेम सहित कर लो उपचार ।
स्नेह का जाल उस पर दो डाल, रहेगा वश वह सब ही काल ।
उस की बात से मत घबराओ, रोगी जान उसे समझाओ ।
अथवा जान के शिशु समान, पर वश जीवन उस का मान ।
उस की सेव करो सप्रेम, त्याग करो नहीं अपना नेम ।
मानव मानव का हो मीत, सुखी भये गा जग इस रीत ।
राम प्रभु तो यही सिखावें, तन मन धन जन सेव में लावें ।

दो० तन मन धन जिसके लगें, दुःखी जनों के हेत ।
प्रभु किरपा से जीव के, ऊसर भयें सुखेत ॥ २२१२क
पागल दुखिया जानिये, त्याज्य नहीं वह मीत ।
उस की सेवा जो करे, पाये ईश से प्रीत ॥ २२१२ख

प्रेम सहित उसको करवाओ, दुग्ध नेति की रीत सिखाओ ।
नाक से दूध करे जब पान, उस का दुःख विनाशे जान ।
सुख की नींद तभी सो जावे, नाक से दूध जभी पी पावे ।
नींद आये तो भये निरोग, पागल हेत यह उत्तम योग ।
दुग्ध नेति उस को हितकारी, मिले इससे उस को सुख भारी ।
दुग्ध में घृत को भी ले डाल, इस से लाभ मिले तत्काल ।
पागलपन का रोग नसाये, नेम सहित जो यह कर पाये ।
योग से होवे लाभ महान, नेम बद्ध जो करे सुजान ।

दो० रोगी को यदि नेम से, नित्य करावें योग ।
रोग मुक्त वह होय गा, करें न संशय लोग ॥ २२१३

स्वामी जी इस विध बतलाया, पागलपन हित योग जताया ।
सुन कर सब ने सुख को माना, ऐसे उत्तम ज्ञान को जाना ।

३२. गले पड़ना तथा कण्ठमाल

एक सज्जन तब पूछी बात, हे नाथ तुम शिव साक्षात ।
पूर्ण योगी सिद्ध तुम स्वामी, शिव अवतारी अन्तर्यामी ।
तुम से ज्ञान सकल हम पायें, ऐसा हम सब मनहिं मनायें ।
रोग साधारण सा महाराज, पूछन चाहूं इलाज मैं आज ।
गले पड़े हों या कण्ठमाल, साधन कौन करें उस काल ।
कहें चिकित्सक हो अप्रेशन, चीर फाड़ बिन सुखी न हो जन ।
हे नाथ क्या तुमरी राय, निरोग भये किमि जन की काय ।

दो० जन नीरोगी जिमि भये, होय रोग का नास ।
वही बताओ विध सभी, आप गुरु हम दास ।। २२१४

स्वामी जी सुन कीन उपदेश, हे सज्जन भ्रम है न लेश ।
चीर फाड़ से रोग न जाये, रोग दबे व पुनः विकसाये ।
ग्रन्थि हीन जन वह हो जाये, लाभ की वस्तु काट गंवाये ।
इस का सरल इलाज यह भाई, जन खाये नहीं मिर्च खटाई ।
सूत्र नेति करे निरन्तर, जल नेति भी उसी अनन्तर ।
वमन क्रिया वह करे जरूर, रोग भये इस विध ही दूर ।
यदि कष्ट नहीं इस विध जाये, वस्त्र धौति तब वह कर पाये ।
शीघ्र तभी यह रोग नशावे, स्वस्थ बने जन सुख को पावे ।

दो० स्वस्थ बने जन इसी विध, उत्तम यही उपाय ।

ये साधन जन सीख ले, गुरु योगी को पाय ॥ २२१५

बिन साधन जन रहे बीमार, स्वास्थ्य का साधन समझ आधार ।
साधन योग उत्तम कर जान, इस के कुछ नहीं और समान ।
योग साधन से दुःख का नाश, योग साधन से रोग विनाश ।
योग साधन हैं कथे अनेक, सिखलाय गुरु योगी प्रत्येक ।
गुरु योगी को जब जन पाये, साधन सम्पन्न वह हो जाये ।
स्वयं तरे औरन को तारे, साधन से ही रोग निवारे ।
धनी दरिद्र सभी सुख पावें, साधन सब विध भेद दुरावें ।
जो करे सुख को वही पावे, अन्य वस्तु यहां काम न आवे ।

दो० समझ सुखों का मूल यह, करे योग नर नार ।
साचा सुख इस से मिले, ऐसा लो मन धार ॥ २२१६क
प्रभु जी ने कलिकाल में, कीना पुनरुद्धार ।
योग धर्म का मीत मम, महान है यह उपकार ॥ २२१६ख

योग है सर्व सुखों का मूल, स्मरण रहे यह एक असूल ।
दुःखी हो मन व देह बेकार, नौका योग लगावे पार ।
योग शरण जब ले जन धार, मिले जीवन में सुख का सार ।
योग बिना न सुख जग माहीं, ऐसा श्रवण किया प्रभु ताहीं ।
प्रभु ने जग को योग सिखाया, सन्मार्ग पर सबन लगाया ।
सुमेरु गिरि से वे उतराये, जगत हेत बस्तिन में आये ।
हम सारीखे जनन अनेक, पा सके उन चरण की टेक ।
आधि व्याधि जो जग में भारी, होत योग से दूर वह सारी ।

दो० प्रभु बतलाई सबन को, सरल योग की रीत।
जीवन में सुख हेतु तुम, करो योग से प्रीत ॥ २२१७

इस भांति गुरु देव बताया, सज्जन जन के तब मन आया।
प्रभु योग को जग में लाये, अनुपम कर्म हैं वे कर पाये।
स्वर्ग की गंगा भू पर आई, योग धारा प्रभु जग उतराई।
जग का भया महान कल्याण, लीना आज है हम ने जान।
पूछ लेंय कुछ और भी बात, मिले योगेश्वर हैं साक्षात।
कहा एक ने "हे महाराज, प्रश्न करूं इक आप से आज।
रोग एक मुझ को दुःखदायी, मेरा संग न त्यागत साईं।
कष्ट मुझे वह देत बहुतेरा, पल भर भी न चैन बसेरा।

दो० पल भर भी न कल* पड़े, दुःखी रहूँ सब काल।
आप निवारें कष्ट मम, हो कर परम दयाल ॥ २२१८क
बालपने से है लगा, यह प्रेत की नाईं।
आप निवारें रोग को, कर के कृपा साईं" ॥ २२१८ख

३३. नज़ला, जुकाम

स्वामी जी ने जब सुन पाया, कृपा कर मुख से फरमाया।
कौन रोग है तुम को भाई, इतना जो तुम को दुःखदाई।
रोग होय यदि प्रेत समान, योग को जानो राम का बाण।
योग से बच कहां वह जावे, योग रोग को क्षय कर पावे।
वर्णो अपना सकल कलेश,. साधन कहूँ उस हेत अशेष।

* चैन

बोला सज्जन "हे जग वालो, जब से मैंने होश सम्भाली ।
नज़ले से मैं हूँ परेशान, बहे नाक कभी दुःखता क़ान ।
श्वास नाक से लेना दूभर, खुला रहे मुख रात रात भर ।
मैं उपचार किये बहुतेरे, अन्त में आया दर हूं तेरे ।

दो० तेरे दर पर आय कर, योग करूं चित्त लाय ।
मुझ को भी अपनाइये, रोग जिमि यह जाय" ॥ २२१९

सुन कर उस के दुःख की बात, कहा स्वामी जी सुन लो तात ।
नज़ले का यह रोग साधारण, समझें नहीं जन इस का कारण ।
प्राण नली जीवन प्रदायी, उस की करें न ठीक सफ़ायी ।
मल का संचय वहां हो पावे, रोग उपजे व दुर्गन्ध आवे ।
कीट जीवाणु उपज अनेक, घेरें मानव तन यह एक ।
देह बेचारा क्या कर पावे, उन के सन्मुख पेश न जावे ।
देह बने कीटों की बस्ती, खायें पियें करें अल्मस्ती ।
भोग्य पदार्थ जो हम खायें, कीटों के सब पेट में जायें ।
खाना पीना लगे न लेश, देह छीजे दुःख रहे हमेश ।

दो० रोग छिजावे देह को, कीटों से हो रोग ।
उपजें मल से कीट ये, समझें हम सब लोग ॥ २२२०

निर्मलता से करें जो प्यार, मल का तब नहीं होय संचार ।
शुद्धि से सभी कीट विनाश, शुद्धि से रोगन का नाश ।
जो राखे तन सदैव सफ़ा[1], उसी का तन रहे सदा शफ़ा[2] ।

1. सफा—शुद्ध 2. शफ़ा—स्वस्थ

यही योग का मुख्य सिद्धान्त, देह निर्मल तो रोग का अंत ।
ब्रह्मरन्ध्र जो करता शुद्ध, नेती से जो जन प्रबुद्ध ।
उसको होत न कभी जुकाम, नज़ले का न वहां कुछ काम ।
इस कारण तुम नित्य प्रात, नेति करो उठ कर के तात ।
रोगी नेती जब कर पावे, उस का नज़ला घट ही जावे ।

दो० मेरी शिक्षा मान कर, नेति करो सुजान ।
बालपने के रोग का, रहे न लेश निशान ॥ २२२१

सुन कर उस जन ने यह बात, कीनी नेती अगली प्रात ।
नित्य करने का नेम बनाया, रहा न नज़ला सुख उस पाया ।
इस विध नित जब जन कर पाये, जुकाम व नजला निकट न आये ।
स्वामी जी से पाया ज्ञान, धन्य भये सब भक्त सुजान ।
स्वामी जी फिर कहने लागे, भक्तों को समझाने लागे ।
प्रिय वृन्द यहां रोग बहुतेरे, जिन से पीड़ित लोग घनेरे ।
होये सबन का किमि बखान, मूल बात बस लो यह जान ।
जिस का जीवन योगानुकूल, स्वस्थ रहे वह मत यह भूल ।

१५. योगानुकूल जीवन और उसके लक्षण

दो० जीवन योगानुकूल जब, मिले स्वास्थ्य का लक्ष ।
तन मन में बहे सुख की, गंग धार प्रत्यक्ष ॥ २२२२

सुन कर नाथ की वाणी सारी, इक सज्जन ने गिरा उच्चारी ।
हे स्वामिन यह स्पष्ट बतावें, योगानुकूल किसे कह पावें ।
गुण कौन जो हों उस माहीं, जीवन योगानुकूल कहाहीं ।

कर किरपा यह खोल बतावें, लक्षण कौन जो हम अपनावें ।
योगानुकूल बनावें जीवन, दुःखी रहे न हमरा तन मन ।
कृपा आप की हम पहचानें, योग की शिक्षा को सन्मानें ।
हे नाथ अब करिये दाया, हरिये विषयों की सब माया ।
योग के मार्ग पर चल पायें, तज के भोग योग अपनायें ।

दो० भोग तजें हम योग हित, रहे स्वस्थ शरीर ।
ऐसी कृपा कीजिये, ग्रसे न भव की पीर ॥ २२२३

भक्तन की सुन शुभ यह वाणी, बोले स्वामी महा कल्याणी ।
भक्त जनो यह उत्तम बात, मारग योग गहो जो तात ।
मारग योग परम सुखदायी, इस को ग्रहण करो तुम भाई ।
योगानुकूल की पूछी बात, स्पष्ट करूं मैं इस को तात ।
योग जीवन के चार आधार, मानसिक शांति पहली कार ।

(क) मानसिक शांति

मानसिक शांति सुख की मूल, नाशे सुख यदि मन में शूल ।
शांति हेत सन्तोष लो धार, उपाय सभी जो आवें कार ।
अशांति का जो होवे कारण, उस का प्रेम से करो निवारण ।

दो० शांत रहें हम चित्त में, सुख से बहें प्राण ।
देह हमारा स्वस्थ हो, प्रथम बात यह जान ॥ २२२४

(ख) शुभ कर्म

दूसर बात का कह दूं सार, शुभ कर्मन का गहो आधार ।
कर्म ही जन का भाग्य बनावें, सुख दुख जन को ये दे पावें ।

मन में राखो शुद्ध विचार, धर्म रूप हो कर्म आचार ।
वाणी सत्य मधुर हो पाये, फिर नर को नहीं दुःख सताये ।
सुख हेंतु शुभ कर्म कमावो, तीन दुःखों† से मुक्ति पावो ।
इस विध स्वामी जो समझाया, जीवन सुख का रहस्य बताया ।
आगे कहा सुनो तुम तात, कथ पाऊँ अब तीसरी बात ।

(ग) योग साधन

योगानुकूल जीवन के हेत, योग के साधन हैं अभिप्रेत ।

दो० साधन को जो नित करे, वह योगी तू जान ।
ऐसा योगी क्या भये, साधन से अनजान ॥ २२२५क
अष्ट अंग जो योग के, राखे सदा समक्ष ।
आसन मुद्रा बंध में, भी होवे वह दक्ष ॥ २२२५ख
षटकर्मन की साधना, जो शुद्धि की मूल ।
प्राणों की भी साधना, वही योगानुकूल ॥ २२२५ग

(घ) ईश्वर कृपा

चौथी बात सुनो चित्त लाय, जिस बिन कुछ भी नहीं हो पाय ।
गुरु की किरपा को सिर धार, जीवन में सुख मिले अपार ।
जिस विध गुरु का भये सन्तोष, योगी कर्म करे बिन रोष ।
इस विध गुरु को कर प्रसन्न, गुरु कृपा से जन भये सम्पन्न ।
ऐसे लोग बहुत जग माहीं जो जाने इस तथ्य को नाहीं ।
ऐसे गुरु भी बहु जग माहीं, जिन में शक्ति होत है नाहीं ।

† 1. आधिभौतिक 2. आधिदैविक 3. आध्यात्मिक

योग से शक्ति गुरु में आवे, योग बिना जन शून्य रह पावे ।
योगी गुरु नर को मिल पावे, कृपा की दिव्य धार वह आवे ।

दो० कृपा रूप आधार यह, जीवन का आधार ।
इस को वह ही जानता, लीना जिस गुरु धार ।। २२२६

इस विध स्वामी जी बतलाये, जीवन के आधार जताये ।
सुखी रहे जन इसी आधार, ये ही जानो सुख के सार ।
भक्तों ने सुन कर गुरु वाणी, वेद वचन सम वह सन्मानी ।
बोले सभी वे एक स्वर, धन्य धन्य हो योगी गुरुवर ।
ज्ञान आप से ऐसा पाया, जीवन-सुख का राह है पाया ।
तन से सुखी जन मन से शांत, बुद्धि में नहीं रहे भ्रांत ।
आप की शिक्षा पा कर नाथ, मुक्ति धाम लगे जन हाथ ।
लोक सुधरे परलोक सुधारें, ऐसे मग पर आप ही डारें ।

दो० मुक्ति दायक सीख जो, मिली आप से नाथ ।
आज इसी को पाय कर, हम सब भये सनाथ ।। २२२७

पुनः उच्चारा गुरु महाराज, हे भक्तो शुभ अवसर आज ।
प्रसंग योग का आप चलाया, योग धर्म का ज्ञान है पाया ।
योग धर्म सब ज्ञान का सार, योग धर्म जग का आधार ।
योग धर्म तन का रखवाला, योग धर्म से बुद्ध उज्जाला ।
योग धर्म से मन हो शांत, योग धर्म से मिटती भ्रांत ।
योग धर्म सहायक सब थाईं, योग धर्म से क्लेश नशाईं ।
योग के आश्रित लोक लोकांत, योग से सकल उपद्रव शांत ।

योग से ईश्वर जीव मिलाप, योग से ईश के नाम का जाप ।
उसी योग की कथा चलाई, हे भक्तो मम मन बहु भाई ।

दो० और यदि हो पूछनी, योग सम्बन्धी बात ।
पुनः प्रातः आय कर, पूछ लेनी फिर तात ॥ २२२८

इस विध गुरु का पा आदेश, भक्त गये पा ज्ञान विशेष ।
स्वामी जी नित कर्म में लागे, प्रभु चरणों की पूज अनुरागे ।
प्रभु की पूजा जब कर पाते, सुध बुध निज तन की बिसराते ।
प्रभु चरणी जो उनकी प्रीत, अनोखी ही थी वह इक रीत ।
प्रभु प्रतिमा के सन्मुख ठाढ़, घण्टों भजन प्रवाह की बाढ़ ।
खान पान विश्राम को भूल, रहत भक्ति के रस में झूल ।
प्रभु प्रतिमा को गले लगाते, अथवा चरण वे चूम दिखाते ।
स्वर सुघोष में गाते गान, सुनते देव भी नभ में आन ।
करते दण्डवत वे प्रणाम, उठने का नहीं लेते नाम ।
मुलख की ऐसी भक्ति देख, ऋषि मुनि सभी करें उल्लेख ।
जग में एक है प्रेम पतंग, रंगा मुलख जो राम के रंग ।

दो० प्रभुओं के प्रभु राम हैं, लीना कलि अवतार ।
भक्त शिरोमणि मुलख हैं, जिस मन प्रेम अपार ॥ २२२९क
मुलख राज के सम नहीं, भक्त शिरोमणि आज ।
मुलख मुलख में एक है, भक्तों का सिरताज ॥ २२२९ख

भक्ति में इमि रात बिहाई, प्रातः भई जगी जगताई ।
सज्जन गण फिर चल कर आया, प्रभु चरणो उस शीश झुकाया ।

आशिर्वाद सद्गुरु से पाय, बैठे चरणों में चित्त लाय ।
इक सज्जन ने कीन अरदास, नाथ सभी हम आप के दास ।

१६. तुतलाने का उपचार

आप से पा कर ज्ञान महान, जिज्ञास और बढ़े भगवान ।
सुत कारण मैं हूँ दुखयारी, वाणी जिस की दुर्बल भारी ।
स्पष्ट बात न बोल वह पाये, रुक रुक कर ही कह दिखलाये ।
किस विध उस का रोग हो दूर, उपाय कहिये नाथ जरूर ।

दो० नाथ आप कह दीजिये, मुझ पर होय दयाल ।
तुतलाना जिमि दूर हो, मम सुत का इस काल ॥ २२३०क
बिन वाणी के नाथ जी, मानव क्या हो पाय ।
मूक पशु सम होत है, बोल न जो दिखलाय ॥ २२३०ख

वाक न हो जिस के मुख माहीं, जाने दुःख वह अपना साईं ।
ऐसा योग कौन भगवान, रहे न मम सुत का तुतलान ।
बात सके कर हमरे साथ, ऐसा योग बताइये नाथ ।
आप का मानें बहु उपकार, दया करें चित्त कृपा धार ।
स्वामी जी सुन उस की बात, मुख से बोले "लो सुन तात ।
वाणी दुर्बल जिस की होय, रुक रुक कर ही बोले जोय ।
उस के हेत मैं योग बताऊँ, सरल विधि मैं सब समझाऊँ ।
जब अभ्यास करे मन लाई, शक्ति वाणी में आ जाई ।

दो० वाणी में बल आयेगा, करे योग जब बाल ।
निराशा की न बात कुछ, सुखी रहे सब काल ॥ २२३१क

नेति क्रिया नित करे, नासा से पय पान ।
दोहन कर ले जीभ का, मन का त्याग म्लान ॥ २२३१ख

दोहन की मैं विधि बतलाऊँ, गुणकर साधन यह समझाऊँ ।
सेंधा नमक जो बर्तें सारे, चुटकी भर कर जीभ पै डारे ।
जिह्वा ऊपर मले सुजान, खींचे जिह्वा फिर धर ध्यान ।
गौ दोहन की जो है नीति, जिह्वा दोहन करो उस रीति ।
अंगुलिन से कई करते लोग, करें कई चिमटी का प्रयोग ।
गुरु से सीखे पूरण रीत, जिह्वा दोहन सुगम है मीत ।
जिह्वा दोहन के पश्चात, मलिये जीभ पै घृत को तात ।
नस नाड़ी इमि होय सशक्त, तीव्र गामी भये गा रक्त ।

दो० दोहन के प्रभाव से, बढ़े रक्त संचार ।
दुर्बल वाणी तब करे, सुगम कथन की कार ॥ २२३२क
दोहन के पश्चात जन, करे माण्डुकी मुद्र ।
सीखी जो माण्डूक से, जन्तु जो अति क्षुद्र ॥ २२३२ख

माण्डूकी मुद्रा जो कर पावे, जीभ अपनी सशक्त बनावे ।
गुरु से शिक्षा इस की लेय, करे एकान्त बैठ के येह ।
बैठ कहीं फिर एक किनारे, उच्च उच्चारे अक्षर सारे ।
'अ' से ले कर 'ज्ञ' तक सारे, सावधान हो सकल उच्चारे ।
जहां अटके तहं सह अभ्यास, उच्चारण का कर ले प्रयास ।
बार बार जब करे उच्चारण, जिह्वा का हो रोग निवारण ।
एक बात पर ले मन धार, माने नहीं मन में वह हार ।

दुर्बल मन वाणी ले रोक, मन सबल कहे बात बेटोक ।

दो० योग कहा जो सकल मैं, और जो मन का भेद ।
करे सभी जो पूत तव, नशे रोग का खेद । २२३३

सुन कर गुरुमुख से यह ज्ञान, सज्जन भये प्रसन्न महान ।
कृत कृत्य उन निज को जाना, योगी गुरु पा मिला ज्ञाना ।
गुरु जी रीति बताई ऐसी, होय न उस सम को भी जैसी ।
औषध का नहीं जिसमें काम, और न लागे कुछ भी दाम ।
उपाय सकल यह निज अधीना, ऐसा ज्ञान गुरु दीन नवीना ।
योगी गुरु का जो उपकार, कथ सके न कोई नर नार ।
योग के साधन दिव्य अनूप, गुरु योगी कहे उन का रूप ।
लुप्त भया था जग से ज्ञान, अज्ञान व्यापा सकल जहान ।
अविद्या को जग विद्या माना, क्लेश बढ़ा व दुःखी जहाना ।
प्रभु प्रकटे तब जग के हेत, दीनी सकल जगत को चेत ।
विद्या वह जो हो सुखकारी, आधि व्याधि सब नाशन हारी ।
जिस से हो नहीं दुःख का हाना, क्लेश बढ़ावे वह तो ज्ञाना ।

दो० क्लेश बढ़े जिस ज्ञान से, उपजे न मन शांत ।
ऐसा ज्ञान अज्ञान सम, राखे चित्त भ्रांत ॥ २२३४क
योग ही ऐसा ज्ञान है, मेटे सकल क्लेश ।
तन मन की जो व्याध को, दूर करे निःशेष ॥ २२३४ख

योग ज्ञान जग को आ दीना, यह उपकार प्रभु जी कीना ।
जिस किसी उस ज्ञान को पाया, मानव जीवन सफल बनाया ।

तन के रोग व मन की व्याध, नष्ट भयें सब बिन ही बाध ।
प्रभु अवतार की यही विशेष, अलौकिक दीना ज्ञान विशेष ।
इस विध स्वामी जी समझाया, भक्त जनों को सब बतलाया ।
किस विध योग रोग हर लेता, किस विध जीवन में सुख देता ।
किस विध अंग अंग की व्याध, करता योग दूर बिन बाध ।
किस विध तन का रोग नशावे, मन भी शांत योग कर पावे ।
बुद्धि की किमि दूर हो भ्रांति, जीवन में रहें किस विध शांति ।

दो० किस विध जीवन शांत हो, किस विध देह निरोग ।
किस विध जन गण हों सुखी, सुन पाये सब लोग ॥ २२३५क
धन्य धन्य सब ने कहा, धन्य गुरु महाराज ।
धन्य योग का ज्ञान यह, धन्य सकल हम आज ॥ २२३५ख

धन्य धन्य सब ने कर पाया, सद्गुरु को उन शीश झुकाया ।
विदा भये वे सज्जन सारे, गुरु शिक्षा दृढ़ मन में धारे ।
गुरु शिक्षा विश्वास की मूल, जान सनातन यही असूल ।
स्वामी जी इस विध प्रचारें, जन गण के बहु दुःख निवारें ।
प्रभु की महिमा का प्रचार, होत निरन्तर गुरु के द्वार ।
दिव्य कर्म इसको सब जानें, देव हितैषी प्रभु को मानें ।
देव प्रभु के सदा अभारी, जिन जग देव पूजा प्रचारी ।

१७. देश का बंटवारा, भक्तों की पुकार पर श्री प्रभु जी द्वारा उनकी रक्षा, श्री स्वामी मुलखराज ने भक्तों का संकट अपने तन पर लिया ।

प्रभु जी रहें मुलख के साथ, प्रभु किरपा से मुलख सनाथ ।

दो० प्रभु कृपा रहे मुलख पर, मुलख करें सब काम ।
भक्त निरन्तर आय कर, चरण गहें अभिराम ॥ २२३६

भक्त जनों की संख्या भारी, चरण मुलख पर जो बलिहारी ।
सब की सद्गुरु करें संभाल, योग क्षेम दें दीन दयाल ।
जहां रहत कोई भक्त प्यारा, वहीं बहती थी कृपा धारा ।
कृपा का वहे प्रवाह अपार, कौन सकत पा उस का पार ।
छेहरटा लवपुर अमृतसार, ऋषिकेश भी जाय करतार ।
प्रभु किरपा का कर प्रसार, भक्त जनों की करें संभार ।
काल भयंकर था अब पास, रक्षित जिस विध हों सब दास ।
वैसी योजन प्रभु बनाई, मुलख को मन में सब समझाई ।

दो० बैठ हिमालय शिखर पर, महाप्रभु के पास ।
राम लाल थे सोचते, कार्य जो आगे खास ॥ २२३७

देश पै उतरा संकट भारी, उठी भयंकर इक अंधयारी ।
बुद्धि सबन की भयी मलीन, दीन धर्म भया पाप विलीन ।
हिंसक कर्म के खुले कपाट, पाप पुंज की लग गई हाट ।
उपजी दुष्ट थी एक उमंग, आर्यवर्त के काटें अंग ।
देश अखण्डित न रह पावे, आसुरी धुन यह चित्त समावे ।
ऋषियों की यह भूमि प्यारी, उपद्रव ग्रस्त भयी यह भारी ।
शासक भये कुशासक ऐसे, उपद्रव स्वयं करावें जैसे ।
दीन दुःखी संकट में डूबे, जीवन से जन गण सब ऊबे ।

दो० ऐसे काल कराल में, भक्त जनों की टेक ।
मुलख राज थे जगत में, जिन मन राम था एक ।। २२३८क
जिन मन राम था एक ही, सर्व शक्ति का स्रोत ।
ऐसे दीन दयाल के, चरण सबन हित पोत । २२३८ख
मुलख राज को सभी पुकारें, संकट डूबे भक्त उच्चारें ।
'हे दीनों के परम दयाल, बहुड़ो संकट के इस काल ।
दुष्ट जनों ने हम को घेरा, डूब रहा बस अब यह बेरा ।
नगरों में हैं आग लगाई, ऐसी दुष्टों की दुष्टाई ।
जनता को है बाहिर भगाया, नर नारिन सब बहु दुःख पाया ।
आकाश तले पड़े हैं लोग, बने सभी हैं काल के भोग ।
खान पान की न कोई वस्त, तड़प रहे कई रोग ग्रस्त ।
बिखरे हैं. यहां शव घनेरे, देख न आय लेश को नेरे ।
दो० पड़े शवों के मध्य हम, करें प्रभु को याद ।
काल भयंकर आ पड़ा, सभी भये बरबाद" ।। २२३९
इस विध सभी पुकारें दास, जीवन की थी छूटी आस ।
फंसे थे जन अनेक प्रदेश, स्वदेश बना था उन्हें विदेश ।
जान माल और मान की हानी, नित्य होती जब सब ने जानी ।
भक्त पुकारें प्रभु के ताही, विपदा में जो होत सहायी ।
लवपुर से था कोई पुकारे, अन्य रुका किसी और किनारे ।
ऐसा नगर ग्राम न कोई, जहां पै विपदा घोर न होई ।
मुस्लिम राज्य का ले उद्देश, अनेक थलों से उस प्रदेश ।

विर्धामन बाहिर निकाले सज्जन, कैंपों में उन ठोंसे सब जन ।

दो० कैंपों में थे जन पड़े, देश निकाले हेत ।
ऐसी विपदा घोर में, सुध भी न कोई लेत ॥ २२४०क
ऐसी विपदा घोर में, राम लाल महाराज ।
निज भक्तों को देखते, जिन पर संकट आज ॥ २२४०ख
धैर्य बंधाते सबन को, मन में दे विश्वास ।
हम तुम्हारे संग हैं, हान न होगी खास ॥ २२४०ग

इस संकट से लेंय निकाल, माखन से जिमि निकले बाल ।
प्रभु दीना जब यह विश्वास, "भक्त जनो हम तुमरे पास" ।
उस विश्वास ने कीन कमाल, नर नारी जो वृद्ध व बाल ।
सब में निर्भयता उत्साह, चित्त में मौत की न परवाह ।
प्रभु जब अंग संग हों भाई, ऐसी मृत्यु भी सुखदाई ।
मौत से डर हम को न कोई, छू सके नहीं हम को सोई ।
विर्धामिन मध्य निशंक थे जाते, गोली बरसत भय नहीं खाते ।
चित्र प्रभु का संग संभाले, वे सुखी जहां जान के लाले ।

दो० जान के लाले हों पड़े, सर पर नाचे काल ।
ऐसे संकट काल में, प्रभु जी करें संभाल ॥ २२४१

जहां प्रभु का था कोई प्यारा, उसे वहीं पर मिला सहारा ।
अटक मरी या हो मर्दान, स्यालकोट वा झंग मघियान ।
बन्नूं अथवा हो कोहाट, मियांवाली या हो गुजरात ।
प्रभु का सेवक जहां रह पाता, और प्रभु को मनहिं ध्याता ।

प्रभु लें उस की सार संभाल, बांका होय न उसका बाल ।
डेरा जो इस्माइल खान, अथवा डेरा गाजी खान ।
ऐसे ऐसे विकट स्थान, प्रभु सहायी बने वहां आन ।
जल रहे थे अनेक स्थान, जैसे लवपुर वा मुलतान ।
प्रभु ने वहां निज भक्त बचाये, शरणागत जिमि दुःख न पाये ।

दो० शरण प्रभु की जो पड़ें, सिमरें मन के मांहि ।
प्रभु रक्षक उन के बनें, इसमें संशय नांहि ॥ २२४२क
पेशावर जो भक्त थे, अथवा जो मर्दान ।
रावल पिंडी या फंसे, प्रभु बचाई जान ॥ २२४२ख
प्रभु बचाई जान तब, मचा जभी कुहराम ।
पाकिस्तान निर्माण हित, उठा था जब इस्लाम ॥ २२४२ग

कैंपों पै आक्रमण थे होते, काटे जाते नर जब सोते ।
गाड़ियें जब निकल के आतीं, मारग में ही काटी जातीं ।
नर नारी सब मारे जाते, खाली गाड़ी अरि लौटाते ।
मोटर गाड़ी जाती पाते, हत्या कर गाड़ी ले जाते ।
अमृतसर के पार यही बात, अमृतसर रहें मुलख साक्षात ।
भक्तों की संभाल वे करते, भक्त जनों के भय को हरते ।
मुलख प्रभु से करत अरदास, देख दुर्दशा मुलख की खास ।
"निमानों के हे मान स्वामी, घट घट वासी अन्तर्यामी ।
शांत करो यह द्वेष की आग, जल रहा जिस में देश अभाग ।

दो० देश अभागा जल रहा, फैली आग द्वेष ।

लाखों जन हैं मर रहे, भटकें देश विदेश ॥ २२४३

माताओं से हैं बच्चे बिछुड़े, वृद्ध पुरुष साथिन से पिछुड़े ।
दर दर भटक रहे सब लोग, भूख प्यास सतावे रोग ।
हे प्रभो अब दया कर पावें, इस विनाश को आप थमावें ।
दया बिना अब आप की नाथ, विनाश सभी का हो इक साथ" ।
ऐसा कह चरणि चित्त लाया, समाधि में प्रभु जी को ध्याया ।
प्रभु जी कही तब मार्मिक बात, "मुलखराज तुम जग के त्रात ।
तुम से ही जग पाये त्राण, और बचें लाखों के प्राण ।
धरती का यह संकट भारा, निज तन पर यदि लेवो सारा ।

दो० निज तन पर यदि धार लो, धरती का अब भार ।
बचे धर्त तब नाश से, ऐसा एक विचार" ॥ २२४४

श्रवण करि जब मुलख यह वाणी, अमृत सम उस प्रिय वह जानी ।
कहा "नाथ यह तन न मोरा, आप से केवल यही निहोरा ।
जन हित रोम रोम मम लागे, और चित्त तव पग अनुरागे ।
निमानों के तुम मान स्वामी, विनय करूं क्या अन्तर्यामी ।
सेवक तव इंगित का दासा, सेव में राखो यह अरदासा ।
जो चाहो इस तन पै डालो, दीन जनों की विपदा टालो" ।
मुलख की पूर्ण भई अरदास, थम गया फिर लोक विनास ।
मुलख के तन का बिगड़ा हाल, 'सेवक' निरख तब भया बेहाल ।
जिमि हलाहल शिव था पीना, तिमि मुलख दुःख तन पै लीना ।

दो० तन पै लीना मुलख ने, जग का सकल विनाश ।

मास अनेकों तब रहे, एक शिष्य के पास ॥ २२४५क
रेल स्टेशन सामने, होटल एक विशाल ।
उसी होटल के कक्ष में, रहे मुलख इस हाल ॥ २२४५ख
रहे मुलख इस हाल ही, अमृतसर में दयाल ।
उन्नीशत अठतालीस १९४८ भयंकर ईस्वी साल ॥ २२४५ग
भक्त जनों के दुःख का, गुरु कीना उपचार ।
निज तन पर ही ले लिया, सारा उन का भार ॥ २२४५घ
बात कथी है सत्य ही, किसी ने सोच विचार ।
पिता से माता सौ गुणा, करती सुत से प्यार ॥ २२४५ङ
माता से भी सौ गुणा, हरि करता है प्यार ।
हरि से भी फिर सौ गुणा, सद्गुरु करत दुलार ॥ २२४५च

सद्गुरु किरपा इस विध कीनी, हर इक भक्त की सुध उन लीनी ।
घोर विपद से सबन बचाया, पाक[1] से स्वदेश पहुँचाया ।
बाल बांका न होने पाया, कैसी अद्भुत सद्गुरु दाया ।
सुख सुविधा के ठौर ठहराया, काम काज उन का चलवाया ।
ऐसे राम लाल कल्याणी, ऐसे मुलख राज महादानी ।
भक्त जनों के सुख के हेत, निज तन पर जो दुःख हैं लेत ।
भक्त जनों के कर्म का भोग, सद्गुरु निज तन लीना भोग ।
ऐसे सद्गुरु की प्रभुताई, कौन सके कर वर्णन भाई ।

1. पाकिस्तान

दो० वर्णन में न आ सके, सद्गुरु दया महान ।
नरक की अग्नि से किया, भक्त जनों का त्राण ॥ २२४६
कई मास इमि रुग्न बिताये, देह दुखी प्रभु चित्त समाये ।
देव ऋषि बहु दर्श हित आवें, अलौकिक कर्म को सभी सराहवें ।
योग बिना नहीं होय बसात, अन्य का दुःख जो लें निज गात ।
योगीराज मुलख महाराज, जग में बस उन का ही काज ।
शिष्य की विपद में करें त्राण, कौन मुलख में मुलख समान ।
जग हित है प्रभु का अवतार, मुलख करत उन की सब कार ।
महाप्रभु संग प्रभु विराजें, मुलखराज जी जग में साजें ।
भक्तों की लें सार संभार, महिमा प्रभु की अपरमपार ।
दो० प्रभु की महिम अपार है, किमि हो सकत बखान ।
शरण गही जिस नाथ की, भयी विपद से त्राण ॥ २२४७
अनेकों भक्त पाक[1] से आये, प्रभु ने निज दे हाथ बचाये ।
सद्गुरु का आ दर्शन पाते, निज बीती वे सभी सुनाते ।
माखन से जिमि बाल निकाला, इमि भक्तन को प्रभु संभाला ।
शूली का उन शूल बनाया, पर्वत राई कर दिखलाया ।
संकट का जब पर्वत फूटा, यवनों ने घर बार था लूटा ।
प्रभु ने सब को गोद संभाला, घोर संकट को लघु कर डाला ।
शिव अवतारी सद्गुरु दानी, कौन समझे उन की कुरबानी ।
'सेवक' को यह प्रभु दिखलाया, धन्य धन्य सद्गुरु की दाया ।

1. पाक—पाकिस्तान

दो० दया गुरु की जभी भये, मिले रहस्य का ज्ञान ।
स्मरण रहें तुझ को सदा, राम मुलख भगवान ॥ २२४८

एक वर्ष तक रहे बीमार, औषध आए न कोई भी कार ।
वर्ष बाद प्रभु जी वर दीना, "नूतन जीवन अब तुम लीना ।
प्राप्त करो प्रसिद्धि महान, राजा रंक गायें तव गान" ।
स्वस्थ भये तब सद्गुरु दयाल, आये आश्रम में तत्काल ।
भक्त जनों ने जब यह जाना, सद्गुरु का शुभ आश्रम आना ।
दर्शन हित सब चलि चलि आवें, जय जय सद्गुरु देव बोलावें ।
सद्गुरु चरण इमि सत्कारें, चकवे चांद को जिमि निहारें ।
दुर्बल रूप कुछ उन का पावें, हृदय में बहु दुःख मनावें ।

दो० दुर्बल गुरु को देख कर, 'सेवक' के मन शोक ।
दासन हित सद्गुरु लिया, निज तन पर बहु रोग ॥ २२४९क

१८. श्री राम प्यारा का श्री सद्गुरु स्वामी मुलखराज के चरणों में आना ।

देव सराहें नाथ को, लोक करें जय कार ।
राजा रंक सब आ गये, सद्गुरु के दरबार ॥ २२४९ख

दूर दूर से जन चलि आवें, प्रभु प्रेरित वहां जुट पावें ।
सेव करें वा प्रभु गुण गावें, सद्गुरु की शुभ आशिष पावें ।
सब का मैं क्या करूं बखान, विशेष भक्त दो आये महान ।
उन निज जीवन प्रभु पग अर्पा, तन मन धन सब चरणि समर्पा ।

नाम एक का राम प्यारा, प्यार करे वह राम से न्यारा ।
धन्य नाम उस ने निज कीना, प्यार अलौकिक उस मन चीना ।
सेव करे और रहे निमाना, उस मन लेश न था अभिमाना ।
उस की रीती नीती ऐसी, साचे सेवक की हो जैसी ।
नंगल निक्कू का वह वासी, गुरु चरणों का दृढ़ विश्वासी ।

दो० गुरु चरणी विश्वास जो, उस मन दृष्टि आये ।
विरला ही जन जगत में, ऐसी भक्ति पाये ॥ २२५०क
गुरु माता गुरु ही पिता, गुरु ही बंधु मीत ।
गुरु विद्या गुरु संपदा, रहत सदा उस चीत ॥ २२५०ख

घर से आया राम प्यारा, अमृतसर कुछ कीन व्योपारा ।
काम करे पर मन यह आवे, सद्गुरु कहां मुझे मिल पावे ।
जन्म अनेकों व्यर्थ गंवाये, सद्गुरु चरण न चित्त ध्याये ।
पापों का बहु संग्रह कीना, चौरासी का सर बोझ है लीना ।
बोझ बड़ा मैं पिस पिस जाऊँ, मिलें गुरु सुख सांस मैं पाऊँ ।
क्षण क्षण कर बहु काल बिताया, बोझ ढोया कुछ हाथ न आया ।
जीवन के पल बहुत विहाये, मोह माया में सकल गंवाये ।
गुरु मिले तो सब कुछ त्यागूं, गुरु चरणों में हठ कर लागूं ।

दो० हठ बस मन में एक यह, पाऊँ सद्गुरु दयाल ।
सेव करूं चित्त लाय कर, त्याग मोह का जाल ॥ २२५१

इस धुन में ही करत व्योपार, भूल गया वह घर वा बार ।
कान पड़ी फिर दिन एक धुन, मुलखराज महाराज की धुन ।

राम प्रभु के गुण सुन पाये, मुलखराज जो सबन सुनाये ।
श्रवण किये वे मनहिं समाये, अंकित हिरदय पै हो पाये ।
मुलखराज की चरणी लागा, संस्कार सुप्त था उस मन जागा ।
सद्गुरु मुलख राज को ध्याया, तोष बसा उस के चित्त आया ।
अब व्योपार करे प्रभु लेखे, आश्रम को ही निज घर देखे ।
जो पाये प्रभु चरणि चढ़ाये, हठ कर सब कुछ वह दे पाये ।

दो० ऐसा निर्मम भक्त जो, राम प्यारा नाम ।
आया सद्गुरु शरण में, प्यार किया उसे राम ॥ २२५२

ऐसा भक्त रहे किमि न्यारा, सद्गुरु का उस लीन सहारा ।
काम काज सब उस ने त्यागा, केवल सद्गुरु चरणी लागा ।
सद्गुरु सेव करे दिन रात, सेवक भया वह इक विख्यात ।
रह कर सद्गुरु के ही पास, भजन करे वह श्वास श्वास ।
उसके चित्त बस एक उमंग, रहे गुरु के सदा ही संग ।
सद्गुरु कहीं भी आवें जावें, उस को संग ही रख वे पावें ।
ऐसा उसका परम सौभाग, रहत सदैव गुरु चरणी लाग ।
गुरु के करत वह सारे काम, ऐसा सेवक गुरु का राम ।
ऐसा सेवक राम प्यारा, सेवा का दृढ़ व्रत जिस धारा ।
सद्गुरु सेवक भये अनेक, इस जैसा नहीं दीखत एक ।

दो० सेवक जग में बहुत हैं, सेव करें सह मान ।
मान छोड़ जो करत है, सेवक साचा जान ॥ २२५३क
ऐसा सेवक जगत में, रहे धार यह नेम ।

गुरु की एक प्रसन्नता, मिले गुरु का प्रेम ॥ २२५३ख

गुरु कृपा सर्वोत्तम जाने, और किसी से भय न माने ।
गुरु प्रसन्न रहें जिस रीत, कर्म करे वह सब उस नीत ।
सेव धर्म वह उत्तम लेखे, गुरु कृपा से लाभ को पेखे ।
गुरु भी राखें उस का ध्यान, निमाने सेवक को पहचान ।
निमाना सेवक राम प्यारा, भया गुरु का अतीव प्यारा ।
जहां राखें गुरु वहीं रह पावे, जहां भेजें वहीं वह जावे ।
जो कुछ देवें वह ही खावे, ग्लानि लेश न चित्त में लावे ।
देखे दिन न रात वह देखे, गुरु की आहट हर दम पेखे ।
गुरु झिड़कें तो झिड़क भी खावे, माथे पर कुछ शिकन न लावे ।

दो० गुरु से झिड़की खात वह, चित्त में हो प्रसन्न ।
गुरु निकालें दोष मम, रहत सदा उस मन ॥ २२५४

गुरु सेवा का उस को चाव, प्रसन्न रहें गुरु उस मन भाव ।
जागत प्रात वह गुरु से पूर्व, सर्व काल करे सेव अपूर्व ।
इस सेवा का फल उस पाया, सद्गुरु उस पर कीनी दाया ।
योग भक्ति का दान महान, दीना उसे निज सेवक जान ।
जब कभी सद्गुरु को ध्यावे, सद्गुरु रक्षक बन कर आवे ।
एक दिवस उसे प्रभु दिखाया, रूप विलक्षण सन्मुख आया ।
भया था पत्नी का देहान्त, आत्मा भयी न उस की शान्त ।
चित्त में उस के दुख समाया, तुरन्त प्रभु को फिर उस ध्याया ।

दो० मन में प्रभु को ध्याय कर, कीनी यह अरदास ।

"नाथ आप की शरण में, ही तो है यह दास ॥ २२५५

यह देखूं क्या दृश्य घिनौना, निरख जिसे मो आये रोना ।
गति है जैसी इसने पायी, ध्यान में न थी कभी भी आयी ।
शरणागत के आप सहायी, गति निवारो यह दुखदायी" ।
विनय जभी उस ने यह कीनी, दयानिधि की दया फिर चीनी ।
भटक रही जो उस की नार, लीना रूप दिव्य उस धार ।
जय जय कार कीन प्रभु ताहीं, जय जय सद्गुरु करत गोसाईं ।
दिव्य लोक को वही सिधारी, सुन्दर रूप धार वह नारी ।
भया भक्त के मन सन्तोष, दूर भया उस का सब रोष ।

दो० उस के मन सन्तोष था, दयाल भये जब नाथ ।
शरण पड़े जो नाथ की, नाथ रहें उस साथ ॥ २२५६क
इस विध राम प्यार जी, सेवा में तल्लीन ।
इस जीवन की डोर उस, हाथ गुरु के दीन ॥ २२५६ख

१९. श्री देवी दयाल का सद्गुरु शरण में आना

दूजा भक्त विशेष जो, आया गुरु के पास ।
भक्त शिरोमण हम कहें, ऐसा मम विश्वास ॥ २२५६ग

देवी दयाल निज नाम बखाना, कहे "नाथ मैं हूँ नादाना ।
महिमा तोर पड़ी मम कान, योग का मुझ को दीजो दान ।
मैं हूँ एक दीन तव बालक, सद्गुरु तुम सब के प्रति पालक ।
शरण तेरी में आया नाथ, चरण शरण दे करें सनाथ ।
मुझे योग की है जिज्ञासा, रहूँ शरण में मिटे पिपासा ।

बालपने से है लिव लागी, योगी गुरु पा बनूं सुभागी ।
सद्गुरु आप मुझे अपनावो, सेव करूं कुछ सेव बतावो ।
बहुत दूर से मैं चलि आया, सद्गुरु योगी करिये दाया ।

दो० दीन जान कर नाथ जी, बालक हूँ नादान ।
चरण शरण दें आपनी, करिये मम कल्याण ॥ २२५७क
इस विध विनय सुनाय कर, ग्रहण किये गुरु चरण ।
जान लिया गुरु दयाल ने, जन अधिकारी शरण ॥ २२५७ख

देवी दयाल उन शरणि लीना, शक्तिपात कर मन्त्र दीना ।
साधन में उसको उन घाला, गुरु भक्त भया देवी दयाला ।
तन धन घर सब उस विसराया, गुरु सेवा में जीवन लाया ।
धारा एक ही उस यह लक्ष, गुरु सेवा बस रहत समक्ष ।
संगी साथी जो उस केरे, गुरु चरणी उस सभी परेरे ।
बहु संगी उस कीन एकत्र, सदा सेव में रहें जो तत्पर ।
दौड़ भाग सब करते काम, गुरु पायी जिमि सैना राम ।
सद्गुरु दयाल को मिले सहायी, देवी दयाल जो संगत लायी ।

दो० संगत देवी दयाल की, करे सकल मिल सेव ।
मिल गाना गाते सभी, जय जय जय गुरुदेव ॥ २२५८

ऐसी इच्छा उस मन जागी, योग प्रचार की लिव लागी ।
आश्रम एक स्वतन्त्र बनाऊँ, गुरु जी को वहां पर ले जाऊँ ।
जनता दर्शन कर ले उनका, भला होय जिस विध जन गण का ।
गुरु जी के जन सुनें विचार, योग का इस विध हो प्रचार ।

मिले हमें गुरु चरण की सेव, प्रसन्न भयें हम पर गुरु देव ।
आश्रम देवी दयाल बनाया, रोहतक नगरी में खुलवाया ।
कर कृपा वहां नाथ पधारे, जनता ने बहु विध सत्कारे ।
और भी आश्रम कुछ बनाये, करें योग जहां जन चित्त लाय ।

दो० योग करें जन आय कर, करें प्रभु का ध्यान ।
आश्रम में जन आयें जो, सब का हो कल्याण ॥ २२५९

इस विध भक्त बहु चरणि लागे, स्वामी जी के पग अनुरागे ।
सब जन के मन बहु विश्वास, स्वामी मुलख हम उनके दास ।
मुलख राज की कर सेवकाई, किस किस न बढ़यायी पाई ।
मुलखराज के चित्त प्रतीति, कारज प्रभु करें सब रीति ।
प्रभु भी देखें मुलख की रीत, जिस का लीन प्रभु पग चीत ।
करें करावें कारज सारा, चित्त उस का पर जग से न्यारा ।

२०. श्रीमती गुरु माता जी और श्री स्वामी मुलखराज जी का संवाद

गुरु माता भी आश्रम आवे, देख मुलख का काज सराहवे ।
गुरु माता कहे "मुलख प्यारे, प्रभु जी के तुम शिष्य दुलारे ।
प्रभु जी से जिमि हो साक्षात, हमें सुनावो तुम प्रिय तात ।

दो० प्रभु जी का कंह वास है, किमि भक्त मिल पायें ।
बहुरें गे कब नाथ अब, यह सकल बतलायें" ॥ २२६०

सुन कर गुरु माता की वाणी, अमृत रस से जो थी सानी ।
मुलख ने उन पग शीश झुकाया, और विनीत वचन कह पाया ।

"हे माता मैं तव हूँ बालक, जगत पिता प्रभु जग के पालक ।
उच्च हिमालय उन का वास, रहें वे अपने गुरु के पास ।
अलौकिक थल है वह मातारी, प्रभु की सृष्टि वहां बहु न्यारी ।
ध्यान में ही जन दर्शन पांय, पहुँच सकें न कोई उस थांय ।
ऐसा अनूप देश वह माई, जहां प्रभु जी समाधी लाई ।
उस देश के सकल निवासी, वयोवृद्ध वा प्रभु विश्वासी ।
उन के देव महाप्रभु हमारे, और प्रभु को मानें सारे ।

दो० ऐसे देश अनूप में, रहें प्रभु इस काल ।
दया नाथ की मात मम, दिखलायें सब हाल ॥ २२६१

सद्गुरु पास प्रभु जी रहते, शिष्यन का भी क्षेम हैं वहते ।
श्रद्धा से जो उन को ध्याते, उन को दर्श प्रभु दिखलाते ।
संकट में जो उन्हें पुकारे, बहुरें उस के नाथ द्वारे ।
उन तक पहुँच न हम जन पावें, सब के संग वे रह दिखलावें ।
हे माता वे संग हमारे, देख सकें न उन को सारे ।
उन का लौटन माता जानो, महा प्रभु पर निर्भर मानो ।
मन मानी न शिष्य कर पावे, चाहे योगेश्वर वह हो जावे ।
प्रभु तभी यहां लौट के आवें, सद्गुरु का जब इंगित पावें ।

दो० सद्गुरु के आदेश से, ही लौटें गे नाथ ।
प्रभु का हो जब लौटना, सब जन होंय सनाथ" ॥ २२६२

२१. श्रीमती गुरु माता जी का देह त्याग और श्री स्वामी मुलखराज का जनता को ज्ञानोपदेश

गुरु माता सुन सोचन लागी, "हे नाथ मैं परम अभागी ।
दीर्घ काल मैं विरह बिताया, प्रभु लौटें यह सुन मैं पाया ।
बारह वर्ष इस आस बिताये, विरह और न अब सहा जाये ।
स्वामी अब मम यह अरदास, बुला लो मुझ को अपने पास ।
मैं भी वन वासी हो जाऊँ, संग पति वन में रह पाऊँ ।
यहां एकाकी हूँ बेहाल, स्वामी मम तुम जानो हाल ।
निमानी मैं तो करूं पुकार, मेरी विनती हो स्वीकार ।
मेरी अब बस यह अरदास, ले चलें मुझे अपने पास ।
मैं बनूं नहीं कुछ भी भार, तव कुटिया की करूं बुहार ।
जल भर कर भी मैं ले आऊँ, छुट पुट सेव कर्म कर पाऊँ ।

दो० सेव धर्म में मैं लगूं, जगद्गुरु भरतार ।
अन्तर्यामी आप हैं, सुनिये मम पुकार ॥ २२६३क
आर्त हृदय से कथ रही, अपनी आर्त पुकार ।
आर्त हरो मम नाथ जी, आर्त हरण करतार ॥ २२६३ख
आप सरीखे नाथ को, पा कर हे भगवान ।
बारह वर्ष व्यतीत हैं, विरह का है न हान ॥ २२६३ग

कथन करो मम हे भरतार, और करूं मैं किधर पुकार ।
पति वृता मैं यदि हूँ नार, पातिवृत यदि लीना धार ।
मम सेवा तब कर स्वीकार, राखो निज चरणी भरतार ।
यदि जानो मुझ में कुछ दोष, भेजो नरक में कर के रोष" ।
इस विध कथ तब मन भर आया, विलप विलप कुछ चैन न पाया ।

सब जग की जो सुनें पुकार, भूल सकें किमि निज प्रभु नार ।
प्रकट भये तब उसके सन्मुख, और कहा फिर हो कर बेमुख ।
सुभद्रे भूली तू निज रूप, आदि शक्ति है तव स्वरूप ।
जब जब जग में लूं अवतार, तू मम संगी रहे हर बार ।
हो तुम अन्त में मम देह लीन, हमारा संग यह नहीं नवीन ।
हम ने अब लीना वन वास, रह सको नहीं हमरे पास ।
आदि रूप कर के स्वीकार, लय करिये अब रूप साकार ।

दो० विलय तुम्हारा भामिनी, होगा जब मम देह ।
विसर सकल तब जायगा, देह गेह का नेह ॥ २२६४

स्वामी का सुन कर आदेश, सुभद्रा लायी देर न लेश ।
अपना आदी रूप ध्याया, देह त्याग प्रभु चरण समाया ।
एक विलक्षण हुआ उजाला, तेज से भर गई सारी शाला ।
प्रभु भक्त जो थे वहां पास, देख अचंभित भये वे खास ।
यह अलौकिक तेज है कैसा, देखा हम ने कभी न जैसा ।
सूरज का नहीं यह उजाला, नहीं अग्नी की यह ज्वाला ।
चांद की किरण भी हो न ऐसी, यह ज्योति है प्रकटी जैसी ।
कुछ पल जोत प्रकट दिखलाई, तुरन्त वहीं पै पुनः समायी ।

दो० कैसी अद्भुत जोत यह, शीतल शांत सुरूप ।
दीख पड़ी इस भवन में, यह बहु घटन अनूप ॥ २२६५

इस विध कथन करत थी नार, जो बैठीं गुरु मात द्वार ।
एक कहत यह अद्भुत बात, देखी ज्योति जो हम साक्षात ।

दूसर कहत हे बहन प्यारी, प्रभु की महिमा बहुत न्यारी ।
चमत्कार नित होते देखें, प्रभु कृपा प्रतिपल हम पेखें ।
अन्य कहे कर सबन सचेत, समाधि में गुरु मात अचेत ।
कर के प्रभु को मनहिं स्मरण, उन के ग्रहण करें हम चरण ।
सब नारिन जब जा कर देखा, देह प्राण के बिन ही पेखा ।
चोट लगी सब के मन ऐसी, विद्युत पात भयी हो जैसी ।
मौन धार वे ठारीं ऐसे, प्राण बिना जिमि सब हों जैसे ।

दो० प्राण बिना जिमि सकल हों, ऐसा उन का हाल ।
देख द्रौपदी ने कहा, जानूं प्रबल है काल ॥ २२६६क
अथवा भाना नाथ का, काल के भी जो काल ।
त्यागे समाधि प्राण हैं, गुरु माता इस काल ॥ २२६६ख
ज्योति प्रकटी बिमल जो, इस का सूक्ष्म रूप ।
ज्योति ज्योत समा गई, दर्शन मिले अनूप ॥ २२६६ग

गुरु मां ज्योति ज्योत समायी, प्रकट भई थी दिव रोशनायी ।
पढ़ा सुना न कहीं पै देखा, चमत्कार जो है यह पेखा ।
मुलख राज को लेय बुलाओ, भक्तन को सन्देश पहुँचाओ ।
राम नाम की ध्वनि उठाओ, धन्य धन्य गुरु मां कह पाओ ।
बिछुड़ गई है मात प्यारी, जग जननी जो जग से न्यारी ।
इमि कह उसका दिल भर आया, नयनों से कुछ नीर गिराया ।
सब के नयन तब भये सनीर, जाये कथी न चित्त की पीर ।
जय जय ध्वनि तब सबन उठाई, आ पहुंची बहु जन समुदायी ।

दो० आ पहुँचे बहु भक्त जन, पा अप्रिय सन्देश ।
गुरु माता के निधन का, जग में शोक विशेष ॥ २२६७

मुलख राज भी आन पधारे, मात निधन सुन अति दुखयारे ।
आय सबन के संग विराजे, राम लाल के प्रिय जो राजे ।
तीस वर्ष जो देय दुलार, आज गयी वैकुण्ठ सिधार ।
उस माता को कर कर याद, मुलख राज चित्त शोक अगाध ।
उन की तत्क्षण लगी समाध, माता के कर प्यार को याद ।
प्रभु जी ध्यान में आन उठाया, लौकिक कर्म करिये कह पाया ।
मुलख राज तब भये सचेत, सकल कर्म करने के हेत ।
सब जनता को कर संबोध, दिया सबन को सुन्दर बोध ।

दो० जनता को संबोध कर, कहा मुलख जी राज ।
दिव्य प्रभु के लोक को, जग जननी गई आज ॥ २२६८क
तप की थी इक मूरती, योगेश्वर की नार ।
बढ़ कर अपनी मात से, कीना हम से प्यार ॥ २२६८ख

गुरु माता थी जग मातारी, प्रभु जी की निज शक्ति न्यारी ।
प्रभु चरणों की वह अनुरागी, अलौकिक लिव उस के मन लागी ।
ब्रह्मा की जिमि है ब्रह्माणी, विष्णु संग लक्ष्मी महारानी ।
शिव पै शिवा जिमि अनुरागी, गुरु माता तिमि प्रभु पग लागी ।
प्रभु जब वन में योग कमाया, उसने घर में तप कर पाया ।
बस्तिन में जब प्रभु पग पाया, सेव धर्म तब इस अपनाया ।
ईश्वर रूप निज पति को जाना, पतिव्रत धर्म बहु कर माना ।

प्रभु के भक्त जो आये द्वारे, निज सुत सम सब को सत्कारे ।
भेद भाव न चित्त में लाया, सब सन सम उस नेह दिखाया ।

दो० गुरु माता के चित्त में, भेद भाव न लेश ।
दर्शन कर गुरु मात के, मिटते सकल क्लेश ॥ २२६९

गुरु माता के क्या गुण गायें, शब्द नहीं जो कथ दिखलायें ।
इन सम तीन लोक में नाहीं, देव सकल इन के गुण गाहीं ।
राम लाल प्रभु भगवद्रूपा, गुरु माता थी शक्ति स्वरूपा ।
आज जगत से कीन किनार, पति के लोक को गई सिधार ।
जब तक जग में सूरज तारे, स्मरण करें इन को जन सारे ।
पति ही नारी के भगवान, सिखलाया इन जग में आन ।
सावित्रि सीता व अनसूया, अथवा जगमाता शिव प्रिया ।
उन सम इनका पावन नाम, कोटि कल्प तक रहे संग राम ।

दो० स्मरण करे जग राम को, संग सुभद्रा मात ।
सुभद्रापति इमि सब कहें, भक्त प्रभु को तात ॥ २२७०

सब मिल कर प्रभु के गुण गावो, शास्त्रोक्त सभी कर्म करावो ।
प्रभु को मानुष न तुम मानो, शक्ति रूपा गुरु माता जानो ।
इनके रूप हृदय में धार, करो करावो उच्चितकार ।
काक भुषुण्डि इनका यश गाया, त्रेता युग उस ग्रन्थ लिखाया ।
पढ़ सुन कर यह मिलता ज्ञान, सुभद्रा शक्ति राम भगवान ।
इनका जन जो करत ध्यान, प्राप्त करत वह परम ज्ञान ।
भुषुण्डि की लो बात को मान, प्रभुओं के प्रभु राम भगवान ।

गुरुओं के वे सद्गुरु दयाल, निहाल करें जन को तत्काल ।

दो० प्रभुओं के प्रभु राम हैं, गुरुओं के सद्गूर ।
शरण गहे जन दीन जब, मनोकाम हों पूर ॥ २२७१क
प्रभु अवतारी जान लो, होय न मानुष भाव ।
आदि शक्ति गुरु मात है, रहे सदा सद्भाव ॥ २२७१ख
राम आयें जब जगत में, धर्म हेत मम मीत ।
शक्ति उन संग बसत है, यही सनातन रीत ॥ २२७१ग

राम जनक जगती के जानो, सुभद्रा को जग मां पहचानो ।
राम योग का दिव्य स्वरूप, सुभद्रा अलौकिक शक्ति रूप ।
राम विष्णु का दिव्य स्वरूप, सुभद्रा लक्ष्मी नार अनूप ।
राम जानो शिव सम भगवान, सुभद्रा जनु पुत्री हिमवान ।
इस विध मन में अब सब धार, शोक का दें हम त्याग विचार ।
गुण गाथा प्रभु जी की गाएं, गुरु माता के गुण कथ पाएं ।
अन्तिम कर्म की करें तय्यारी, हम सब को बहु मात प्यारी ।
इस विध मुलख राज कह पाया, शोक में मग्न उठा समुदाया ।

दो० शोक मग्न तब उठ गये, नर नारी प्रत्येक ।
शव यात्रा भी चल पड़ी, लेय प्रभु की टेक ॥ २२७२

शव यात्रा में भीड़ अपार, शोक मग्न थे सब नर नार ।
प्रभु के भक्तन का समुदाय, देव भी उन में मिले थे आय ।
सब ने मां को शीश झुकाया, प्रभु का रूप हृदय में ध्याया ।
प्रभु जी रूप दिव्य में आये, पत्नी के उन कर्म कराये ।

धन्य धन्य सब देव बखानें, प्रभु का दिव्य रूप सन्मानें ।
धन्य धन्य प्रभु विश्वाधार, शरणागत का करें उद्धार ।
इक बार भी जिस प्रभु ध्याया, निज जीवन उस सफल बनाया ।
प्रभु की शरण बहु गुणकारी, प्रभु की शरण जग नौका भारी ।

दो० शरण प्रभु की ग्रहण कर, लागें भव से पार ।
क्लेश व्यापें ना कभी, सब के प्रभु आधार ॥ २२७३क
उचित क्रिया कर सभी, आये चल तब वास ।
मुलख राज को देख कर, बैठे उन के पास ॥ २२७३ख
एक भक्त ने विनय करि, कही मुलख से बात ।
स्वामी हमें बताइये, मर जीव कहां जात ॥ २२७३ग

मृत्यु का दृश्य जब दिख पाये, प्रश्न तभी यह मन में आये ।
क्षण भंगुर घटवत संसारा, अगले पल का नहीं सहारा ।
अचरज की यह बात महान, नित्य मरते हैं बहु इंसान ।
फिर भी मृत्यु से डर पायें, और चाहें अमर हो जायें ।
भव में डूबत सब ही जायें, डूबत की बांह डूबत ग्राहें ।
जिस भी वस्तु पे कर विश्वास, राखें जिस को दृढ़ कर पास ।
वह भी काल का भये ग्रास, सब को नाश होय इमि आस ।
जग को नाशवान सब देखें, मृत्यु के वश सब जग पेखें ।
मर कर जायें कहां हम नाथ, सुन पायें यह आप से गाथ ।

दो० दिव्य दृष्टि है आप ने, योग से पाई देव ।
योगी पाये भेद को, सद्गुरु की कर सेव ॥ २२७४

जग तो है यह सराय समाना, लगा यहां है आना जाना ।
कल आया उस आज है जाना, आज आया उस कल चलि जाना ।
ऐसी तांत लगी दिन रात, कहां से आत कहां चलि जात ।
यह भेद हमें आप बतावें, कर किरपा जिज्ञास पुजावें ।
मरि कर जीव कहां चलि जाता, और किधर से जग में आता ।
श्रवण करी जब उस की वाणी, सोचा तभी गुरु महादानी ।
यह जिज्ञास अनादि चलि आई, गुरु कृपा से शांत हो जाई ।
सोच विचार से न मिट पावे, गुरु कृपा से ही शांति आवे ।
फिर भी इस को मैं समझाऊँ, जिस विध समझ सकें बतलाऊँ ।

दो० इस विध मनहिं विचार कर, कहा मुलख महाराज ।
प्रश्न तुम्हारा शुभ है, समझाऊँ मैं आज ॥ २२७५

यह जिज्ञास अनादि भाई, भाग्य से ऐसी बुद्धि पाई ।
यह बुद्धि जिज्ञास कहलावे, जिज्ञासु ज्ञान का मार्ग पावे ।
जिज्ञास अनादि पथ अनन्त, धीर पुरुष चाहे पाना अन्त ।
अनन्त के मग का है न अन्त, जाने विरला योगी सन्त ।
जिज्ञासु जब गुरु योगी पाये, गुरु मग योग पै उसे लगाये ।
दीर्घ काल जो योग कमाये, ज्ञान भूत भविष्य का पाये ।
कहां से आया वा है जाना, मिले योगी को स्पष्ट ज्ञाना ।
पर यह बात स्पष्ट लो जान, माया ने बुद्ध कीन म्लान ।
मोह माया जब तक रह पावे, निर्मल बुद्ध न हो दिखलावे ।

दो० मोह माया जब तक रहे, पुरुष न योगी होय ।

योग समाधि के बिना, ज्ञान न पाये कोय ॥ २२७६

सुन कर सद्गुरु की यह वाणी, जिज्ञासु ने तब बात बखानी ।
नाथ माया का मोह किमि जाय, और नर योगी किमि बन पाय ।
कर किरपा सन्मग बतलावें, मूढ़ मति हम ज्ञान को पावें ।
स्वामी जी तब मन अनुमाना, इस को दूं मैं स्पष्ट ज्ञाना ।
सरल बात जो समझ यह पाये, और उसे व्यवहार में लाये ।
कही सज्जन से तब यह बात, माया जग में व्यापक तात ।
जीव को बंधन में यह डाले, तृष्णा डोरी हाथ संभाले ।

दो० तृष्णा की दृढ़ डोर है, माया व्याधन हाथ ।
बांध लेत निज पाश में, तड़पे जीव अनाथ ॥ २२७७क
तृषण डोर त्रितार की, माया स्वयं बनाए ।
तार एक यदि शिथिल हो, दूसर आ लिपटाए ॥ २२७७ख

सुन कर नाथ का यह उपदेश, भक्त ने पूछा हे अखिलेश ।
माया हाथ जो तृष्णा डोर, किमी सके नर उस को तोड़ ।
उसकी तीन तार कही नाथ, कौन तार कथ करें सनाथ ।
जिस पर किरपा आपकी नाथ, माया त्यागत उसका साथ ।
माया के न होय अधीन, शरण पड़े जो आप की दीन ।
माया के त्रयतार स्वामी, उन्हें बतावें अन्तर्यामी ।
सद्गुरु सुनी भक्त की बात, और कहा सुन लो मम तात ।
पाश विकट माया के हाथ, तीन तार मैं कहूँ इक साथ ।
तार एक पुत्रेषणा जानो, वित्तेषण तुम दूसर मानो ।

तीसर है लोकेषण मीत, लीना इन सब जग को जीत ।

दो० ये तीनों हैं ईषणा, तृष्णा की जो डोर ।
माया के यह हाथ में, कौन सके वह तोड़ ॥ २२७८

जब तक रहे तृष्णा मन मांहि, चित्त जानो माया वश आंहि ।
आत्म ज्ञान न उसको होवे, मोह की मूर्छा में वह सोवे ।
माया मन का परिग्रह जानो, आछादित जिस से आत्म मानो ।
इस रहस्य को जो जन जाने, तृष्णा त्याग योग सन्माने ।
सद्गुरु की वह शरणी जाये, श्रद्धा से गुरु सेव कमाये ।
जग की वस्तु न लागे प्यारी, योग में घाले ज़िन्दगी सारी ।
मन का कमल जभी खिल पावे, जिज्ञास पूर्ण तभी हो जावे ।
जाने भूत भविष्य की बात, जीवन के भी रहस को तात ।
कहां से आया कहां है जाना, उस योगी को मिले यह ज्ञाना ।

दो० पूछी बात जो आप ने, मैंने दीनि बताय ।
जीवन घाले योग में, वह रहस्य को पाय ॥ २२७९क
बिन योग नहीं मिलत है, ऐसा सूक्ष्म ज्ञान ।
मृत्यु के इस रहस्य को, योगी पाये पुमान ॥ २२७९ख

सब जनता को मिला प्रमाण, योग बिना नहीं होता ज्ञान ।
योगी मिले तो योग करावे, योग साध जन ज्ञान को पावे ।
राम लाल योगेश्वर आये, मुलखराज योगी बन पाये ।
मुलख से जन हैं पा रहे ज्ञान, मुलखराज गुरु देव महान ।
मुलख राज जी जग में सारे, योगेश्वर की महिम प्रचारे ।

अनेकों योगी मुलख बनाये, नर नारी सन्मग पर लाये ।
मुलख राज कहें शिष्यन ताहीं, प्रचारो योग जगत के माहीं ।

२२. श्री प्रभु जी की आज्ञा से होश्यारपुर में योग साधन आश्रम की स्थापना और दिव्य योग प्रचार

'सेवक' को भी आज्ञा दीनी, शिरोधार्य जो उस ने कीनी ।
होश्यारपुर इक लीन स्थान, योग का बीज पड़ा वहां आन ।
स्वयं प्रभु जी आन पधारे, और रहस्य बताये सारे ।
जिन को लेख में हम न लायें, बातें गुप्त गुप्त रह पायें ।

दो० प्रभु जी ने खुद आन कर, दिव्य दीन आशीश ।
योग साधना जन करें, बसें यहां पर ईश ॥ २२८०

सद्गुरु मुलख राज महाराज, संकल आरंभा उन ही काज ।
ईस्वी सन उन्नीशत बावन (१९५२), शुभ मुहूर्त शुभ घड़ी पावन ।
प्रभु जी आश्रम शुभ बनवाया, इस नगरी में योग चलाया ।
यह नगरी प्रभु को है प्यारी, धर्म कर्म जहां होता भारी ।
सन्त महात्मा फेरा पावें, जनता को उपदेश सुनावें ।
भजन पाठ के जन अनुरागे, नेम धर्म को न कोई त्यागे ।
पर्वतराज के पग में छायी, किम्मि वर्णों बहु सुन्दरतायी ।
बावली ताल बने सुहाने, मन्दिर जिन के तटहिं लुभाने ।
बहती चोह नदी इस संग, वर्षा काल जो लाती रंग ।
सुन्दर दृश्य प्राकृत भारी, चहुँ दिक खेतों की हरियारी ।

उत्तर को जब दृष्टि जावे, पर्वत श्रेणी से टकरावे ।
समतल अन्य दिशायें सारी, चलें ट्रैक्टर भारी भारी ।
लाखों यात्री यहां पर आवें, माता के जो धाम को जावें ।
योगी बाबा बालक नाथ, उस भी कीन यह भूम सनाथ ।
उस के भी जन धाम को जावें, बाबा की जय कार बुलावें ।

दो० ऐसी प्यारी भूमि यह, सिद्धों का इस्थान ।
सुमेरु से प्रभु आय कर, इसे कीन प्रवान ॥ २२८१

इस नगरी के चारों ओर, फल लगे हैं ठोर ही ठोर ।
पक्षी गण जहाँ चहचहाते, रक्षक उन्हें चिल्ला उड़ाते ।
इन बागों में कुटिया छाईं, सन्तों के जो बहु मन भाईं ।
सन्त करें जहां ईश्वर भक्ति, त्याग जगत से सब अनुरक्ति ।
ऐसा पावन नगर सुहाया, होश्यारपुर प्रभु योग चलाया ।
जनता ने बहु आदर दीना, योग शिक्षा का मान उन कीना ।
बाल युवा व वृद्ध बहुतेरे, नर नारी सब आयें सवेरे ।
आश्रम में आ शिक्षा पायें, तन मन के सब कष्ट दुरायें ।

दो० तन मन के जो कष्ट हों, साधक आन बतांय ।
योग साधन को सीखें, रोग समूल नसांय ॥ २२८२क
आसन नेति धौति को, करते साधक आन ।
करते जीवन तत्व को, कच्ची सब्जी खान ॥ २२८२ख

जीवन तत जन आ कर करते, निज तन को वे पुष्ट हैं करते ।
दुर्बलता को दूर भगायें, प्रभु चरणों का ध्यान लगायें ।

जीवनतत्व जो प्रभु सिखाया, जनता ने बहु लाभ उठाया ।
अति स्थूल जो काया भारी, वात व कफ से पीड़ित सारी ।
जीवन तत्व से होत नीरोग, ऐसा प्रभु सिखाया योग ।
जन की होय यदि दुर्बल काय, अस्थी पंजर ही दिखलाय ।
जीवन तत्व से होत स्थूल, बताया प्रभु जी दिव्य असूल ।
सबल निरोग रहे जिमि काया, ऐसा प्रभु जी योग बताया ।
प्रभु जी का उपकार महान, कर सके किमि कोई बखान ।

दो० प्रभु जी के उपकार को, बखान करे किमि कोय ।
जीवन तत्व जन जो करे, जीवन पावे सोय ॥ २२८३

अनेकों रोगी भये निरोग, जन गण ने जब कीना योग ।
सन्मारग जनता ने पाया, ध्यान के मग पर प्रभु लगाया ।
चित्त भया प्रभु पग अनुरागी, योग भक्ति की लिव बहु लागी ।
उमड़ उमड़ कर जन चलि आवें, प्रभु प्रतिमा को शीश झुकावें ।
प्रभु प्रतिमा से सब की प्रीत, सब का लागा प्रभु पग चीत ।
प्रभु पग भक्ति बढ़ी सब माहीं, प्रभु राम मुलख के गुण सब गाहीं ।
मन में सब के भाव ये आवें, मुलख राज चरण यहां पावें ।
जनता ने तब लिख भिजवाया, अपने मन का भाव बताया ।

दो० जनता ने तब लिख दिया, गुरु देव महाराज ।
जनता प्यासी दर्श की, कीजो कृपा आज ॥ २२८४क
मुलखराज महाराज ने, विनय कीन स्वीकार ।
उत्तर में उन लिख दिया, आंय अमुक हम वार ॥ २२८४ख

सद्गुरु का जब उत्तर आया, हर्ष से सब का मन खिल पाया ।
भक्त मिलें इक दूजे ताईं, चित्त में हर्ष भरे हुलसाईं ।
कहें दिन कुछ में सद्गुरु आवें, उन के दर्शन हम सब पावें ।
आठों पहर सद्गुरु गुण गावें, स्वपने में भी दर्शन पावें ।
भाग्य भरे इस नगर के लोग, मिला जिन्हें यह दिव्य सुयोग ।
गुरु की प्रीत उपजी मन मांहि, योग की लिव लागी तिन तांहि ।
गुरु योगी आवें इस नगरी, योग को सीखे जनता सिगरी ।
ऋषियों की यह भूमि पावन, लोग करें यहां योग सनातन ।

दो० योग सनातन धर्म है, भूल गये जब लोग ।
उन के मन माया बसी, ग्रसा तभी मन सोग ॥ २२८५

धर्म की नगरी में न योग, भूल गये हैं योग को लोग ।
देख दया सद्गुरु को आयी, यह नगरी गुरु जी अपनायी ।
महाप्रभु की इच्छा जानी, प्रभु की आज्ञा भी उन मानी ।
मन में दया तभी उन लायी, होश्यार पुर नगरी अपनायी ।
सद्गुरु दया पायें सब लोग, इस नगरी को मिला सुयोग ।
इस नगरी के भाग्य महान, सद्गुरु दयाल कीन प्रवान ।
भाग्य भरा तब दिन चलि आया, सद्गुरु दर्शन सब ने पाया ।
बहु विध जनता स्वागत कीना, झुक झुक आशिष सब ने लीना ।
झुक झुक जनता कीन प्रणाम, जन गण सब भये पूरण काम ।

दो० आज जनता की कामना, पूर्ण भयी सम्पूर्ण ।
गुरु चरणों को निरख कर, रही न साध अपूर्ण ॥ २२८६

जिस क्षण सद्गुरु आश्रम आये, देवों ने भी पुष्प बरसाये ।
आश्रम की यह पावन भूम, सद्गुरु चरण लिये उस चूम ।
कन कन तल का हर्षित भारी, निरख चरणों की छवि न्यारी ।

२३. होशयारपुर में श्री सद्गुरु स्वामी मुलखराज जी महाराज का योग उपदेश—सूर्य ध्यान और चन्द्र ध्यान की विधि और उसका फल

आश्रम की सुन्दर फुलवारी, लागी सद्गुरु को वह प्यारी ।
ग्रहण किया जब सद्गुरु आसन, पुष्प भेंट लाये बहु जन गण ।
भक्ति भाव से कीन समर्पण, निज तन कीन सेव में अर्पण ।
सद्गुरु ने सन्तोष जताया, भक्तन हित उपदेश सुनाया ।
सद्गुरु सुन्दर कीन बखान, ऋषि मुनियों की हे सन्तान ।
जिस भूमि की हम सन्तान, भारत भू वह शुद्ध महान ।

दो० भारत परम पवित्र है कृष्ण चन्द्र का देश ।
जिस ने सारे विश्व को, दिया ज्ञान उपदेश ॥ २२८७क
उसी देश के पतन को, देखे जगत निःशेष ।
आज जहां न मनुज में, सदाचार का लेश ॥ २२८७ख

जहां पै यज्ञ हवन थे होते, वेद पाठ के बहत स्रोते ।
जहां पै साम गान गुंजाता, शास्त्रों का उदगम हो पाता ।
वसिष्ठ पातंजल जिस उपजाये, अर्जुन भीष्म जहां हो पाये ।
राम ने लीना जहां अवतार, चले जो धर्म की तीखी धार ।

बार बार जहां प्रकटे राम, आज देश वह भया गुलाम ।
विषयासक्त भये हैं लोग, भूल गये सब कृष्ण का योग ।
अपना रूप विसर जो जाये, वह जाति नहीं सुख को पाये ।
भारत ने निज रूप भुलाया, परतन्त्र हो दुःख बहु पाया ।

दो० भूल के अपने रूप को, सुप्त भये जो जीव ।
रक्षा कैसे कर सके, मुर्दे सम निर्जीव ॥ २२८८क
जब जागे वह नींद से, जाने अपना रूप ।
यत्न तभी वह कर सके, रक्षा हेत अनूप ॥ २२८८ख
इस कारण हे भक्त गण, उत्तम यही ज्ञान ।
त्यागो मोह की नींद को, मुनियों की सन्तान ॥ २२८८ग

मोह की निद्रा को अब त्यागो, प्रभु बुला रहे हैं तुम जागो ।
राम लाल हैं रहे पुकार, धारा पारब्रह्म अवतार ।
उस प्रभु की शरण में आ कर, योग करो तुम सब मन ला कर ।
योग से आत्म रूप लखाय, मोह माया से जन बच पाय ।
योग की हम कुछ बात बतायें, शिक्षा प्रभु जी से ले पायें ।
चित्त एकाग्र जब हो भाई, समझो योग की कौन कमाई ।
एकाग्र मन में शक्ति भारी, यह जानत है जनता सारी ।
गुरु जब जन को योग सिखावे, मन एकाग्रता को ग्राहवे ।

दो० गुरु सिखलावे योग जब, होय एकाग्र चित्त ।
शक्तिशाली जन बने, डरे न किसी निमित्त ॥ २२८९क
कर्म करे वह धर्म युत, होय न कभी हताश ।

न्याय के मार्ग पर चले, गुरु पै रख विश्वास ॥ २२८९ख

जिस वस्तु पै ध्यान लगावें, आकर्षित उस के गुण कर पावें ।
यह योग की समझ लो रीत, अभ्यास करो तब हो प्रतीत ।
उत्तम ध्यान से हो कल्याण, अधम ध्यान से हो दुःख जान ।
मन के सन्मुख जो रह पावे, उस के गुण ही मन अपनावे ।
हम बतलावें एक ध्यान, मन का हो जिमि दूर म्लान ।
शक्तिशाली मन हो पावे, ज्ञान पावे व पाप दुरावे ।
सूर्य देव का करिये ध्यान, सृष्टी का जो दीप महान ।
सूर्य से शक्ति प्रति कण पावे, चित्त को भी सशक्त बनावे ।
इस रहस्य को ऋषियन जाना, सावित्री मन्त्र वेद बखाना ।

दो० गायत्री मन्त्र जान लो, वेदन कीन बखान ।
कर सूर्य के ध्यान को, पुरुष बने धीमान ॥ २२९०क
मन के सन्मुख सूर्य का, सदा रहे प्रकाश ।
काम क्रोध व मोह दुःख, इन का होय विनाश ॥ २२९०ख

सूरज का जब करते ध्यान, देह तेजस्वी बने महान ।
नस नाड़ी के दोष नशावें, रोग सकल भी क्षय हो जावें ।
मस्तक में इमि करे जो ध्यान, उपजे बुद्धि में बहु ज्ञान ।
स्मरण शक्ति उस की बढ़ जावे, दिव्य ज्ञान को जन वह पावे ।
मन पाये बन सशक्त महान, संकल्प की शक्ति हो बलवान ।
जग को वश में वह कर पाये, सूरज को दृढ़ कर जो ध्याये ।
प्राणायाम के संग जो ध्यान, उस का भी अब देवें ज्ञान ।

दाहिने नाक से खींच श्वास, देख नाभि में सूर्य प्रकाश ।
बायीं नाक से उसे निकाले, ध्यान में पर न बाधा डाले ।

दो० श्वास संग जो ध्यान यह, इसका लाभ महान ।
बुद्धि होय तेजस्विनी, देह बने बलवान ।। २२९१क
देह बने बलवान यह, रोग सकल हों दूर ।
श्वास, कास, क्षय रोग सब, इस विध हों निर्मूल ।। २२९१ख

पाचन अग्नी बढ़े इस रीति, रक्त शोध की उत्तम नीति ।
नस नाड़ी का होवे शोध, चित्त में हर्ष का हो प्रबोध ।
मन की चंचलता हो दूर, मुख पै प्रकटे दिव्य इक नूर ।
सृष्टि में जिमि सूर्य लसावे, जगती उस से जीवन पावे ।
तिमि तन में जब सूर्य ध्यावो, जीवन में उल्लास को पावो ।
मन्दाग्नी और वायु रोग, दूर भयें जन भये नीरोग ।
इस विध स्वामी जी समझाया, जनता ने बहु ज्ञान को पाया ।
धन्य धन्य सब जन कह पाये, चरणों में उन शीश झुकाये ।

दो० धन्य धन्य सब जन कहें, गदगद होय महान ।
सरल योग की सीख को, दीना सद्गुरु आन ।। २२९२क
स्वामी जी ने फिर कहा, सुनो सभी ला कान ।
चन्द्रमा का यहां कहें, किस विध करते ध्यान ।। २२९२ख
चन्द्रमा का ध्यान करत, ध्यानी होय निरोग ।
अमृत रस देह में बहे, गुरुमुख गहे सुयोग ।। २२९२ग

तालु मध्य जन करता ध्यान, चन्द्रमा का सदैव सुजान ।

अमृत रस उस से बह पावे, देह में नूतन जीवन आवे ।
महसूस करे इमि मन के मांहि, चांद की ज्योति शरीर समांहि ।
अमृतमय प्रकाश स्वरूपा, जन को निज उद्भासे रूपा ।
प्राणायाम के संग ध्यान, करने की भी विध लो जान ।
बाईं नाक से खींचो प्राण, संग में चन्द्रमा का ध्यान ।
यह भी चित्त में धार विचार, ज्योत्सना का तन में प्रसार ।
दायीं नाक से सांस निकालो, अन्तर का मल इमि धो डालो ।

दो० इस विध चित्त लगाय कर, करे जो अमृतपान ।
तन मन के जो रोग हों, दूर भयें सब जान ॥ २२९३क
चन्द्र मौली नाम जो, शिव का है विख्यात ।
इसी योग के कारणे, कहते ऐसा तात ॥ २२९३ख
चांद के ही प्रभाव से, विष को कीना पान ।
विष ने अपना खो दिया, मारन असर महान ॥ २२९३ग
गल में नीला दाग जो, विष का वही निशान ।
नीलकण्ठ इस से कहें, शिव को सब विद्वान ॥ २२९३घ

इस विध सद्गुरु जी समझाया, आगे फिर उपदेश सुनाया ।
प्रभु जी के हे भक्त प्यारो, चरण प्रभु के नित सत्कारो ।
अन्तर में दृढ़ धरिये ध्यान, जगदाधार प्रभु को मान ।
सूर्य बिंब में प्रभु को देखो, चांद के मण्डल में भी पेखो ।
प्रकाशों के प्रकाश स्वरूप, अलौकिक उन का दिव है रूप ।
दिव रूप जो इस विध ध्यावे, भव बाधा से वह बच पावे ।

देह रोग न व्यार्पे उसको, ज्ञान मिले अन्तर में तिस को ।
ऐसा लाभ वही जन पावे, योग में जिस को गुरु लगावे ।

दो० गुरु योगी को पाय कर, करता है जन योग ।
विरले जन को जगत में, ऐसा मिले सुयोग ॥ २२६४क
करो निरन्तर योग तुम, गुरु किरपा को पाय ।
योग बिना नहीं जगत का, अवागमन नसाय ॥ २२६४ख
चित्त एकाग्र जब भये, दिव्य रूप में मीत ।
योग युक्त तब जानिये, उस जन का तुम चीत ॥ २२६४ग
दिव्य रूप में चित्त का, टिकना है दुश्वार ।
विषयासक्त जब मन रहे, जन बहे मंझधार ॥ २२६४घ

गुरु कृपा जब जीव पैं होवे, विषयों से चित्त मुक्ति गोवे ।
गुरु चरणों में उपजे प्रीत, योग धर्म में होय प्रतीत ।
दैवी लक्ष्य जो गुरु बतावे, इकाग्रता उस में मन लावे ।
चित्त रहे दिव्य रूप में लीन, विषय की वासन होवे क्षीन ।
अन्तर्मुख जब मन हो जावे, सहज न बहिर्मुखी हो पावे ।
गुरु कृपा से सत्य लखावे, द्वंद्व जाल उस का कट जावे ।
गुरु कृपा सम नहीं कुछ और, इस से मिलता मोक्ष का ठौर ।
निज अनुभव मैं यही बखानूं, गुरु किरपा सर्वोत्तम जानूं ।
मुझे मिले जब सद्गुरु भाई, तभी कृपा मुझ पर हो पाई ।
लोक परलोक के वाली नाथ, पा उन को मैं भया सनाथ ।
मैंने सद्गुरु जब से पाया, देह बिसरा संसार भुलाया ।

दो० विसरा देह व गेह मुझे, वृत्ति भयी थी क्षीण ।
कर्म जगत के करत भी, चित्त प्रभु में लीन ॥ २२९५क
हाटी पर मैं बैठता, करता सारे काम ।
दृष्टि रहती बन्द थी, मन में सद्गुरु राम ॥ २२९५ख
श्रवण करी जब नाथ से, भक्त जनों ने बात ।
विस्मित सारे हो गये, सुन अद्भुत साक्षात ॥ २२९५ग

२४. श्री स्वामी जी द्वारा औकाड़ा मण्डी जाकर समाधि अवस्था में ही मक्की खरीदने का निज अनुभव वर्णन करना ।

नाथ ने आगे तब बतलाया, अपना अनुभव उन्हें सुनाया ।
मम पिता कहा मुलख हे राज, जा ओकाड़ा मण्डी आज ।
यह रुपये भी तुम ले जाओ, खरीद वहां से मक्की लाओ ।
अमुक सेठ के जाना पास, उस को दे देनी यह रास ।
तेरी करेगा वही सहाय, बिल्टी देगा तुझे बनाय ।
धन दीना मम जेब में डाल, रेल गाड़ी पै कीन सवार ।
प्रभु चरणों से चित्त लिपटाय, मैं बैठा गाड़ी में जाय ।
देह की सुध थी मैं भुलाई, थी वृत्ति प्रभु चरणि समाई ।

दो० प्रभु चरणों में मैं पड़ा, देह की सुध न लेश ।
बैठ गया इक आदमी, सट कर मेरे पेश ॥ २२९६क

मेरी जेब टटोलता, करते हैं जिमि चोर ।
देखा एक पठान ने, झुल्लाया ला ज़ोर ॥ २२९६ख
कहन लगा "खां जागो, अपनी होश संभाल ।
लुट जायेगा देखना, तेरा सारा माल" ॥ २२९६ग
बैठ गया जब मैं उठ, भाग गया वह चोर ।
कहन लगा पठान वह, "क्यों सोते हो भोर" ॥ २२९६घ
स्टेशन जब लाहौर का आया, इक टीटी आ मुझे हिलाया ।
उसने जभी टिकट को देखा, मुझे पैर से सर तक पेखा ।
कहने लगा "कर शीघ्र भाई, रेल औकाड़े की वह आई ।
रेल लगी है होन रवाना, यहां ही बैठे न रह जाना" ।
मैं उठा नई गाड़ी लीनी, प्रभु की कृपा इस विध चीनी ।
पग पग पर प्रभु बनें सहायी, जिस जन लिव उन चरणी लायी ।
जन का बिगड़े न कोई काम, जिसे संभालें खुद प्रभु राम ।
युग युग का यह है इतिहास, बात नयी यह न कोई खास ।
किस की लाज न प्रभु बचाई, किस की विपद न प्रभु दुराई ।
किस के बनें न प्रभु सहायी, सब हित नाम प्रभु सुखदायी ।

दो० प्रभु का नाम जहाज़ है, चढ़े सो उतरे पार ।
संशय की गठ बोढ़ दो, निश्चय को लो धार ॥ २२९७
इस विध स्वामी जो समझाया, अपना अनुभव सबन सुनाया ।
धन्य धन्य सब जनन उच्चारा, बोला प्रभु जी का जयकारा ।
जय से गूंज उठा आकाश, प्रभु भक्तन मन बहुत हुल्लास ।

आगे की तब बात बताई, प्रभु की महिमा सबन सुनाई ।
दीनानाथ प्रभु महाराज, कृपा निधि श्री मुलख जी राज ।
अद्भुत मस्ती में वे आये, प्रभु कृपा जब कथन में लाये ।
अपना जन्म वृतांत सुनाय, प्रभु कृपा को कथन में लाय ।
उस दिन की फिर बात सुनाई, जब औकाड़े गाड़ी आई ।
रात्रि का था काल हो आया, अंधकार घना चहुँ छाया ।
आंख बन्द ही हम चलि पाये, लाला के घर प्रभु ले आये ।

दो० डयोढ़ी में हम थे खड़े, लाला लीना जान ।
कहन लगा सत्कार से, आओ जी श्रीमान ।। २२८८क
मुझे देख फिर सुरत में, कहन लगा पी आय ।
अच्छा सो आराम से, नौकर बिस्तर लाय ।। २२८८ख
मैं भी सारे नोट जो, लाया था संभाल ।
उस के कर में धर दिये, कह संभालो माल ।। २२८८ग
प्रभु चरणों के ध्यान में, लेट गया मैं खाट ।
नौकर दूध पिलाय कर, गया लगाय कपाट ।। २२८८घ

सभी रात मैं ध्यान बितायी, प्रात भयी जागी जगतायी ।
मैंने भी तब खाट त्यागी, प्रभु चरणी थी वृत्ती लागी ।
लाला आया मुझे जगाने, देख मुझे वह अचरज माने ।
कहा "कितनी थी तूने पीती, उतरी जो न रात भी बीती ।
इतना दारू ठीक न भाई, नशा लुटावे सकल कमाई" ।
उस ने नौकर को बुलवाया, स्नान करन हित मुझे भिजाया ।

नौकर से कहा दही ले जाना, मल मल कर लाला निलहाना ।
ताजा जल सिर पर जब पावें, तभी होश में लाला आवें ।

दो० नौकर मुझ को ले गया, एक कुंए के पास ।
तब नहलाने वह लगा, दे आसन इक खास ॥ २२९९क
दही मला उस देह पर, सर पर भी मल दीन ।
नीर निकाला कूप से, स्नान तभी मैं कीन ॥ २२९९ख
लोटे लगा उडेलने, सर पर मेरे खूब ।
होश मुझे दिलवान हित, यत्न किया उस खूब ॥ २२९९ग
ज्यों ज्यों नीर उडेलता, मस्ती वढ़ती जाय ।
नाम खुमारी का कोई, क्या इलाज कर पाय ॥ २२९९घ

प्रभु जी ने तब मुझे उठाया, बदन पोंछ मैं कुर्ता पाया ।
नौकर ने वस्त्र पहनाये, घर ओर तभी हम चलि आये ।
मुझे देख के बोला लाला, तुम तो झूम रहे हो लाला ।
अच्छा पहले खा पी लेवें, मण्डी की सुध फिर हम लेवें ।
नौकर खाना तब ले आया, प्रसन्नता से हम भोग लगाया ।
लाला तब मुझको ले चाला, मेरा कर निज हाथ संभाला ।
खरीद मक्की की थी कर पानी, लाला था वाणिज्य का ज्ञानी ।
सब उस को व्योपारी जानें, उसकी साखी को सन्मानें ।

दो० लाला मुझ को लेय कर, आया मण्डी मांझ ।
हाट हाट से परखता, ले माकी हाथ मांझ ॥ २३००

मुझ को भी उस कुछ दिखलायी, कहन लगा लूं कितनी भायी ।

मैं बोला बिन देखे भाले, मर्ज़ी जितनी ले लो लाले ।
उसने सौदा तय कर पाया, अगली हाटी फिर चलि आया ।
वहां भी मक्की को उस देख, भाव किया और कीन उलेख ।
यह भी क्या लेनी है बोलो, मैं कहा यदि ठीक है ले लो ।
इस विध कई जगह वह आया, और मुझे सौदा दिखलाया ।
सब जगह मैं यही कह पाता, आगे तब मैं कदम बढ़ाता ।
मण्डी में चर्चा चल पायी, बाहिर से है पार्टी आयी ।
उस ने ली खरीद बहु सारी, मक्की बहुत भयी अब प्यारी* ।

दो० मक्की का भाव चढ़ गया, उसी काल ही मीत ।
हमरे सौदे ठीक थे, खुश लाला का चीत ॥ २३०।

हम दोनों तब लौटे घर को, लीन मैं गाड़ी अमृतसर को ।
मार्ग सारा ध्यान में बीता, बीतत समय न कुछ प्रतीता ।
कब लवपुर का जंकशन आया, कब गाड़ी मैं बदल था पाया ।
मुझे न इस का कुछ भी ज्ञान, लीन मेरा मन प्रभु के ध्यान ।
अमृतसर जब पहुँच थे पाये, लेने पिता थे स्टेशन आये ।
पहला प्रश्न यही कर पाये, मक्की कितनी ले के आये ।
जब सुना मैं अधिक ले आया, उन के मन में हर्ष समाया ।
मक्की का भाव चढ़ था पाया, सौदा बहुत ठीक हो आया ।
यह मैं जानी प्रभु की दाया, जन का जिसने वणिज चलाया ।

दो० वणिज भक्त जब करत है, होय प्रभु में लीन ।

* प्यारी —मंहगी

लाभ होय उस भक्त को, यह न बात नवीन ॥ २३०२

संगत को सद्गुरु उपदेशा, रहे ध्यान में बात हमेशा ।
प्रभु में चित्त जभी लग जाये, कारज कभी न बिगड़न पाये ।
दूर रहे मन प्रभु सो नेक*, कारज में हों विघ्न अनेक ।
अतः प्रभुहिं ध्याओ निरन्तर, तब न आये लाभ में अन्तर ।
भक्तन ने सुन सुख बहु माना, सत्य मिला था गुरु से ज्ञाना ।
मन में प्रभु का रूप समाये, वृत्ति जन की लीन हो पाये ।
जगत जाल विसरे उस ताईं, योग युक्ति समझाई साईं ।
योगी संग रहें भगवान, उसका होय सब विध कल्याण ।
उसका हो न बाल भी बांका, सद्गुरु ने उपदेश में आंका ।

दो० सद्गुरु ने उपदेश में, कही स्पष्ट यह बात ।
मन जब प्रभु में लीन हो, लाभ भये साक्षात ॥ २३०३

अनुभव की उन बात बताई, सुनी सुनाई नहीं कथ पाई ।
भया सब को विश्वास विशेष, योग बिना नहीं सुख का लेश ।
ईश्वर से मिलाप है योग, नशे इसी से भव का रोग ।
सच्चा भक्त योगी ही जानो, प्रभु आश्रित उस को ही मानो ।
योगी एक निमाना बाल, राखें प्रभु उसे गोद संभाल ।
होना चाहे न प्रभु से दूर, प्रभु बिछोड़ा नहीं मंजूर ।
बिछुड़ प्रभु से तड़पे ऐसे, जल से मीन निकल के जैसे ।
मिलना प्रभु से चाहे ऐसे, दीप शिखा से शलभ हो जैसे ।

*नेक—जरासा

दो० दीप शिखा से शलभ जिमि, मिलना चाहे मीत ।
योगी प्रभु पर करत है, हुत प्राण सप्रीत ॥ २३०४क
प्राण प्यारे न जिसे, प्रभु से केवल प्यार ।
ऐसा योगी जानिये, योगिन में सरदार ॥ २३०४ख

प्रभु के प्रेम में जनता पागी, ध्यान समाधी कुछ को लागी ।
देह बदन की सुधी भुलाय, बैठ रहे सब कुछ विसराय ।
प्रभु में थी उन की लिव लागी, प्रेम की ज्योति मन में जागी ।
स्वामी जी मुख से फरमाये, जिमी समझ में सब को आये ।
हम बतलावें योग का सार, योगी करता प्रभु से प्यार ।
जिस की साची होवे प्रीत, प्रभु में लगता उसका चीत ।
वृत्ती होय एकाग्र जान, विसरे देह गेह का ध्यान ।
प्रभु किरपा के वे अधिकारी, प्राप्त करें वे सुख बहु भारी ।

दो० जन जो प्रभु के ध्यान में, इस विध रहें सदैव ।
जैसे ये जन हैं पड़े, उन को सन्मुख दैव ॥ २३०५

प्रभु किरपा से लागे ध्यान, प्रभु किरपा से मिलता ज्ञान ।
प्रभु किरपा से जग बिसराये, प्रभु किरपा से प्रभु को ध्याये ।
प्रभु किरपा से मिलत सुयोग, प्रभु किरपा से करते योग ।
प्रभु किरपा से श्रद्धा पावे, प्रभु किरपा से विघ्न न आवे ।
प्रभु किरपा से रोग का नाश, प्रभु किरपा से शोक का नाश ।
प्रभु किरपा से पाप हो दूर, प्रभु किरपा से मिटे ग़रूर ।
प्रभु किरपा से जगत में सुख, प्रभु किरपा से नाशे दुःख ।

प्रभु किरपा से मोह नशावे, प्रभु किरपा से मुक्ती पावे ।

दो० प्रभु किरपा से जगत में, साधे जन आ योग ।
भव बाधा संग जीव के, मिटें सकल ही रोग ॥ २३०६

शरण प्रभु की जो जन आवे, प्रभु किरपा नर वह पा जावे ।
प्रभु को ही सब काल ध्यावे, भाव भक्ति मन में उपजावे ।
प्रभु भक्ति सब सुखन की मूल, भक्ति बिना जग में बहु शूल ।
जन प्रभु भक्ति को अपनावे, जीवन में फिर दुःख न पावे ।
सुन कर सद्गुरु का उपदेश, प्रश्न पूछा इक भक्त विशेष ।
कहा भक्त ने सद्गुरु ताहिं, वचन आप के चित्त समाहिं ।
इक बात प्रभु आप बतावें, भक्ति भाव को किमी बढ़ावें ।
ऐसी विधि भी कुछ बतलावें, जिस विधि भक्ती को हम पावें ।
मन चंचल मन परवश साईं, किमी रहें प्रभु चरणन माहिं ।

दो० ऐसी विधि बतलाइए, प्रभु चरणी रहे चीत ।
प्रेम बढ़े प्रभु चरण. में, प्रभो कौन वह रीत ॥ २३०७क
कौन प्रभु वह रीत है, चित्त न डोले लेश ।
प्रेम धार बहती रहे, रहें किसी भी देश ॥ २३०७ख

२५. एक भक्त का प्रश्न "प्रभु चरणों में प्रीति और मानसिक एकाग्रता कैसे बढ़े ?" श्री स्वामी जी का उत्तर

सुन कर भक्त के निःछल भाव, बोले सद्गुरु सरल स्वभाव ।
चिरञ्जीव ! तव शुभ विचार, जानन चाहो भक्ति का सार ।

ईश कृपा से भक्ति प्राप्त, बिना कृपा सब भये समाप्त ।
ईश कृपा के पाने हेत, विधि सुनो इक होय सचेत ।
ईश्वर के हम जीव अनेक, ईश दया को पाये प्रत्येक ।
उसी दया को करे जो याद, दृढ़ भक्ति वह पाये बिन बाध ।
प्रभु ने कीनी हो जो दाया, संकट से हो कभी बचाया ।
मिला हो उन से जो उपहार, विकट काल लीनी हो सार ।
मृत्यु से हो कभी बचाया, बिछुड़ा प्रेमी कभी मिलाया ।
रोग से कीना होय निरोग, अथवा बताया हो कुछ योग ।
दीना हो कुछ रहस्यमय ज्ञान, अथवा कीना धन प्रदान ।
स्वप्न में दीनें हों जो दर्शन, रोम हर्षण वा चित्त आकर्षण ।
अथवा हो कुछ और उपकार, स्मरण करे उसे वारंबार ।

दो० प्रभु की दया स्मरण कर, लागे जभी ध्यान ।
चंचलता तब चित्त की, कर न सके परेशान ॥ २३०८

प्रभु जी दया के हैं भण्डारी, दया करें वे सब पर भारी ।
जो रखता उस दया को याद, मिलती उसे भक्ति बिन बाध ।
प्रभु की दया को जो विसरावे, ध्यान न उस जन का लग पावे ।
प्रभु की दया को जो भुलावे, प्रभु को भी वह भूल ही जावे ।
यह इक विधि है मैं बतलाई, इस को अमल में लाना भाई ।
अहं भाव का कर के त्याग, प्रभु सेवा में जाये लाग ।
दुःख सुख और अपमान बड़ाई, ये तब जायें बिसर ही भाई ।
दुःख सुख के पड़ चक्र में जीव, भूले प्रभु को बात अजीब ।

दो० लागत बात अजीब है, भूले प्रभु को जीव ।
इस का इक उपचार है, सिमर दया हे जीव ॥ २३०९

जब तक बने न बुद्धि ऐसे, ध्यान एकाग्र होवे कैसे ।
जो पूछी तुम ने थी बात, उत्तर मैं दीना है तात ।
इस का करना तुम अभ्यास, जानो निज को प्रभु का दास ।
दास पै कृपा करें हमेश, इस में संशय नहीं है लेश ।
प्रभु प्रसन्न होंय जब मीत, जन्म जन्म की कटती भीत ।
यत्न करो तुम प्रभु रिझावो, प्रभु किरपा को इस विध पावो ।
प्रभु किरपा सब सुख की मूल, नहीं विसरे यह अटल असूल ।
सुन कर सद्गुरु जी की वाणी, पूछा जन तब 'हे कल्याणी ।
प्रभु प्रसन्न होंय किस रीत, किमि पाये जन प्रभु की प्रीत ।
कर किरपा हम को समझावें, दास जान हम को अपनावें ।

दो० हम दासन के दास हैं, कृपा करें दयाल ।
ऐसी विधि हम को कहें, जिस विधि होंय निहाल" ॥ २३१०

२६. एक भक्त का प्रश्न "प्रभु कृपा कैसे प्राप्त हो ?"

श्री स्वामी जी का उत्तर

स्वामी जी सुन उसकी बात, बोले मुख से "हे मम तात ।
मन तुम्हारे में जो आया, मेरे मन को भी वह भाया ।
प्रभु किरपा की जो है बात, वह तो रहस्यमयी है तात ।
इस रहस्य को प्रभु ही जानें, कारण निश्चित हम ना मानें ।

परन्तु जन जो करत प्रयास, चित्त में धर कर दृढ़ विश्वास।
उस का भाग्य उदय हो आये, प्रभु किरपा को तब वह पाये।
पूछी सद्गुरु जी से बात, एक भक्त ने कर नत गात।
हे नाथ हम को बतलायें, कर किरपा सब को समझायें।
उस प्रयास का क्या आकार, करें जो सज्जन निश्चय धार।

दो० प्रभु किरपा जिमि हो सके, विधि वही कथ पायें।
निज दास हमें जान कर, दया निधि अपनायें ॥ २३११

सुन कर उस की विनय पुकार, सद्गुरु कहा मन किरपा धार।
कुछ गुण तुम को हम वतलायें, भक्त जिमी आचरण बनायें।

(क) शरीर को मन्दिर मानना

प्रथम बात तुम लो यह जान, निज तन प्रभु का मन्दिर मान।
देह देवालय है कथ पाया, यह ज्ञान है प्रभु बतलाया।
राखें इसे निरन्तर शुद्ध, मलीन करें न तन मन बुद्ध।
पालें नेम योग के भाई, रोग लागे न तन में राई।
नित्य करो साधन मन लाई, तन को योग भये सुखदाई।
साधन योग प्रभु प्रचारे, सुखी भये जग में जन सारे।

दो० जन करता जो योग है, उठ के प्रातः काल।
प्रभु सेवक वह ही बने, सुखी रहे त्रिकाल ॥ २३१२क
सुखी रहे त्रिकाल वह, मन्दिर तन को जान।
अन्तर प्रभु बसाय कर, नित्य करे गुणगान ॥ २३१२ख

(ख) माता पिता को सेवा से प्रसन्न करना

उपाय दूसर जानो मीत, मात पिता से राखो प्रीत ।
इस तन के हैं वही विधाता, ब्रह्मा रूप जन्म के दाता ।
जब प्रसन्न करें मन लाई, जीवन जन का हो सुखदाई ।
प्रभु किरपा हित खास उपाय, सेव करे उन की चित्त लाय ।
सेव न मात-पिता कर पाया, देह का उस न लाभ उठाया ।
पितृ ऋण से नहीं हुआ उऋण, है मात पिता का सर पै ऋण ।
ऋणी पुरुष किमि पुण्य कमावे, जीवन पूंजी खो कर जावे ।
मात पिता को मान के देव, तन मन धन से कर ले सेव ।

दो० मात पिता हैं देव सम, उनकी सेव महान ।
किरपा चाहो ईश की, यही बात लो मान ।। २३१३

(ग) स्वामी को सेवा से प्रसन्न रखना

एक बात हम तुझे बतावें, बात पते की कह समझावें ।
स्वामी जिसका दीना खाओ, उस से द्रोह न कभी कमाओ ।
स्वामी जानो विष्णु का रूप, भेद न राखो उस से गूप ।
उसके अन्न से पुष्ट शरीर, उसी की सेव करो तुम वीर ।
स्वामी हित जिसका तन जाये, प्रभु किरपा को वह जन पाये ।
स्वामि द्रोही जो हो पुमान, निष्फल जीवन उस का मान ।
कृतघ्नता सम पाप न भाई, इस पाप की नहीं क्षमताई ।
चाहो प्रभु की किरपा पाना, स्वामी हित तन मन तुम लाना ।

दो० सेवक बन सेवा करे, मैल न राखे चित्त ।
मन उसी के रहे सदा, स्वामी का ही हित ।। २३१४

भक्त सभी यह सुन कर बात, बोल उठे "हे जग के त्रात ।
ऐसा जग में यदि हो जाये, स्वर्ग उतर जग में तब आये ।
जगत बने तब सुख का मूल, जग के झगड़े हों निर्मूल ।
शांति से सब यहां रह पायें, द्वेष दोष सब ही मिट जायें" ।
सुन कर भक्तन की यह वाणी, स्वामी बोले तब कल्याणी ।
भक्तो बात लेवो तुम जान, सब का तभी होवे कल्याण ।
परस्पर का जब हो विश्वास, लेवें सुख का सब जन श्वास ।
स्वामी हो ऐसा मम मीत, सेवक के हित से हो प्रीत ।

(घ) सेवक को दान, मान से प्रसन्न रखना

सेवक का हित निज हित माने, धन देने में ना सकुचाने ।
आदर सहित उसे धन देवे, देने का फल तब ही लेवे ।

दो० प्रभु कृपा का पात्र वह, स्वामी होवे तात ।
सेवक को धन देत जो, कह मान की बात ॥ २३१५

(ङ) सद्‌गुरु की आज्ञा का पालन करना

अगली बात सुनो मन लाय, प्रभु किरपा को वह जन पाय ।
निज गुरु का जो हो अनुगामी, आज्ञा पाले बन निष्कामी ।
गुरु का वचन मन्त्र ले मान, गुरु इंगित को सदा पहचान ।
गुरु की सेव करे मन लाय, करे वही जो गुरु बतलाय ।
गुरु को ईश्वर सम जो जाने, गुरु से बड़ा न कुछ भी माने ।
ऐसे जन पर प्रभु दयाल, प्रभु की किरपा हो सब काल ।
गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु जाने, गुरु को ही शिव शंकर माने ।

गुरु हो जिस के सब कुछ भाई, उसी ने प्रभु की कृपा पाई ।

दो० गुरु को ही सब मान कर, भजन करे मन लाय ।
प्रभु उस के अनुकूल हों, संशय चित्त न लाय ॥ २३१६

इस के आगे और बतावें, प्रभु किरपा किस विध जन पावें ।

(च) जिज्ञासा भाव

जिस के मन जिज्ञास का वास, ईश्वर मिलन की हो दृढ़ आस ।
जीवन की बस एक हो साध, खोज करे प्रभु की बिन बाध ।
प्रभु मिलें हर दम यही चाह, तप करता प्रभु हेत अथाह ।
प्रभु किरपा का वह अधिकारी, इच्छा उस की है बलकारी ।
उसके चित्त का तीव्र चाव, प्रभु सराहवें वह सद्भाव ।
हे भक्तो यह लो तुम जान, चित्त की शक्ति बहुत महान ।
चित्त की शक्ति जो ले जान, करे योग वह नित्य सुजान ।

दो० योग करे जो नित्य ही, सुखी रहे वह साध ।
प्रभु किरपा उस पर करें, दूर भये भव बाध ॥ २३१७

सुना भक्तों ने यह उपदेश, सुखी भये वे सभी विशेष ।
सर्व साधन जो गुरु बतलाये, सभी सबन के मन थे भाये ।
एक भक्त ने पूछी बात, क्या और भी है जन व्रात ।
प्रभु किरपा को पाने हेत, करें जो हम सब होय सचेत ।
वह सब बात हमें बतलायें, आप की शिक्षा न विसरायें ।
यह सीख है वेद की वाणी, योगिराज ! महाप्रभु दानी ।
जो ज्ञान है आप से पाया, कहीं से भी वह न सुन पाया ।

सत्य बात जो आप बताई, हमारी बुद्धि में सब आई ।

दो० अब बतलायें नाथ जी, है कुछ और उपाय ।
प्रभु किरपा जिस विध भये, शरण आप की आय ॥ २३१८क
शरण आप की आय कर, मिल पाये वह दान ।
प्रभु किरपा हम पर भये, मन में उपजे ज्ञान ॥ २३१८ख
सुन कर उनकी प्रार्थना, सद्गुरु भये दयाल ।
कथन किया उन सबन को, जिमि मिले सब सार ॥ २३१८ग

(छ) समत्व दृष्टि

कथन किया गुरु भक्तन ताहीं, एक बात हम और बताहीं ।
प्रभु किरपा को पाने हेत, व्यापक ईश्वर चित्त में चेत ।
लोक लोकान्तर वही व्यापक, कण कण में वह जग का पालक ।
अन्तर बाहिर सब थां रहता, सृष्टि का सब भार वह वहता ।
उस से शून्य न कोई स्थान, भला बुरा सब उस में जान ।
पाप पुण्य उस ही उपजाये, दोनों में ही वह रह पाये ।
सृष्टि उस का एक स्वरूप, प्रलय है उस का दूजा रूप ।
दुःख दर्द से वही बचावे, सर्व नाश भी वह कर पावे ।

दो० ऐसे व्यापक ईश का, मनन करे जो साध ।
समदृष्टि उस को मिले, हो प्रभु कृपा अबाध ॥ २३१९

ईश्वर सर्व व्यापक भाई, कथन करें सब लोक लुकाई ।
इसे मनन में जो जन लाये, प्रभु कृपा को वही नर पाये ।
भेद भाव को मन में लाना, उचित ऐसा नहीं कर पाना ।

ईश्वर की सब रचना जानो, ईश्वर सब में व्यापक मानो ।
बहु विध सृष्टि जो उपजाई, इस में अद्भुत सुन्दरताई ।
नीरस रचना तब हो जाये, इक समान जो सब हो पाये ।
तीन गुणों को कर स्वीकार, नाना रचना की करतार ।
कहीं शांत कहीं भीषण रूप, कहीं जड़त्व तमोगुण गूप ।
ईश्वर को हैं सभी समान, योगी भी ले ऐसा मान ।

दो० तीन गुणों की सृष्टि यह, रच पायी करतार ।
एक रूप न सब रची, ले जन मन में धार ॥ २३२०क
ऐसा मन में धार कर, त्यागे राग द्वेष ।
सृष्टि को जन देख कर, स्मरण करे सर्वेश ॥ २३२०ख
जैसे हम सब करत हैं, बहु निज तन से प्यार ।
ऐसे ही सब विश्व से, ईश्वर करत दुलार ॥ २३२०ग

सृष्टि को जो कष्ट दे डाले, द्वेष की अग्नि में जो साले ।
दया ईश्वर से किस विध पाय, सरल बात यह समझ में आय ।
पूछी थी जो तुम ने बात, सहज बात है मेरे तात ।
ईश्वर को हर घट में देखो, द्वेष त्यागो प्रेम से पेखो ।
इस विध जब अभ्यास बढ़ाओ, ईश्वर किरपा को पा जाओ ।
ईश्वर किरपा जब मिल पाये, जन तभी कृतकृत्य हो जाये ।
जीवन का पा जाये लक्ष्य, ज्ञान ज्योति ले देख समक्ष ।
बहुर जन्म, उसका नहीं होय, साचा योगी जानो सोय ।

दो० सम दृष्टी जन जानिये, योगी परम विशेष ।

सब का करता मान वह, द्वेष त्याग अशेष ॥ २३२१

इस विध भक्तन ने सुन पाई, सद्गुरु की सब सीख सुहाई ।
"धन्य धन्य" सब जनन उचारा, तन मन से गुरु पग सतकारा ।
"धन्य हो तुम योग के स्वामी, धन्य धन्य तुम अन्तर्यामी ।
धन्य परम तुम्हारा ज्ञान, धन्य तुम्हारा हम को दान ।
धन्य तुम्हारी वाणी शुद्ध, धन्य विलक्षण बुद्ध प्रबुद्ध ।
धन्य तुम्हारा अनुभव नाथ, हम सेवक भये धन्य सनाथ ।
धन्य गुरु जिस के तुम प्यारे, राम प्रभु जो जग से न्यारे ।
धन्य योगेश्वर हैं प्रभु राम, हम सब अब भये पूर्ण काम ।

दो० राम परम तुम धन्य हो, धन्य जगद्गुरु मुलख ।
धन्य योग जो तुम दिया, सत्यं शिवं अलख" ॥ २३२२क

२७. एक भक्त का प्रश्न "ध्यान में बैठने के लिए कौन सा आसन हो ?" श्री स्वामी जी का उत्तर ।

धन्य धन्य सब उचर कर, कर के सब प्रणाम ।
आज्ञा ले कर चल दिये, बहुत भयी थी शाम ॥ २३२२ख
होशियारपुर के जनन ने, जान लिया सप्रीत ।
परम धर्म इक योग है, यही सनातन रीत ॥ २३२२ग
मुलख राज योगी परम, कीना हमें सनाथ ।
इन के चरण गहें हम, लागे मुक्ति हाथ ॥ २३२२घ

जनता सकल नगर की आती, श्री मुलख से ज्ञान को पाती ।

साधन योग सीख के जाती, रोग मुक्त हो सुख को पाती ।
एक दिवस इक सज्जन आया, यह प्रश्न उस ने कर पाया ।
"स्वामिन् मुझे यही बतलावें, आसन का कुछ ज्ञान करावें ।
आसन कौन जो कर के नाथ, सिद्धी योग मिले उस साथ ।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, स्वामी बात बताई खास ।
हे भक्त तू प्रश्न जो कीना, सत्य भाव तेरा हम चीना ।
वह चाहते तुम आसन मीत, जिस में करो एकाग्र चीत ।

दो० आसन जानो चार तुम, ग्रंथन कीन बखान ।
बैठो उन में एक से, गुरु आज्ञा को मान ॥ २३२३

आसन सिद्ध पद्म तुम जानो, आसन भद्र, सिंह पहचानो ।
चारों आसन बहुत विशेष, विधी बखान करें हम लेश ।
कर पाओ अभ्यास निरन्तर, जपो बैठ के गुरु का मन्तर ।

(क) सिद्धासन

आसन सिद्ध की विधि लो जान, बैठें इस में सिद्ध सुजान ।
वाम पैर नीचे रख पाओ, दक्षिन से तुम मेंढ़ दबाओ ।
पांव के टखने हों इक साथ, गोद में राखो दोनों हाथ ।
लगावे मूल बंध को साध, संग जालंधर भी आराध ।
कर उड्डियान इसी के संग, जानो सभी आसन के अंग ।
सिद्धासन की विधि बतलाई, घंटा भर करना तुम भाई ।

दो० घंटा भर जो नित करे, सिद्धासन हो सिद्ध ।
चित्त एकाग्र हेत यह, आसन बहु प्रसिद्ध ॥ २३२४

सुन कर सद्गुरु का उपदेश, कहा भक्त "हे गुरु महेश ।
स्पष्ट भयी है सारी बात, आप योगेश्वर हो साक्षात ।
आसन का जो ज्ञान कराया, प्रभो आप की है बहु दाया ।
हम आसन में बैठ के नित्त, तव चरण में लायेंगे चित्त ।
कहा नाथ ने भक्त प्यारे, भले भाव हैं सब तुम्हारे ।

(ख) पद्मासन

अब मैं तुम को और बताऊँ, पद्मासन का ज्ञान कराऊँ ।
योगिन का यह बहुत प्यारा, उत्तम सिद्धि का दातारा ।
वाम पग दांई जांघ टिकाय, दक्षिण बायीं जांघ रख पाय ।
घुमा पृष्ट से दोनों हाथ, पकड़ो पादांगुष्ठ इक साथ ।
हृदय ऊपर ठोड़ी टिकाओ कण्ठ कूप में ध्यान लगाओ ।

दो० इस विध आसन लाय कर, आत्म का धर ध्यान ।
बैठ निरन्तर शांत हो, मिले योग से ज्ञान ॥ २३२५

इस विध आसन जोय लगावे, रोग शोक से मुक्ती पावे ।
जग में रहे वह पद्म समान, पद्मासन ला करत जो ध्यान ।
इस में कर के प्राण उत्थान, जागृत कुण्डली करे सुजान ।
प्राण की सिद्धि यदि हो पाये, देह धरत से तब उठ जाये ।
पद्मासन में बैठ के जोय, प्राणायाम करे स्थिर होय ।
सद्गुरु का मन में कर ध्यान, मोक्ष को पावे पुरुष सुजान ।
पद्मासन का कर अभ्यास, मिले योग में सिद्धी खास ।
इस आसन के करने वारे, योगी सिद्ध भये बहु भारे ।

दो० पद्मासन में बैठ कर, करता जो अभ्यास ।
सिद्धी पाता योग में, रह कर गुरु के पास ॥ २३२६

तीसरा आसन अब बतलाऊँ, उस की विधि को भी कथ पाऊँ ।

(ग) सिंह आसन

सिंह आसन को जानो मीत, करिये फिर उसे ला कर चीत ।
सिंह समान बली हो जाओ, निर्भय हो कर योग कमाओ ।
दोनों टांगों को उलटाओ, आसन सिंह समान सजाओ ।
सीमन को दें टखन दबाय, करो तैसे जिमि गुरु दिखलाय ।
घुटनों ऊपर हाथ टिकाओ, छाती को तुम खूब फिलाओ ।
मुख खोलो वा जीभ निकालो, सिंह समान गर्ज कर डालो ।
कई बार गर्जो तुम ऐसे, चारों दिक भय पायें जैसे ।
फिर गंभीर मुद्रा को धार, बैठो मन को ला तुम मार ।
विषयों का तुम करो शिकार, वृत्तियों को तुम डालो मार ।
तुम हिंसक तुम हिंसा धारो, हिंसक बन विषयों को मारो ।
तुम से ही हैं सब आतंकित, लेश रहो न चित्त में शंकित ।
ऐसा आसन सिंह लगाओ, भय शोक भ्रम सकल भगाओ ।

दो० सिंहासन जो करत है, और रहत निर्भय ।
रोग शोक से मुक्त हो, पाप होंय सब क्षय ॥ २३२७क

(घ) भद्रासन

भद्रासन की रीत अब, कह दूं मैं समझाय ।
चौथा आसन जानिये, योगिन जो मन भाय ॥ २३२७ख

पांवों की जन एड़ियां, संग उपस्थं टिकाय ।
तलवे संग मिलाय कर, बैठे दृढ़ कर काय ॥ २३२७ग
*तीनों बंध लगाय कर, करे नाद संधान ।
प्रभु का चिन्तन वा करे, इमि जन पावे ज्ञान ॥ २३२७घ
भद्रासन को जन करे, रह कर गुरु के पास ।
गुरु की शिक्षा में रहे, निश्चल रख विश्वास ॥ २३२७ङ
तुम ने पूछी बात जो, आसन की मम मीत ।
कथी सकल संक्षेप से, जैसी उन की रीत ॥ २३२७च

सद्गुरु जी जब इमि समझाया, भक्तन मन बहु हर्ष समाया ।
जाना उन निज भाग्य उजागर, गुरु मिले जो ज्ञान के सागर ।
भाग्यवश भये इन के दर्शन, ज्ञान पायें कर पग स्पर्शन ।
एक भक्त तब विनय उचारी, हम अज्ञानी तुम तमहारी ।

२८. खेचरी की सिद्धि का स्वरूप

अघहारी जो खेचरी नाथ, उस का भी कुछ ज्ञान दें साथ ।
योगी जन जिसके गुण गायें, हम भी उस को जानन पायें ।
सकें क्या हम भी कर अभ्यास, आप के चरणों की ले आस ।
गुरु ही जन को योग सिखायें, हमें भी कर कृपा अपनायें ।
दासन हित हैं आप पधारे, हम बड़भागी हैं जन सारे ।

दो० हमरा भाग्य महान हैं, हे योगेश्वर नाथ ।
शिक्षा हम को दीजिये, जिस विध भयें सनाथ ॥ २३२८क

*तीनों बंध—मूल बंध, उड्डियान बंध तथा जालंधर बंध ।

सुन कर उन के वचन को, सद्गुरु भये दयाल ।
कथन किया तब सबन से, प्रभु हैं बहु कृपाल ॥ २३२८ख

हिमचल से थे प्रभु जी आये, शक्ति योग की वे थे लाये ।
सिद्ध खेचरी वे करवाते, ध्यान समाधी में बिठलाते ।
हिमचल से भी ऋषिजन आते, प्रभु की किरपा पा कर जाते ।
खेचरी क्रिया उत्तम जानो, मुक्ती दायक साधन मानो ।
बिन प्रभु कृपा होय न सिद्ध, लोक वेद में यह प्रसिद्ध ।
बहु जन की प्रभु सिद्ध कराई, लोक विदित यह है मम भाई ।
जसपुर में कुम्हार का बालक, मिले उसे प्रभु जब जग पालक ।
शरणी चल कर वह था आया, दान उसे प्रभु यह दे पाया ।
उसको खेचर सिद्ध करायी, प्रभु महिमा सब जग में छायी ।

दो० प्रभु किरपा से खेचरी, हो साधक की सिद्ध ।
कई इस के प्रमाण हैं, जनता में प्रसिद्ध ॥ २३२९

हिमगिरि से था योगी आया, हाथी गेट ठहर जो पाया ।
कई दिन रहा ध्यान आसीन, जनता बहुत मान था कीन ।
मानें लोग सिद्ध वह स्वामी, रहे समाधी अन्तर्यामी ।
दर्शन हेत लोग चलि आये, प्रभु जी को भी वे थे लाये ।
ध्यान खुला उस का तत्काल, बखान किया उसने निज हाल ।
प्रभु चरणों में शीश झुकाय, अपनी बात कही समझाय ।
गिरी गुफा में मैं रह पाऊँ, योग समाधी वहां लगाऊँ ।
सिद्धि मुझ को नहीं मिल पाये, बाधा कैसी समझ न आये ।

दो० समाधि में मम बाध जो, उसे निवारो नाथ ।
गुरुओं के प्रभो तुम गुरु, सकल आप के हाथ ॥ २३३०क
विनती उसकी श्रवण कर, किरपा कीनी नाथ ।
खेचर सिद्ध कराय कर, कीना उसे सनाथ ॥ २३३०ख
सिद्धि इस विध पाय कर, चला गया वह साध ।
अचरज में जनता पड़ी, प्रभु की दया अगाध ॥ २३३०ग

भक्तन ने सुन सुख को माना, सद्गुरु वचनों को सन्माना ।
एक भक्त ने विनय उचारी, नाथ खेचरी जो गुणकारी ।
हम चाहते हैं उसका ज्ञान, बखान करें निज सेवक जान ।
स्वामी तब उपदेशन लागे, खोली बात सबन के आगे ।
निज तन को तुम भूमी जानो, मन रमे यहीं भूचर† मानो ।
विषयों में यहां रह रसलीन, बसत शोक में हो कर दीन ।
ऐसा मन न स्थिर सुख पावे, चाहता उड़ आकाशी जावे ।
पर नहीं इस के वह समर्थ, रहत बन्धन में हो असमर्थ ।
शक्तिपात जब गुरु कर पावे, बन्धन से वह जीव छुड़ावे ।

दो० भूमी की इस कैद को, त्याग करे फिर चित्त ।
और आकाशीं विचरे, होय स्वतन्त्र मित्त ॥ २३३१क
'खे' कहते आकाश को, 'चर' विचरण कहलाय ।
चित्त आकाशीं विचरे, 'खेचर' वह हो जाय ॥ २३३१ख
भूमी के संसर्ग से, रहे अछूता जीव ।

†विषयों में विचरण करने वाले मन को 'भूचर' कहा हैं ।

खेचर मुद्रा साध कर, तरे चुरासी सीव* ॥ २३३१ग

उसी भक्त तब विनय सुनाई, नाथ ! बात सकल मन भायी ।
वह आकाश कहां है स्वामी, विचरे मन जब खेचर गामी ।
देह भीतर या बाहिर नाथ, बोध करा कर करें सनाथ ।
नाथ कहा उसकी सुन वाणी, मन में शंका जो तुम आनी ।
उसी बात को मैं समझाऊँ, तेरा संशय दूर कराऊँ ।
सब कुछ है इस घट के मांहि, पिंड में ही ब्रह्मांड समांहि ।
यहीं आकाश, यहीं पाताल, यहीं स्वर्ग वा मोक्ष द्वार ।
यहीं देव व दानव जानो, तीरथ सकल यहीं पहचानो ।
लोक लोकांत घट में देखो, चित्त में संशय न तुम लेखो ।

दो० सब कुछ इस घट मांहि है, ऐसा रख विश्वास ।
खेचर साधन जन करे, घट में ही आकाश ॥ २३३२क
श्रवण करी जब भक्त ने, कथी नाथ से बात ।
"घट में जो आकाश है, कैसे हो साक्षात ॥ २३३२ख

नाथ हमें अब वह समझावें, घट मांझ आकाश को पावें ।
उस आकाश में हो आसीन, मुद्रा खेचरी करें नवीन" ।
स्वामी जी सुन यह जिज्ञास, कहन लगे सुनो सह विश्वास ।
अनाहत[1] से ऊपर आकाश, जहां व्यापक दिव्य प्रकाश ।
गगन उसी में जो रह पावे, खेचर योगी वही कहावे ।
साधक ऐसा करे अभ्यास, उस से नीचे नहीं हो वास ।

* सीव—सीमा
1 अनाहतचक्र

यत्न करे नित वह अभ्यासी, प्रभु चरणों का बन विश्वासी ।
सदैव चढ़े ऊपर को ध्यान, जिस विध उड़त पक्षी आस्मान ।

दो० जैसे पक्षी उड़त है, ऊपर पर फैलाय ।
गति प्राण की ऊर्ध्व हो, खेचर योग कहाय ॥ २३३३क
स्पष्ट बात को श्रवण कर, भक्तन मन हुल्लास ।
कथन किया इक भक्त ने, "स्वामिन् हम तव दास ॥ २३३३ख
कहां तलक आकाश है, इस का भी दें ज्ञान ।
जीव उठे आकाश में, अपना क्षेत्र जान" ॥ २३३३ग

स्वामी जी ने सुन वह बात, कथन किया "हे प्रिय मम तात ।
दिव्य आकाश की सीम न जान, अनन्त लेवो उसे पहचान ।
भूमि तीन उस की तुम जानो, कण्ठ कूप में इक पहचानो ।
जीव करे वहां पर विश्राम, ऐसा जहां पै सुख का धाम ।
उसी आकाश पैठ के प्राणी, आत्म बोध कर होत ज्ञानी ।
आत्म बोध प्रथम सोपान, खेचरी मुद्रा का लो जान ।
आत्म बोध न जिस को होवे, मुद्रा में नहीं सिद्धि गोवे ।
मुद्रा सिद्ध उसी की जान, जिस जन पाया आत्म ज्ञान ।

दो० खेचर मुद्रा हेत जन, दृढ़ करे अभ्यास ।
कण्ठ कूप के मध्य में, देखे निज प्रकाश ॥ २३३४

आत्म देह का जानो स्वामी, आत्मा खेचर जो निष्कामी ।
इस विध करे जो नित अभ्यास, स्थान पाये फिर ऊपर खास ।
ऊपर शून्य इक परम स्थान, भृकुटी मध्य जो लेवो जान ।

ईड़ा जहां करत प्रवेश, पिंगला भी जाये जिस देश ।
वह आकाशी संगम जानो, जीव वहां पर खेचर* मानो ।
श्वास रुके जब उस ही देश, जिह्वा करे तालू प्रवेश ।
अमृत स्राव होये उस ऊपर, योगि रहे बिन भोजन भूपर ।
भूख प्यास न उसे सतावे, अमरित रस भीतर ही पावे ।
यहां पर ईश्वर का साक्षात, हो प्राणी को बिन ही बात ।

दो० ईश्वर दर्शन जब करे, भृकुटी में जा साध ।
खेचर उस को जानिये, भये दूर सब बाध ॥ २३३५क
परम शुद्ध आकाश वह, दिव्य रूप लो जान ।
प्राणी उसमें जब बसे, प्राप्त करे विज्ञान ॥ २३३५ख
प्राप्त करे विज्ञान वह, सृष्टि का सब मीत ।
ईश्वर ने जिस बिध रची, भये सकल प्रतीत ॥ २३३५ग
खेचर मुद्रा की कथी, बृहद् भूमि यह मान ।
इस के ऊपर गगन जो, महाकाश तू जान ॥ २३३५घ

महाकाश में प्राणी जाये, असीम गगन वहां वह पाये ।
सहस्र वर्ष विचरे उस देश, प्रतीति काल की भये न लेश ।
खेचरी दिव्य योग यह मीत, वह पाये जिसे गुरु से प्रीत ।
तुम ने पूछी थी जो बात, स्पष्ट कथी मैंने सब तात ।
अब वेला है बहुत विहाई, श्रांत भये हो तुम सब भाई ।
करो जाय अब तुम विश्राम, और भजो चित्त में प्रभु नाम ।

*आकाश में विचरने वाला

वही नाम सुख का है सार, जगतृष्णा बिल्कुल निःसार ।
योगी समझ पाये यह भेद, भजन करे त्यागे सब खेद ।

दो० सकल खेद को त्याग कर, जिस आराधा राम ।
वह ही प्राणी जगत में, भया है पूर्ण काम ॥ २३३६क
भया है पूर्ण काम वह, ईश कृपा से मीत ।
विघ्न अनेकों जगत में, किसे न उन से भीत ॥ २३३६ख
विघ्नों से भयभीत जन, कभी न पावे चैन ।
प्रभु कृपा बिन जीव यहां, रहें दुखी दिन रैन ॥ २३३६ग
इस कारण तुम सज्जनो, करो प्रभु से प्यार ।
प्रभु भक्ती ही योग है, स्मरण रहे सब काल ॥ २३३६घ
सुन सद्गुरु उपदेश को, भक्त भये कृतकृत्य ।
कहन लगे "गुरु देव जी, हम आवेंगे नित्य ॥ २३३६ङ
ऐसी किरपा कीजिये, रहे मग्न यह चित्त ।
चरण आप के त्याग यह, चले न जगत निमित्त" ॥ २३३६च
इस विध विनय उचार कर, कर श्रवण उपदेश ।
चले गये सब भक्त जन, मम मन हर्ष विशेष ॥ २३३६छ

चित्त में मेरे हर्ष विशेष, सुन कर सद्गुरु का उपदेश ।
सद्गुरु के मैं चरण ग्राहे, कृपा कर जो थे वहां आये ।
जिन चरणों का बहु प्रताप, हरता दीन जनों का ताप ।
जिन चरणों को कर के याद, तरते भव जल भक्त अगाध ।
जिन चरणों का दिव्य प्रकाश, दीप्त करे जन चित्त आकाश ।

उन्हीं चरणों का आश्रय पा, बार बार निज भाग्य सराह ।
मैं कीना दण्डौत प्रणाम, सकल वैभव के जो हैं धाम ।
सद्गुरु जी फिर आसन त्याग, नित्य कर्म में गये वे लाग ।

दो० सद्गुरु दीन दयाल जी, नित्य करें उपदेश ।
इस नगरी के भक्त जन, कृतार्थ भये विशेष ।। २३३७क
मनहिं मनावें भक्त जन, मिले सदा सत्संग ।
सद्गुरु के उपदेश का, नित्य चढ़े मन रंग ।। २३३७ख

२९. श्री स्वामी जी का होशयारपुर से प्रस्थान और अमृतसर में पदार्पण तथा वहां के भक्तों को प्रभु भक्ति का उपदेश ।

इस विध सद्गुरु बहु जन तारे, बहुतों के उन रोग निवारे ।
ध्यान दीक्षा कुछ जन को दीन, आशीर्वाद अनेकों लीन ।
फिर चलन की कीन तय्यारी, ग्लानी भक्तन के मन भारी ।
आश्रम से जब लीन विदायी, व्याकुल भयी सकल जगतायी ।
भक्त उमड़ उमड़ जभी आये, देख देव भी थे विस्माये ।
भक्तन का उन रूप ही धार, सभी के संग मिले इक बार ।
देव मनुज की संगत भारी, गई प्रभु की जहां थी गाड़ी ।
नाथ को उस पै कर इस्वार, स्पर्शे पग उनके बहु बार ।
स्पर्श किये सब ने प्रभु चरणा, मोक्ष लाभ जिस का फल वरणा ।
जिन चरणों से गंगा आई, उन पै झुकी सकल समुदायी ।

दो० जिन चरणन के स्पर्श से, भव बाधा हो दूर ।
जिन चरणन के स्पर्श से, मद व मोह हो चूर ॥ २३३८क
जिन चरणन के स्पर्श से, रोग शोक का नाश ।
जिन चरणन के स्पर्श से, ज्ञान जोत प्रकाश ॥ २३३८ख
उन चरणों का स्पर्श कर, भक्तन का समुदाय ।
भया कृतारथ आज था, सद्गुरु किरपा पाय ॥ २३३८ग
सद्गुरु को ले चल पड़ी, अमृतसर की मेल ।
भक्तन के मन थे भरे, जभी चली वह रेल ॥ २३३८घ
गाड़ी को थे ताकते, दूर तलक सब लोग ।
सुधी देह की भूल कर, खड़े जिमि चित्त सोग ॥ २३३८ङ

अमृतसर जभी सद्गुरु आये, भक्त खड़े थे आंख बिछाये ।
गाड़ी से सद्गुरु उतराये, मोटर में फिर सवार कराये ।
गया छेहरटे भक्त समाज, मन में मोद था सब के आज ।
आज भये सभी पूरण काम, सद्गुरु दर्श पाये अभिराम ।
सभी के चित्त अतीव उमंग, सेव भक्ति का चढ़ा था रंग ।
बढ़ चढ़ कर सब करते सेव, प्रसन्न भयें जिमि सद्गुरु देव ।
प्रसन्न भयें जब सद्गुरु देव, कृपा करें तब सब ही देव ।
सद्गुरु देवन के अधिदेव, गुरु के भक्त जानें यह भेव ।

दो० जानें गुरु के भक्त ही, गुरु सेवा का भेद ।
सेवा एक अनेक फल, मिटे सकल भव खेद ॥ २३३९

सद्गुरु आश्रम में पग धारा, स्वर्ग में भी तब बजा नगारा ।

प्रभु रहें वहां सब ही काल, जिन को मुलख प्रिय त्रय काल ।
व्यापक रूप प्रभु अधिवासा, प्रति कण वहां करें प्रभु वासा ।
प्रतिमा रूप रहें वीराज, की दण्डौत मुलख वहां राज ।
दिव्य आशीष प्रभु जी दीन, समाधी भया मुलख तल्लीन ।
बैठे भक्त प्रभु के ध्यान, शिष्य मुलख के परम सुजान ।
मन अर्पा उन सद्गुरु चरणी, तन धन भया समर्पित शरणी ।
सकल भये जब गुरु समर्पण, निर्मल भये चित्त का दर्पण ।

दो० मन निर्मल जब हो गये, सार्थक भये शरीर ।
शिष्य गुरु के धन्य सभी, हरी गुरु भव भीर ॥ २३४०क
चित्त प्रभु में लीन कर, रहे ध्यान आसीन ।
गुरु उठे फिर ध्यान से, शिष्यन आशिष दीन ॥ २३४०ख

सभी शिष्य ध्यान से जागे, सद्गुरु के वे पग आ लागे ।
प्रभु भक्ति का दीन उपदेश, रहस्य योग जिस मांहि विशेष ।
कहा मुलख जी भक्तन ताहीं, सुख सभी प्रभु शरण में आहीं ।
जब तक भजन करें न प्रभु का, ताप मिटे न तन,* मन, जी का ।
रहें कहीं त्रय ताप सतावें, तन दुखिया मन में पछतावें ।
प्रभु भक्ति बिन जीव दुःखारी, नीर बिना जिमि होत शफारी† ।
सुर-सरि-तीर पै रहे प्यासा, दरिद्र हो सुर तरु तल वासा* ।
जागत सोवत सपने मांहिं, लहत न सुख इक पल भी आंहिं ।

*तन, मन, जीवात्मा अर्थात् आधिभौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक तीन प्रकार के ताप ।

†शफारी-शफरी-मछली ।

*प्रभु भक्ति बिन जीव गंगा के तट पर भी प्यासा ही रहेगा और कल्पतरु के नीचे बैठा भी दरिद्र ही होगा ।

जनम जनम युग युग वह रोवे, चैन न पल भर भी इक गोवे ।
मुक्ति हित करे यत्न अनेका, दृढ़ तर बांध पड़े इक एका ।

दो० यत्न अनेकों जन करे, भक्ति से रह दूर ।
निष्फलता उस के लगे, हाथों जान ज़रूर ॥ २३४१क
और बताया मुलख जी, भक्तों को उस काल ।
प्रभु भक्ति की महिम को, हो कर परम दयाल ॥ २३४१ख
अमृत का शुद्ध भोग भी, विष सम उस को होय ।
प्रभु भक्ति को छोड़ कर, जो जन जीवन खोय ॥ २३४१ग
मैं मुलख प्रभु दास हूं, लीना बस यह मान ।
गति एक प्रभु राम की, मीन को जल जिमि जान । २३४१घ
"सेवक" है प्रभु शरण में, इस में ना सन्देह ।
जगत भयंकर रूप है, बिन भक्ति देह गेह ॥ २३४१ङ

आगे गुरु जी फिर समझाया, प्रभु भक्ति का गुण बतलाया ।
हे भक्तो प्रभु को तुम सिमरो, हैं वे सहायक बन्धु सिगरो ।
निर्धन के वे धनी कुबेर, देने में नहीं लावें देर ।
निराधार के वही आधार, मात पिता जन के सुख सार ।
पतित पावन न ऐसा दूजा, भाव भक्ति से कर के पूजा ।
अपने प्रभु को लेय रिझाय, सकल पदार्थ जन जिस से पाय ।
भव जल के प्रभु सुन्दर सेतु, द्रवित भयें शरणागत हेतु ।
कौन ऐसा जग और उपाय, जन ज़िस से सदा सुख ही पाय ।
मात पिता और बन्धु मीत, जन से करें न वैसी प्रीत ।

जैसी प्रभु जी करें जन साथ, प्रभु जी कीना मुलख सनाथ ।

दो० इतना कर के कथन फिर, मुलख झुकाया माथ ।
प्रभु चरणों का स्मरण कर, और कथी फिर गाथ ॥ २३४२

हे भक्तो यदि मम मत मान, भक्ति करो तुम राम पहचान ।
सहज भाव तब हो अनुराग, शोक सकल फिर जायें त्याग ।
प्रभु भक्ति वह अग्न पहचान, भीषण शीत से करत त्राण ।
प्रभु भक्ति वह शीतल वात, बचावे घोर ताप से गात ।
प्रभु जी से जो करत प्यार, सिद्ध भयें सब उस के कार ।
वाम विधि भी होय अनुकूल, विधाता लेखा जावे भूल ।
प्रभु भक्ति महा अमृत पान, अकाल मृत्यु से करती त्राण ।
उसी अमृत को जो पा जाता, द्वार द्वार न भटक दिखाता ।
प्रभु भक्ति वह कल्पतरु भाई, जो माँगो उस से मिल जाई ।

दो० प्रभु चरणों के प्रेम से, सिद्धि मिलत अपार ।
राम रत्ती प्रभु चरण लगि, सिद्ध बनी थी नार ॥ २३४३क
हरिहरानन्द ने किया, प्रभु से सिरफ प्यार ।
सिद्धों के भी गर्व को, चूर कीन उस डार ॥ २३४३ख
इसी मुलख को नाथ ने, पग रज जब से दीन ।
सुधी भुलायी देह की, रक्षा सब विधि कीन ॥ २३४३ग
मम शिक्षा को मान कर, अनन्य भाव से मीत ।
प्रभु चरणों को सिमर लो, दृढ़तम रखिये प्रीत ॥ २३४३घ
ऐसे स्वामी से सदा, हो पाये जो दूर ।

बुरे भाग्य के कारणे, रहत गर्व में चूर ॥ २३४३ङ

मात पिता सम करत दुलार, भक्तन से मित्र सम प्यार ।
कोमल जिन का परम स्वभाव, ऐसे राम लाल महाभाव ।
सेवक के ले मन की जान, रुचि सेवक की लेय पहचान ।
देंय बहुत समझें हैं लेश, ऐसे राम लाल योगेश ।
राम प्रभु की महिम पहचान, भजें निरन्तर उन्हें सुजान ।
भजन निरन्तर करत जो मीत, उसे न लागत जग की भीत ।
प्रभु भजन में कलेश न लेश, मन की माने प्रीति विशेष ।
रीझें तो हों दयालु महान, खीझें तो भी दें निज धाम ।

दो० सभी राम योगेश का, भजन करो मन लाय ।
प्रभु बतलाया भजन का, उत्तम योग उपाय ॥ २३४४क
योग भजन से जान लो, खरा होय जो खोट ।
'सेवक' था किस काम का, जिसे प्रभु दी ओट ॥ २३४४ख

ऐसे स्वामी जी उपदेशा, प्रभु भक्ति का दीन सन्देशा ।
भक्तों ने सुख इससे माना, चित्त सबन का भजन डुबाना ।
एक भक्त कहा मस्तक टेक, भक्त आप के प्रभो अनेक ।
और आप के हैं कई धाम, बोध करावें हे सुखधाम ।
जिन पै आप की दया विशेष, भक्त सिमरे जहां प्रभु हमेश ।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, स्वामी कहा ला मुख पै हास ।
सावधान हो सब सुन पाओ, और प्रभु की महिम ध्याओ ।
विश्व व्यापी प्रभु की दाया, पार उसी का किस ने पाया ।

३०. श्री स्वामी जी द्वारा होश्यारपुर के आश्रम का परिचय अमृतसर के भक्त समाज को देना तथा प्रभु भक्ति का महात्म्य कथन करना ।

प्रभु महिमा के स्थान अनेक, उन में वर्णे हम अब एक ।

दो० प्रभु कृपा जहां पर रहे, जिस में भक्त अनेक ।
होश्यारपुर में आश्रम, भया स्थापित एक ।। २३४५

उस आश्रम से हम हैं आये, बहु भक्तों से मिल हैं पाये ।
क्रिया योग के करने वारे, हमें मिले आ सज्जन भारे ।
सेवक प्रभु के वहां अनेक, सेवा में रत रहे हर एक ।
प्रभु की कृपा कई जन पाई, जिस की प्रभु है वृति टिकाई ।
ध्यान मग्न बैठें बहु काल, प्रभु भये हैं उन पै दयाल ।
योग की क्रिया बहु जन करते, रोग प्रभु रोगिन के हरते ।
आश्रम वह सुन्दर है प्यारा, संग नगर बस्ती से न्यारा ।
सुन्दर सुन्दर वृक्ष लगाये, हमरे मन को बहु जो भाये ।

दो० उस आश्रम में जा करे, साधन जो मम मीत ।
प्रभु किरपा से लाभ हो, हमरे मन प्रतीत ।। २३४६क
प्रभु कृपा की वह स्थली, इस में भ्रम न लेश ।
वहां रहें जो भक्त जन, सिमरें प्रभु हमेश ।। २३४६ख

प्रभु का सिमरन सब जन करते, अन्य किसी को चित्त न धरते ।
प्रभु के ही गुण सब मिल गावें, अन्य देव न चित्त में लावें ।

नित होय वहां प्रभु की पूजा, बढ़ पूजा से काम न दूजा ।
महिमा प्रभु की गाते सारे, भाव भक्ति में हो मतवारे ।
प्रभु सिमरण में सुध बुध खोवें, प्रभु प्रेम में कुछ जन रोवें ।
देह सुधि कुछ नर वहां विसरें, नृत करें मदमत्तवत विचरें ।
प्रभु के दर्शन बहु जन पावें, प्रभु की शिक्षा पर चल पावें ।
प्रभु चरणों में दृढ़ विश्वास, उन भक्तों का गुण यह खास ।

दो० प्रभु चरणी विश्वास जो, गुण उन में यह खास ।
प्रभु का सिमरण ही करें, प्रभु पै राखें आस ॥ २३४७क
प्रभु ही उन के इष्ट हैं, प्रभु के ही वे दास ।
माता पिता बन्धु प्रभु, उनका दृढ़ विश्वास ॥ २३४७ख

प्रभु बिन दूजा देव न मानें, परब्रह्म वे प्रभु को जानें ।
देव सभी उन्हीं के अंगा, जिन चरणों से निकली गंगा ।
उन चरणों के सब अभिलाषी, वे चरण सभी सुख की राशी ।
उन चरणों पै वे मतवाले, ऐसे जन उस आश्रम वाले ।
प्रभु बिन दूजी बात न करते, सिमरें प्रभु ही चलते फिरते ।
बालक वृद्ध युवा वा नार, सब को प्रभु से अतीव प्यार ।
उनके संग रहें प्रभु ऐसे, संग वत्स रहे धेनु जैसे ।
दर्शन देंय भक्तन के तायीं, रहत बहु जन समाधी माहीं ।

दो० समाधि में जन बहु रहें, उस आश्रम के मांझ ।
पूजा प्रभु को करत सब, नित्य प्रातः सांझ ॥ २३४८

भक्त बोले हे नाथन-नाथ, भाग्य जगत का आप के हाथ ।

जिन पै भयी आपकी दाया, उन जनन ने सब कुछ पाया ।
धर्म अर्थ वा काम स्वामी, मोक्ष धाम दें अन्तर्यामी ।
इस से आगे भी कुछ होय, भक्त आप से पावे सोय ।
शरण आपकी जो जन आवे, मनोकाम वह नर पा जावे ।
भाग्यशाली जो जीव महान, वे ही चल तव शरण में आन ।
मन्द जीव नहीं करता प्रीत, विदित उसे नहीं भक्ति रीत ।
बिन भक्ति नहीं होवे योग, कहें सकल इमि विदुषन लोग ।

दो० नाथ हमारा भाव जो, कथें किमि सब खोल ।
मन चाहे हम आप के, सुनें वचन अनमोल ॥ २३४९क
उन के सुन कर भाव युत, वचन स्वामी दयाल ।
कहन लगे हे भक्त जन, राम भजो तुम लाल ॥ २३४९ख
कीन जगत में राम ने, योग शक्ति विस्तार ।
गहे शरण जो राम की, उसका हो निस्तार ॥ २३४९ग

शरण राम की जिस भी ग्राही, सिद्धि जगत में उस ने पायी ।
कांठ राज्य की राज जो मात, स्वरूप भया उस को साक्षात ।
प्रभु किरपा के फल स्वरूप, योग सिद्धि उस पायी अनूप ।
अयोध्या की अवधूतन नार, भ्रांत मतों ने कीन खवार ।
शरण प्रभु की जब मिल पायी, दूर भयी उस की विकलायी ।
हरानन्द जब शरणी आया, प्रभु ने उस को सिद्ध बनाया ।
जसपुर में बालक कुम्हार, प्रभु जी ने उसे दीना तार ।
राम रत्ती शरण में आयी, प्रभु जी ने वह सिद्ध बनायी ।

किस किस का हम करें बखान, पड़ें शरण जभी हो कल्याण ।

दो० गहे शरण जो नाथ की, उसका हो कल्याण ।
'सेवक' मन प्रतीत यह, विमुख रहे हो हान ॥ २३५०क
मेरा बस उपदेश यह, भजो राम ही राम ।
शुद्ध भाव से ग्रहण कर, राम लाल का नाम ॥ २३५०ख

राम लाल को जिस ने ध्याया, उस ने जीवन सफल बनाया ।
राम लाल से जन सुख पाये, सीख राम की जो अपनाये ।
राम लाल साधन सिखलायें, तन मन के वे दोष दुरायें ।
राम लाल को भजो मम मीत, निज जीवन से यदि है प्रीत ।
मानव देह भाग्य से पाया, सफल किया जिस राम ध्याया ।
राम लाल की सीख महान, उस पर चल कर बन इन्सान ।
राम लाल की शिक्षा पाले, जीव जीवन में अघ न घाले[1] ।
सद्‌गुणों को ले वही धार, पुण्य करे दे पाप निकार ।
ऐसी किरपा प्रभु कर पावें, चित्त भक्त का शुद्ध बनावें ।

दो० चित्त भक्त का शुद्ध हो, रहे न अन्तर पाप ।
शरणागत का हो भला, यत्न करें प्रभु आप ॥ २३५१

ऐसे स्वामी को जब पायें, क्यों फिर दर दर ठोकर खायें ।
पल पल करें जो जन रखवार, मात पिता से बढ़ कर प्यार ।
सेवक हो यदि कभी निढार, निज तन लें उसका दुःख धार ।
शरण गहे जो प्रभु की मीत, और करे जो उन से प्रीत ।

[1] अघ न घाले—पाप नहीं करे ।

कलियुग का मल उसे न बाधे, प्रभु चरण वह नित्य आराधे ।
मेरी बात जो लो सब मान, करिये राम का सहज ध्यान ।
प्रभु का ध्यान सूरज प्रकाश, तामस पाप का करत विनाश ।
करे जो प्रभु का सहज ध्यान, योग मुक्त वह भक्त महान ।
वाम विधि भी होय अनुकूल, लोपे भाग्यबदा जोय शूल ।

दो० भाग्य लिखा जो शूल हो, लुप्त भये इस रीत ।
ध्यान प्रभु का नित करो, शिक्षा मेरी मीत ॥ २३५२

प्रभु का ध्यान मधुर अति मीत, अमृत की जिमि धार हो शीत ।
अमृत भोग इसको लो जान, ध्यानी पाय संतोष महान ।
दर दर का ना रहत भिखारी, ध्यान मग्न जो नर वा नारी ।
काम तरु सम प्रभु का रूप, प्रकटा जग में परम अनूप ।
चित्त नमे जभी चरण ध्याय, कौन न फल जन उस से पाय ।
राम प्रभु अवधूता तारी, मम बिगड़ी भी उसी सवारी ।
जिस ने था हरानन्द उबारा, मुझे उसी का मिला सहारा ।
राम रतैया तारी जैसे, मम बिगरी संवारी तैसे ।

दो० कृपा धारी राम प्रभु, तारे जनन अनेक ।
शरण पड़ा जो आय कर, सुखी भया हर एक ॥ २३५३क
सुखी भया हर एक जन, शरण प्रभु की आय ।
राम लाल कलि काल में, भक्तन बने सहाय ॥ २३५३ख
था तपी हरनाम दास, रुधिर बहत जिस देह ।
स्मरण कीन जब उस प्रभु, नाथ दिखाया नेह ॥ २३५३ग

नाथ दिखाया नेह जब, दीना ज्ञान विशेष।
जन्म जन्म की भ्रांत जो, रहा न उस का लेश ॥ २३५३॥

इस विध जन अनेक थे तारे, तारनहार प्रभु रखवारे।
उन की शरण जब जन आ पाय, क्षण में भाग्य बदल तब जाय।
रोगी भये निरोग महान, निर्धन बन पाये धनवान।
चिन्तित भये चिन्ता से मुक्त, मूढ़ भये विद्या से युक्त।
भये पापी पुनीत पुमान, अज्ञानी को मिल गया ज्ञान।
कामी पूर्ण काम हो पाय, क्रोधी का सब क्रोध नशाय।
लोभी के चित्त रहे न लोभ, नशे क्षुब्ध का सकल क्षोभ।
प्रभु निवारें सकल अहंकार, जन भये नहीं कभी खवार।
प्रभु का जन मानो मम मीत, प्रभु किरपा से होत पुनीत।

दो० प्रभु कृपा को पाय कर, रहें न जन में दोष।
क्रोध काम सब दूर हों, नाशे मन का रोष। २३५४

सुन कर सद्गुरु का उपदेश, धन्य भये वे भक्त अशेष।
आज्ञा सद्गुरु से उन पाई, ले लीनी उस काल विदाई।
कहन लगे हम प्रातः आवें, दर्शन सद्गुरु के फिर पावें।
नित्य कर्म में स्वामी लागे, प्रभु भक्ति के वे अनुरागे।
गीत प्रभु के गाते स्वामी, विसार सुधि को अन्तर्यामी।
स्वर ऊंचे में गाते नाथ, कर के चित्त लीन इक साथ।
तन्मय होंय भक्ति में ऐसे, उपमा मिले न जग में जैसे।
राम प्रभु को मुलख पुकारें, नाथ पुनः कब आप पधारें।

तुम बिन तड़प रहे ये प्राण, धीर बंधावो सद्‌गुरु आन ।
आओ नित्य जगत के वाली, दर पै नित्य पुकारे स्वाली ।

दो० नित्य पुकारे जीव यह, दरीं आप के बैठ ।
गले लगा लो नाथ अब, निज आश्रम में पैठ ॥ २३५५

पुनः पुनः वे करत पुकार, नाथ पधारो फिर इक बार ।
अपना दीना वचन निभाओ, पुनः दास को गले लगाओ ।
न्योटों* की तुम ओट हो नाथ, अनाथों को तुम करत सनाथ ।
मान निमानों के हो स्वामी, मम पत राखो अन्तर्यामी ।
तुरत पधारो दीन दयाल, धरा गिरा लो बाल संभाल ।
देख देख हैं पक गये नयन, आप सुनत क्यों न मम बयन ।
धीर ज़रा न मम चित्त धारे, नाथ आप हो मम रखवारे ।
आप संभालो अपना बाल, विलख रहा जो होय बेहाल ।

दो० तव बाल यह विलख रहा, आप पधारें नाथ ।
गले लगावें आन कर, जीवन मम तव हाथ ॥ २३५६

इस विध वह बहु रात बिहानी, रहे ध्यान में मुलख ध्यानी ।
प्रात भयी फिर जन चलि आये, भक्ति भाव से शीष झुकाये ।
मन उन में उमंग थी भारी, प्रकट करें जिज्ञासा सारी ।
ऐसा ज्ञान यहां मिल पाये, भ्रम बुद्धि का तुरत नसाये ।
बुद्धि जीव की रहत भ्रांत, गुरु योगी मिल करते शांत ।
योगिगुरु बहु भाग्य से पाया, यह भी सद्‌गुरु की ही दाया ।

*नि:सहायों

ऐसा चित्त में उन के भाव, प्रकट किया तब उन सद्भाव ।
हे गुरुदेव तव शरणि आये, ज्ञान आप से जिमि मिल पाये ।
जो ज्ञान गत दिवस था पाया, मन का उस बहु खेद मिटाया ।

दो० प्रीत भयी प्रभु चरण में, सुन कर तव उपदेश ।
आज गहें फिर बोध कुछ, लीला कथें विशेष ॥ २३५७क
सुन कर उन की बात को, नाथ कहा मम मीत ।
प्रभु लीला का अन्त न, श्रवण करो ला चीत ॥ २३५७ख

जब जब धर्म का होत ह्रास, पाप बढ़े जग में जब खास ।
दीन दुःखी लें दुःख में श्वास, प्रभु बिन और नहीं जब आस ।
करते जन जब आर्त पुकार, प्रकटें तब जग में करतार ।
ऋषि भूमि भयी योग विहीन, की पाखण्ड ने बुद्ध मलीन ।
योग नियम सब ने विसराये, ढोंगी पुरुष जगत में छाये ।
करें धर्म की आड़ में पाप, फैला जनता मांझ संताप ।
वर्णाश्रम की भयी खवारी, मायासक्त भये नरनारी ।
निज धर्म न कोई पहचाने, धन लोभी हो सभी भुलाने ।

दो० धर्म कर्म को भूल कर, धन के लोभ लुभाय ।
जीवन का परमार्थ जो, गया सबन विसराय ॥ २३५८

ब्राह्मण ने ब्राह्मत्व त्यागा, जन पीड़न में राजा लागा ।
वैश्यों ने चतुराई सीखी, लूट खसोट मचाई तीखी ।
चौथा वर्ण भया अभिमानी, अपने कर्म से भयी ग्लानी ।
इस विध वर्ण धर्म सब छूटा, जन जीवन का बांधहि टूटा ।

आश्रम धर्म का यही हवाल, बिगड़ी सबं की सब विध चाल ।
ब्रह्मचर्य का आश्रम पावन, हरा भरा जीवन का उपवन ।
सूख गये उस के सब पात, बरसी हो नहीं जिमि बरसात ।
गुरु सेवा कर ज्ञान न पाया, विनय विवेक न मन में आया ।
नींव यही तो है मम भाई, जिस पर जीवन की उसराई ।
खो दीना जब यह ही काल, सुधरे किमि फिर जन का हाल ।

दो० बाल्य काल को खोय कर, जन्म गंवाया मीत ।
अधः पतन इस देश का, भया इसी है रीत ॥ २३५६

दूसर आश्रम की प्रभुताई, प्रमादी बन सबन खोपाई ।
गृहस्थी जाने न निज धर्मा, भूला यज्ञ होम सब कर्मा ।
पितर कर्म भी उन विसराये, अर्चन देव भूल ही पाये ।
अतिथि पूजा की त्यागी रीत, स्वार्थ साधन से भयी प्रीत ।
तीजा आश्रम विसर ही पाया, वैराग्य लेश निकट न आया ।
माया में ही रहें भुलाने, काल की सुधि न मन में आने ।
वर्ण धर्म और आश्रम रीत, सभी भये इस के विपरीत ।
ऐसी देख धर्म की हानी, प्रकटे राम प्रभु जी दानी ।

दो० प्रभु जी ने संसार में, प्रकट धर्म के हेत ।
योग धर्म की नींवधर, कीना सबन सचेत ॥ २३६०क

३१. योग की पुरातन परम्परा—भगवान शिव, मत्स्येन्द्र नाथ आदि तथा श्री प्रभु जी का कलियुग में योग उद्धार हेतु अवतार

दो० ऋषियन की संतान को, कीना प्रभु सचेत ।
विषयों के गिर जाल में, हो रहे क्यों अचेत ॥ २३६०ख

सुन कर इस उपदेश को, बोला सज्जन एक ।
नाथ पुरातन योग को, किमि विसरा हर एक ॥ २३६०ग

ऋषिजनों का योग पुरातन, विसर गये जिसको थे सब जन ।
प्रभु जी आ जो पुनः सिखाया, उसका वृत्त न हम सुन पाया ।
किसने था यह योग चलाया, प्रसार किमि इसका हो पाया ।
कौन भये प्रसिद्ध आचार्य, जिन का मान करें सब आर्य ।
उनका कथन करें महाराज, सुनें श्रवणन से हम भी आज ।
योगिन का इतिहास पुनीत, चाह सुनने की सब के चीत ।
प्रभो कृपा कर हमें सुनावें, बात पुरातन हमें बतावें ।
भूले हैं जिसको सब लोग, आज सुनें हम वह ही योग ।

दो० अतीव पुरातन वार्ता, सुनने का मन चाव ।
योगी सद्गुरु चरणि हम, कथन किया निज भाव ॥ २३६१

स्वामी जी जब सुन यह पायी, बात बहुत उन को वह भायी ।
कहन लगे "हे मीत प्यारे, भाव आप के शुद्ध न्यारे ।
कभी न किसी यह पूछी बात, जिस की तुझे जिज्ञासा तात ।
योग परंपरा अति पुरातन, दीना शिव था योग सनातन ।
आदि नाथ तुम शिव को जानो, योग चलाया है उन मानो ।
शिव से ही है सब ने पाया, विष्णु ब्रह्मा ने अपनाया ।
गाथ योग की सब ने गायी, अपने ग्रंथन में कथ पायी ।

मान योग को उत्तम ज्ञान, ग्रन्थन में है कीन बखान ।

दो० परंपरा अब योग की, सुनिये मेरे मीत ।
शिव से पाया योग को, मन जिन्हों ने जीत ॥ २३६२क
नाथ मत्स्येन्द्र इक भये, गोरख जानो दूज ।
शिव से पाया योग इन, दोनों सिद्ध समूच ॥ २३६२ख

मत्स्येन्द्र नाथ

द्वापर में मत्स्येन्द्र थे, कलि में गोरख नाथ ।
दोनों शिव के रूप ये, कीना विश्व सनाथ ॥ २३६२ग
शिव पुत्र कहें एक को, दूजा शिव अवतार ।
योग धर्म का विश्व में, जिन कीना प्रचार ॥ २३६२घ
शिव मुख से ही श्रवण कर, योग लिया जिस पाय ।
वही मत्स्येन्द्र नाथ था, यश जिस का जग गाय ॥ २३६२ङ

राजा रंक बने अनुयायी, किरपा बहु जन पर कर पायी ।
पाप पंक से पापी तारे, दुखियों के उस दुःख निवारे ।
दीना योग धर्म का दान, मत्स्येन्द्र को था पूर्ण ज्ञान" ।
सुन कर सद्गुरु से यह बात, कहा भक्त ने हे जग त्रात ।
कृपा कर कोई घटन बतावें, गाथ मत्स्येन्द्र की सुन पावें ।
योगिजनों का चरित्र महान, हम ने समझ लिया यह ज्ञान ।
चमत्कार हों सहज स्वभाव, सबन प्रति उन का सद्भाव ।
हमारे मन में इच्छा नाथ, श्रवण करें चमत्कारी गाथ ।

दो० घटन अलौकिक हो यदि, वही बतावें नाथ ।

शरणागत के हेत जो, कीन मत्स्येन्द्र नाथ ॥ २३६३क
श्रवण करी जब बात यह, सद्गुरु दीनानाथ ।
कहन लगे हे तात मम, कहूँ नाथ की गाथ ॥ २३६३ख

अलौकिक चमत्कार बताऊँ, मत्स्य नाथ की गाथ सुनाऊँ ।
मत्स्यनाथ ने इक दिन देखा, पड़ा पुरुष उन मारग पेखा ।
हाथ पांव उसके थे नाहीं, पीड़ा से वह बहु विलखाहीं ।
उठ कर खड़ वह कैसे होवे, पांव नहीं जो थिरता गोवे ।
पकड़ सके नहीं कोई वस्त, एक भी बाजू नहीं दुरुस्त ।
भूखा प्यासा लेटा मग में, उपजी दया नाथ के मन में ।
जा पास कहा "मेरे भाई, यह हालत किस विध हो पाई ।
कटे हैं तेरे दोनों हाथ, पांव भी तेरे हैं न साथ ।
काटे किस ने हाथ व पांव, और पड़ा क्यों इसी कुठांव ।
हमें बताओ अपनी बात, देख दुखी मन मेरा तात" ।

दो० इतनी कथा सुनाय कर, सदगुरु दीन दयाल ।
कहन लगे हे भक्त जन, योगी बड़े दयाल ॥ २३६४क
परदुख को तो देख कर, भये दुखी ही चित्त ।
योग धर्म मर्याद यह, समझो मेरे मित्त ॥ २३६४ख

इस विध जब उस ने सुन पाई, निज हालत उस पुरुष बताई ।
कहन लगा 'हे पुरुष महान, पड़ा मैं पापी इसी स्थान ।
मैं अपराधी हूं इक चोर, देखे न कोई मेरी ओर ।
मुझ को मिली है यह सजाई, अंग मेरे कटे हैं भाई ।

मैं तो सदा यहीं रह पाऊं, तड़प तड़प भूखा मर जाऊं ।
मेरे मन अब पश्चाताप, कीना क्यों था मैं ने पाप ।
राज दण्ड को मैं ने पाया, ईश्वर के घर अभी बकाया* ।
कर सको तो यही कर पाओ, देव दण्ड से मुझे बचाओ ।

दो० महापुरुष इक आप हैं, पूरण आप समर्थ ।
यहां पधारे आप हैं, जिमि मेरे ही अर्थ ॥ २३६५

मत्स्यनाथ ने जब सुन पाई, यह कथा उस की दुःखदाई ।
कहन लगा "हे मीत प्यारे, ईश्वर के कौतुक हैं न्यारे ।
पश्चाताप जिस मन में होय, देव क्षमा को वह नर गोय ।
तेरे चित्त है पश्चाताप, और रहे हो सह संताप ।
प्रभु किरपा तुम पर कर पायें, भक्तन को न प्रभु ठुकरायें ।
स्त्येन वृत्ति है तुम ने त्यागी, ईश्वर में लिव तेरी लागी ।
ईश्वर का भय तुझ मन जागा, रहा पापों का न अनुरागा ।
गल मेरे आ तुम मिल पाओ, योग धर्म को अब अपनाओ ।
ईश्वर से हो जिस का प्यार, दुख सागर से वह हो पार ।

दो० इस विध उस को कथन कर, लीना नाथ उठाय ।
गले लगाया जब उसे, हाथ पांव उग पाय ॥ २३६६क
बजे नगारे गगन में, जय जय की भई धुन ।
मत्स्य उबारा चोर को, योगी में बहु गुन ॥ २३६६ख

* द्वापर युग में चोर अपने पापों पर पश्चाताप करता है। वह राज दण्ड पा कर भी इस आशंका में है कि अभी इस से भी अधिक कठोर दण्ड मुझे ईश्वर से मिल सकता है। उसे ईश्वर का भय बना हुआ है।

वह जन गिरा मत्स्य की चरणी, कहन लगा अब मैं तव शरणी ।
मुझे अपना तुम जानो दास, रहूं सदा मैं आप के पास ।
जो आदेश आप से पाऊँ, तुरन्त करूं न देर लगाऊं ।
अपने मग पै मुझे लगाओ, मुझ को अपना शिष्य बनाओ ।
इस विध विनती बहु कर पाया, योग मार्ग तब मत्स्य बताया ।
समय पाय कर हुआ वह सिद्ध, योगियों मांझ भया प्रसिद्ध" ।
सुन कर सद्गुरु से इतिहास, पूछी भक्त बात यह खास ।
नाथ अचरज की है यह बात, उगे चोर के कटे जो गात ।
मत्स्येन्द्र की यह कृपा भारी, पापी को जो तारन हारी ।
हमें बताइये अब भगवान, जिमि स्मरण रहे यह ज्ञान ।
उस डाकू का क्या अभिधान, प्रसिद्ध भया जो योगि महान ।

दो० सुन कर उसके प्रश्न को, कही गुरु जी बात ।
उस का नाम चौरंगिया, स्मरण रहे यह तात ॥ २३६७क
भया चोर चौरंगिया, योग की ऐसी रीत ।
पापी भी तर जात है, कर योगी से प्रीत ॥ २३६७ख
"सेवक" करत बखान है, अनुभव की यह बात ।
कई जनों को तारया, राम लाल साक्षात ॥ २३६७ग

पापीजन को तारन हारे, रामलाल योगिवर प्यारे ।
उन का नाम भी ले जो नीच, धुल जाये सब पाप की कीच ।
ऐसा योग का है प्रभाव, उदय भयें चित्त में सद्भाव ।
मत्स्यनाथ से जो भी लागा, भाव योग का उस मन जागा ।

देश देशान्तर में प्रचार, अनेकों योगी भये तयार ।
योग धर्म विस्तारा जग में, धारें सभी योग को मन में ।
पूछा एक भक्त तब "नाथ, योग की सुन्दर है यह गाथ ।
कौन योगी तब भये तयार, योग का कीना जिन विस्तार ।
उन के नाम हमें बतलायें, पावन कर्ण रन्ध्र कर पायें ।
सुन कर योगिजनों के नाम, क्रोध लोभ वा दूर हो काम ।

दो० योगी जन के नाम में, शक्ति होत महान ।
उसी नाम को जपत ही, मिल जायें भगवान" ॥ २३६८क
देख श्रद्धा भक्त की, गुरु देव महराज ।
कहन लगे हे भक्त जन, श्रवण करो तुम आज ॥ २३६८ख

योगाचार्यों के कहूँ नाम, जो सभी हैं पुण्य के धाम ।
'मीननाथ' और 'गोरख नाथ', जग को इन ने कीन सनाथ ।
'वीरूपाक्ष' 'विलेशय' तात, योगी भये प्रसिद्ध साक्षात ।
'मंथानभैरव' भी था प्रसिद्ध, 'सिद्ध बुद्ध' भी योगी सिद्ध ।
'कंथड़ी' व 'कोरंटक' जानो, इन को सिद्ध पुरुष तुम मानो ।
'सुरानन्द' योगी बहु सिद्ध, 'सिद्धपाद' भी भया प्रसिद्ध ।
'चर्पटी' था इक योगी महान, 'कानेरी' योग सिद्ध सुजान ।
'पूज्यपाद' था भया बिख्यात, 'नित्यानन्द' सिद्ध साक्षात ।
'निरंजन' वा 'कपाली' मानो, स्तम्भ योग के उन को जानो ।

दो० ऐसे ऐसे योगिजन, भये इसी ही देश ।
भूल गये हम नाम तक, महा जनों के लेश ॥ २३६९क

अद्‌भुत यही विडंबना, आदिनाथ ने देख।
महा प्रभु का रूप धर, था कीना उल्लेख ॥ २३६६ख
योग नष्ट जो है भया, हो उस का उद्धार।
राम लाल तुम जाय कर, करो योग प्रचार ॥ २३६६ग
पूर्ण श्रवण कर वार्ता, भक्त अति विस्माय।
शिव शंकर का योग जो, क्यों दीना विसराय ॥ २३६६घ

स्वामी जी आगे कह पाये, फिर योगिन के नाम सुनाये।
'विदुनाथ' एक योगी भारी, प्रजा 'काकचंडीश्वर' तारी।
सुनो 'अल्लाम' योगि का नाम, 'प्रभुदेव' भी योगी ललाम।
'घोड़ाचोली' हुए महान, 'टिंटणी' योगी बहु सुजान।
और नाम कथ दूं मैं भाई, 'भानुकी' योगि जग सुखदाई।
'नारदेव' तो जग प्रसिद्ध, 'खंडयोगी' हुए इक सिद्ध।
'कापालिक' को सब जन जानें, 'तारानाथ' नाम पहचानें।
इतने योगी मैं कथ पाये, कुछ के ही हैं नाम सुनाये*।
भारत देश योग की भूमि, देवों ने भी आ यह चूमी।

३२. योग के प्राचीन ग्रन्थों का ज्ञान श्री स्वामी जी द्वारा भक्तों को देना।

दो० सिद्ध भये जो देश इस, को वर्णन कर पाय।

*प्राचीन प्रसिद्ध कुछ एक योगियों के नाम इस प्रकार हैं—मत्स्येन्द्रनाथ, शाबर नाथ, आनन्द भैरव, चौरंगी, मनिनाथ, गोरक्ष नाथ, विरूपाक्ष, विलेशय, मंथान भैरव, सिद्ध बुद्ध, कंथड़ी, कोरंटक, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कानेरी, पूज्यपाद, नित्यानन्द, निरंजन, कपाली, विदुनाथ, काकचंडीश्वर, अल्लाम, प्रभुदेव, घोड़ाचोली, टिंटणी, भानुकी, नारदेव, खण्ड, कापालिक, तारानाथ।

भारत ऐसा देश है, जो आये तर जाय ॥ २३७०

नाम एक मैं और सुनाऊँ, पावन निज जिह्वा कर पाऊँ ।
'शावर नाथ' योगी विख्यात, ग्रन्थ शावर उन के प्रख्यात ।
विद्वन्मण्डल को है ज्ञान, उन का करें सभी जन मान ।
भक्त जनों ने सुन यह वाणी, कहन लगे हे सद्गुरु ज्ञानी ।
ग्रन्थों का प्रभो कौन बखान, और ग्रन्थ किन रचे महान ।
हमें योग के ग्रन्थ बतायें, रचनहार के नाम सुनायें ।
दुर्लभ भया है योग ज्ञान, लुप्त भये हैं ग्रन्थ महान ।
हम आप से बोध को पावें, पठन पाठन में मन लगावें ।

दो० बोध आप से पाय कर, यौगिक पढ़ें ग्रन्थ ।
साधन सीखें आप से, चलें योग के पंथ ॥ २३७१

सुन कर उन की इच्छा भारी, कहन लगे सद्गुरु पापारी ।
भक्तो हम से लो तुम जान, यौगिक लिखे जो ग्रन्थ महान ।
उन के पठन पाठन की रीत, है जग त्यागी बदली नीत ।
अब पर फिर से होय प्रचार, प्रभु पधारे हैं देह धार ।
अब तुम सुन लो उनके नाम, ग्रंथ बने जो ज्ञान के धाम ।
ऋषियन रचे उपनिषद् भाई, जिन में लिखा योग सुखदाई ।
उन में ध्यान योग का ज्ञान, प्राणायाम का कौन बखान ।
उन में मिले आसन का भान, मुद्रा योग भी वर्णित मान ।
उन में षट्चक्रन का बोध, कुण्डलिनी शक्ति का प्रबोध ।
मिले मन्त्र की उनमें सीख, नाद योग की वहीं परीख ।

दो० सूक्ष्म जानिये योग का, वर्णित उन में ज्ञान ।
ऋषियन रचे उपनिषद, जो ज्ञान की खान ॥ २३७२क
एक भक्त ने श्रवण कर, प्रश्न उसी क्षण कीन ।
नाम कहें जी ग्रंथ का, जिस में सब यह दीन ॥ २३७२ख
सद्गुरु सुन उस की जिज्ञास, कहन लगे शुभ तव विश्वास ।
जिस ने पूछी है यह बात, विशेष गवेशण की मम तात ।
ग्रंथन के कुछ नाम सुनाऊँ, और विषय जो उन में पाऊँ ।

१. हंसोपनिषद्

उपनिषद हंस सुनो मम मीत, नाद योग की जिस में रीत ।

२. नादविन्दूपनिषद्

नादबिन्दू उपनिषद भाई, उस में भी यह बात बताई ।

३. ध्यानविन्दूपनिषद्

ध्यान बिन्दू उपनिषद जानो, वर्णित कई विषय हैं मानो ।
षट्चक्रों का उस में ज्ञान, प्राणायाम और मिले ध्यान ।
मुद्रा, नाद वहां सुखदाई, आतम निर्णय कीना भाई ।

४. अमृतनाद उपनिषद्

अमरितनाद उपनिषद जान, प्राणायाम का दीना ज्ञान ।
दो० जो उपनिषद् कथन किए, उन में ज्ञान विशेष ।
रचन पुरातन काल की, मिलता ज्ञान निशेष ॥ २३७३
इस विध और नाम भी जानो, योग सबन में वर्णित मानो ।

५. त्रिशिखिब्रह्मणोपनिषद्

त्रिशिखि ब्रह्मणोपनिषद एक, जिस में साधन कथे अनेक ।
आसन प्राणायाम बखाने, पञ्चधारणा ध्यान बताने ।
कुण्डली का है दीना ज्ञान, समाधि का भी कीन बखान ।

६. क्षुरिकोपनिषद्

क्षुरिकोपनिषद् एक विशेष, जिस में नाड़िन कथी अशेष ।
सब नाडिन का दीना ज्ञान, जो जो योग में हैं प्रधान ।
प्राण से नाडिन का प्रबोध, हो उपनिषद से ऐसा बोध ।

७. ब्रह्म विद्योपनिषद्

ब्रह्म विद्योपनिषद भी देख, इस में हंस मन्त्र उल्लेख ।
जपे 'हंस' वा 'सोहं' साईं, आतम तत प्रकटे जन ताईं ।

दो० ग्रंथन का तुम बोध जो, चाहो मेरे मीत ।
कथ उपनिषद मैं दीये, सुन आगे ला चीत ॥ २३७४

८. श्रीमद्भगवतगीता

उत्तम योग ग्रंथ बताऊँ, श्रीमद्भगवतगीता गाऊँ ।
व्यास मुनी की रचना मानो, योग का शास्त्र उत्तम जानो ।
अर्जुन और कृष्ण संवाद, शांत करे सब तर्क विवाद ।
भिन्न मतों का एक ही मत, यही गीता का संमत मत ।
भक्ति, सांख्य व योग जो भाई, भिन्न नहीं वे एक इकाई ।
कर्म काण्ड व ज्ञान के पन्थ, और भी कथन करें जो ग्रंथ ।
उन में बात विशेष न कोई, वह लिखा जो योग में होई ।
योग को मानें सब प्रमाण, गीता कथन करे यह ज्ञान ।

जिस ने गीता को लख पाया, मन का भ्रम उस सकल मिटाया ।

दो० गीता के गुण कथन कर, मौन भये जब नाथ ।
धन्य धन्य कहने लगे, सकल भक्त इक साथ ॥ २३७५

६. योग दर्शन

आगे स्वामी जी कथ पाया, और ज्ञान फिर उन कराया ।
आगे श्रवण करो चित्त लाय, योग दर्शन जो ग्रंथ कहाय ।
जगत विदित यह पुस्तक भाई, ऋषि पतञ्जली ने लिख पाई ।
इस के चार पाद तुम जानो, गागर में है सागर मानो ।
सूत्र बद्ध है कीना ज्ञान, आकार लघु है ग्रंथ महान ।
समाधि पाद प्रथम लो जान, ध्यान समाधि का जहां ज्ञान ।
साधन पाद है दूसर मित्त, बताया वश किमी हो चित्त ।
बहु साधन इस में कथ पाये, योग करो जिमि मन वश आये ।

दो० मन एकाग्र हेत वहां, साधन कथे अनेक ।
चित्त टिकाये साधजन, लेय एक की टेक ॥ २३७६क
लेय एक की टेक जो, योग करे मन लाय ।
चित्त एकाग्र होत है, उच्च समाधि पाय ॥ २३७६ख

साधन से जन समाधि पायें, बहुत विभूती भी चलि आयें ।
विभूति पाद तीजा लो जान, सिद्धियों का जिस में है ज्ञान ।
बहु सिद्धियों का कौन बखान, योगी धरे न उन में ध्यान ।
वे सब माया के हैं रूप, योगी चित्त कैवल्य अनूप ।
कैवल्य पाद अन्त में जान, मोक्ष पाये जिमि जन महान ।

परवैराग्य को जब जन पाय, निर्विकल्प समाधि पा जाय ।
चित्त रहे जब ईश में लीन, विचरे वह जिमि नीर में मीन ।
अथवा नीर में बून्द समाय, जीव तभी कैवल्य को पाय ।
रचा पतंजलि ग्रंथ महान, चारों पाद का कीन बखान ।

दो० योग दर्शन कथन किया, सूत्र ग्रंथ महान ।
बखान करूं इक जो अब, सुनिये सहित ध्यान ॥ २३७७

१०. योग वासिष्ठ

योग वासिष्ठ योग का ग्रंथ, बखान किया जिस में यह पंथ ।
वाल्मीकी की सुन्दर रचना, वसिष्ठ मुनि के मनहर वचना ।
श्रवण किया जिस जन यह ज्ञान, पाया उस उपदेश महान ।
वसिष्ठ मुनी योगी था भारी, उस की शिक्षा इस में सारी ।
जब सीख उस राम को दीनी, व्यथा राम की सब हर लीनी ।
व्यापा था जो चित्त में शोक, नाश भया पा ज्ञान आलोक ।
कोई बड़ा न योग से ज्ञान, यही कहें सब सन्त सुजान ।
योग का ले कर जन आधार, शोक व मोह से लागत पार ।

दो० मोह जन्म दे शोक को, शोक लगावे रोग ।
जान लेंय इस रोग की, औषध केवल योग ॥ २३७८क
इसी रोग की औषध, कीन वसिष्ठ बखान ।
श्रवण कीन जो राम ने, शिष्य रूप में आन ॥ २३७८ख

सुन कर सद्गुरु की यह वाणी, निज जिज्ञासा भक्त बखानी ।
प्रभो हमें कुछ बोध करावें, कर विस्तार हमें समझावें ।

क्या लिखा इस ग्रंथ में नाथ, भया था राम जो सुन सनाथ ।
आप नाथ हैं ज्ञान भण्डार, पायें आप से बोध अपार ।
सुन भक्त का प्रश्न यह भारी, कृपानाथ तब गिरा उचारी ।
योग वासिष्ठ ग्रंथ महान, छः प्रकरण इस के लो जान ।
'वैराग्य' 'मुमुक्षु' 'उत्पत्ति' बोध, 'स्थिति' 'उपशम' 'निर्वाण' संबोध* ।
ये प्रकरण इसके हैं सारे, जिन में रहस योग के न्यारे ।
इनको पढ़ सुन लेना ज्ञान, आगे का हम देवें ज्ञान ।

दो० इस ग्रंथ में योग की, शिक्षा मिलत विशेष ।
एक चित्त जो पढ़त है, पावे ज्ञान विशेष ॥ २३७९क
षट्चक्रण का ज्ञान है, समाधि का भी संग ।
प्राण रहस भी मिलत है, जागे जिमि भुजंग[1] ॥ २३७९ख
पंच तत्व की धारणा, वर्णित इस में मीत ।
पंच तत्व को लीन कर, मोक्ष मिले सप्रीत ॥ २३७९ग
योगाभ्यास से हो जिमि, पर देह में प्रवेश ।
ऐसा साधन है कथा, मिले रहस्य विशेष ॥ २३७९घ
मन के हारे हार है, मन के जीते जीत ।
मन का निग्रह हो किमि, कथन किया है मीत ॥ २३७९ङ
अंग योग के बहुत से, वर्णित हैं इस ग्रंथ ।
वसिष्ठ मुनि की सीख यह, गहो योग का पंथ ॥ २३७९च

*योग वसिष्ठ के छः प्रकरण—१. वैराग्य प्रकरण २. मुमुक्षु प्रकरण ३. उत्पत्ति प्रकरण ४. स्थिति प्रकरण ५. उपशम प्रकरण ६. निर्वाण प्रकरण ।

[1]भुजंग—कुण्डलिनी शक्ति

गहो योग का पंथ तुम, मोक्ष लगे तव हाथ ।
दीनी शिक्षा राम को, वसिष्ठ मुनि इक साथ ॥ २३७९छ
और ग्रंथ मैं कुछ बतलाऊँ, सीख योग की जिन में पाऊँ ।
हठ योग के ग्रंथ पहचानो, वह सहित्य अनूपम मानो ।
उन में साधन बहुत बताये, सिद्ध पुरुषों ने जिमि जताये ।

११. शिव संहिता

शिव संहिता तुम जानो एक, जिस में साधन कथा प्रत्येक ।
जो साधन शिव ने बतलाये, वही लिपि बद्ध हैं कर पाये ।
इसमें 'पटल' हैं पांच महान, जिन में वर्णित सकल ज्ञान ।
हठ योग की सीख है दीनी, बहु मुद्रा हैं वर्णित कीनी ।
षट्चक्रण का रूप बताय, प्राणायाम को भी समझाय ।
आसनों का है दीन ज्ञान, राज योग का कीन बखान ।
दो० इस विध साधन योग के, शिव जो कीन बखान ।
वर्णित सकल ग्रंथ में, मिले गुरु से ज्ञान ॥ २३८०क

१२. घेरण्ड संहिता

सावधान अब हो सुनो, इक पुस्तक का नाम ।
घेंरण्ड ने जो है रची, संहिता बहु ललाम ॥ २३८०ख
इस ग्रंथ को जो पढ़े, पूर्ण पावे ज्ञान ।
सब साधन हठ योग के, इस में वर्णित मान ॥ २३८०ग
ग्रंथ 'सप्त उपदेश' का जान, 'सप्त साधन' ही वे लो मान ।
सप्त साधन इस विध लो जान, मध्य उपदेशों वर्णित मान ।

'षटकर्म' योग 'आसन' जान, फिर 'मुद्रा' उपदेश पहचान ।
चौथा 'प्रत्याहार' को जान, सूक्ष्म मानिये जिस का ज्ञान ।
अगला 'प्राणायाम' प्रकरण, 'ध्यान' का कीन षष्ठ में वरण ।
सप्तम 'समाधि' योग बखाना, पूर्ण योग का दीन ज्ञाना ।
घेरण्ड ऋषि इस विध बताया, सरल रीत से योग सिखाया ।
स्पष्ट बात उसने लिख दीनी, योग बिना नहीं मुक्ति चीनी ।

दो० हो न अक्षर बोध बिन, शास्त्र का जिमि भान ।
योग बिना न मुक्ती हो, घेरण्ड कथे ज्ञान ॥ २३८१क
सद्गुरु के इन वचन को, सुन कर भक्त सुजान ।
धन्य धन्य कहने लगे, धन्य नाथ का ज्ञान ॥ २३८१ख
सद्गुरु ने आगे कहा, सुनो सभी मन लाय ।
ऋषि जनों ने हैं रचे, बहु ग्रंथ मन भाय ॥ २३८१ग

१३. गोरक्ष पद्धति

ग्रंथ एक मैं और बताऊँ, गोरख पद्धति नाम सुनाऊँ ।
गोरख नाथ का यह है ग्रंथ, थापा जिस ने योग का पन्थ ।
साधन इस में सब हैं आये, सुगम रीत से जो लिख पाये ।
षट् चक्रण का कीन बखान, नाडिन का भी दीना ज्ञान ।
दश बायू बहु खोल बताये, मुद्राबंध सभी समझाये ।
प्राणायाम की विधि बतायी, ध्यान धारणा सब सिखलायी ।
समाधि को बहु कीन स्पष्ट, जन्म न जीव का जिमि हो नष्ट ।
अजर अमर जिमि जन हो पाये, वे भी हैं उपाय बतलाये ।

दो० पुस्तक गोरख नाथ की, जो पढ़े चित्त लाय।
ज्ञान योग का पाय कर, बहु सुखी हो जाय। २३८२क
श्रवण कीन जब नाथ की, वाणी अति महान।
कथन किया एक भगत ने, सहित अति सन्मान। २३८२ख
और कौन से हैं जग नाथ, रचे ग्रंथ जो गोरखनाथ।
कथे जगत वह था विद्वान, और सिद्ध योगेश सुजान।
उस की महिमा जग में छायी, जगत कथन करत प्रभुतायी।
उस के नाम के बहुत स्थान, मिलें देश में प्रसिद्ध महान।
नाथ हमें जिज्ञासा भारी, बात सुनें श्री मुख से सारी।
सुन कर नाथ जी उन की बात, कहन लगे सुन लो मम तात।
गोरख नाथ का मत बताऊं, रहस धर्म का मैं कथ पाऊं।
यह ऐतिहासिक तथ्य लो जान, गोरख नाथ का काल महान।
योग बिना न धर्म था आन, योगी देते योग का ज्ञान।
धर्म एक बस वह था योग, सृष्टि के सभी मानें लोग।
दो० सृष्टि थी सब मानती, योग धर्म मन लाय।
योग साधन अधीन था, ज्ञान सकल समुदाय॥ २३८३क
योगी जन थे जगत में, परम सिद्ध प्रवीन।
तत्वविजेता होय कर, सृष्टी कीन अधीन॥ २३८३ख
ज्ञान सकल के वे थे स्वामी, सिद्धि सभी उन की अनुगामी।
जीव जन्तु और जड़ चैतन्य, सृष्टि में कुछ और जो अन्य।
सिद्ध योगी के सभी अधीन, वह था एक काल प्राचीन।

गोरखनाथ भया उस काल, जिस का कथन किया हम हाल ।
बहु काल वह काल रह पाया, फिर जनता ने योग भुलाया ।
पन्थ चले फिर बहुत लो जान, योग समान न जिन में प्राण ।
विरोधी पंथ भये उस काल, कलह कलेश बितावें काल ।

३३. योग धर्म के पतन का मुख्य कारण

दो० जभी काल वह आ गया, अंधकार का काल ।
ज्ञान समझ अज्ञान को, उसे लीन संभाल ॥ २३८४

कर श्रवण यह बात नवीन, बीच में बोला जन प्रवीन ।
करिये क्षमा ढिठाई नाथ, पूछूं एक बात इस साथ ।
योग का भया था किमि ह्रास, खोया जगत ने क्यों विश्वास ।
आदर योग का क्यों घट पाया, असत धर्म किमि जग में छाया ।
यह शंका इक मन उपजाई, इसे निवारो जग सुखदाई ।
दिव्य दृष्टि के आप स्वामी, सकल द्रष्टा अन्तर्यामी ।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कथन किया सदगुरु सह हास ।
चिरञ्जीव यह सत्य पहचान, अपना शत्रु स्वयं को मान ।
साधन हीन भये जब योगी, चिह्न धारी वे केवल भोगी ।
शक्ती हीन सभी वे लोग, चिह्न रहे पर रहा न योग ।
कायर धरे जिमि सैनिक वेष, लड़ सके नहीं रन में लेश ।
तिमि धर्म के खेत में मीत, टिक सके नहीं दृढ़ कर चीत ।

दो० योग धर्म को त्याग कर, चिह्न लिए जब धार ।
उन योगिन के कारणे, रुका योग प्रसार ॥ २३८५

साधन रहित योग जो भाई, किमि योग वह हो सुखदाई ।
क्या अभ्यास बिना हो योगी, रिपु योग का अधम वह भोगी ।
साधन योग न कर दिखलाये, केवल ही जो डींग बजाये ।
उस का पोल खुले गा अन्त, पाखण्डी जन किमि होय सन्त ।
एक बात मैं और बताऊं, सत्य बात तुम को समझाऊं ।
योग का जीवन है वैराग, करते योग त्याग के राग ।
माया से अनुराग जो होय, योग से योगी गिरता सोय ।
योग बना जब यश अनुरागी, ऋद्धि सिद्धि की मन लिव लागी ।
काल पतन का तब चलि आया, जग से योग लुप्त हो पाया ।

दो० कारण बस है एक ही, अधः पतन का मीत ।
योगी जन की जानिये, भयी बुद्धि विपरीत ॥ २३८६क
वह साधन को त्याग कर, कर माया से प्रीत ।
अधः पतन में जा पड़ा, काल भया विपरीत ॥ २३८६ख
काल क्षमा न करत है, दुर्बल का हो नाश ।
साधन हीन योगी भया, हो गया तब विनाश ॥ २३८६ग
जिस योगी से डरत था, एक समय खुद काल ।
योग धर्म को छोड़ के, हुआ वही बेहाल ॥ २३८६घ

चिरञ्जीव मैं ने बतलाया, योग नष्ट जिमि था हो पाया ।
योग का शत्रु खुद ही योगी, त्याग योग जो बनता भोगी ।
सुन कर सद्गुरु की यह युक्ति, कथी भक्त ने निज तब उक्ति ।
हे नाथ ! तुम परम मनस्वी, योगी पूर्ण परम तेजस्वी ।

३४. योग धर्म के उद्धार हेतु श्री प्रभु राम लाल का अवतार कथन और शरणागत भक्तों को योग व क्षेम का दान

उत्तर तुम से जो है पाया, युक्ति युक्त वह मनहि समाया ।
एक बात अब मन में आवे, योगोद्धार किमी हो पावे ।
योग पाय जन होय सुखारी, जनता इस बिन पीडित सारी ।
देह से रोगी मन से सोगी, मूढ़ मति विषयों की भोगी ।

दो० जनता को कब सुख मिले, कब करें सब योग ।
दुःख दर्द कब दूर हो, और मिटें सब रोग ॥ २३८७क

सुनी भक्त की बात जब, नाथ भये कृपाल ।
बात बताई रहस की, हो कर परम दयाल ॥ २३८७ख

चिरञ्जीव हम तुझे बतावें, ईश्वर चल जब जग में आवें ।
योग धर्म को वे फैलावें, नर नारी तब सुख को पावें ।
राम लाल हैं प्रभु जग आये, शक्ति उन की योग फैलाये ।
देश देशान्तर में प्रचार, योग का होगा बहु विस्तार ।
प्रभु राम को जो जन ध्यावें, दिव्य चक्षू उन के खुल जावें ।
ध्यान समाधी होवे सिद्ध, वेद विदित है यही प्रसिद्ध ।
राम लाल की शक्ति अपार, सहज पायें न उस का पार ।
जिस भक्त पर दया हो पायी, वह जाने प्रभु की प्रभुताई ।

दो० प्रभु की प्रभुता जानता, वही भक्त मम मीत ।
शरण पड़े जो आय कर, प्रभु चरणि सह प्रीत ॥ २३८८

प्रभु चरणी जो जन चलि आयें, योग धर्म में सब लग पायें ।
अनेक जन उन सिद्ध बनाये, अनेक योग के मग लगाये ।
अनेकों के मन कीने शांत, अनेकों की की दूर भ्रांत ।
अमृतसर में वे प्रकटाये, सकल विश्व के जन अपनाये ।
विश्व सकल उन का उपजाया, भेद भाव न उन चित्त लाया ।
जसपुर का कुम्हार उबारा, हरानन्द पुनः विप्र तारा ।
दुखिया जो अंवधूता तारी, उस की बिगरी प्रभु संवारी ।
राम रत्ती थी पापिन नारी, जगवन्द्या प्रभु कर वह डारी ।
मांसाहारी नागे लोग, किरपा के न लेश भी योग ।
उन पै भी प्रभु किरपा कीनी, शिक्षा योग की जग को दीनी ।

दो० प्रभु को मारन हेत जो, नागे आये लोग ।
वे तो थे ना लेश भी, प्रभु कृपा के योग ॥ २३८८क
दया भण्डारी हैं प्रभु, उन के कोप न चित्त ।
क्षमा धर्म अपनाया, सभी जनों के हित्त ॥ २३८८ख

राजा रणसिंह पाप कमाया, प्रभु पै मारण मन्त्र चलाया ।
उस पै भी प्रभु कोप न कीना, शिक्षा देय शरण में लीना ।
भैरवसिद्ध जो साधु आया, और प्रभु को आ धमकाया ।
उसकी सिद्धी सकल नशायी, कर कृपा प्रभु पुनः लौटायी ।
प्रेत लगा जो मन्दिर भारी, डरती जिस से जनता सारी ।
उस पर भी प्रभु किरपा कीनी, व्याधि सकल उस की हर लीनी ।
तमोगुणी जभी साधु आया, और हठी बन हठ दिखलाया ।

प्रभु न क्रोध कभी भी कीना, कर क्षमा निज आशिष दीना ।

दो० शील क्षमा के हैं प्रभु, सागर एक महान ।
पापी जन भी आय कर, दान दया का पान ॥ २३९०

सवाई* में जिन जन उबारे, दुखी जनों के दुःख निवारे ।
जौहरि को जिन धनी बनाया, चन्दन को जिन काम दिलाया ।
ठाकुर दास पूत थे पाये, बाबू राम कन्या परनाये ।
जिन की शक्ति करे सब काम, जानो वही योगेश्वर राम ।
अनेकों तन थे जिन बनाये, भक्तों के हित वे प्रकटाये ।
दुर्घटना से किसे बचाया*, दर्शन दे कर किसे तराया ।
बच्चों को जिन दीनी शक्ति, प्रभु चरणों में निश्चल भक्ति ।
सांप पकड़ कर सभी उड़ावें, उस प्रभु के किमि गुण गावें ।
गुलाब सिंह पर कीनी दाया, मां गंगा का दर्शन पाया ।

दो० मां गंगा को देख कर, भक्त भया कृतार्थ ।
शरण गहे जो नाथ की, सिद्ध भये परमार्थ ॥ २३९१

होय परमार्थ उस का सिद्ध, साधन भी हों उस के सिद्ध ।
प्रभु योगेश्वर हों जब दयाल, बिगड़ी बने जन की तत्काल ।
योग शक्ति को प्रभु जी लाये, अनेकों चमत्कार दिखाये ।
मान गये जिस विध सब लोग, जानें हैं प्रभु पूरण योग ।
प्रभु जी ने इक ताल बनाया, शक्ति पात उस में कर पाया ।
अन्धी कन्या कीन स्नान, दृष्टि मिली भया चकित जहान ।

*ठाकुर कर्ण सिंह के लिए अलीगढ़ में प्रकट हुए और उसे गाड़ी के नीचे कुचले जाने से श्री प्रभु जी ने बचाया था ।

प्रभु जी कीन गुफा निर्माण, पवित्र उस की माटी जान ।
उस धूली को जो तन लाये, तन मन के बहु रोग दुराये ।

दो० तन मन के बहु रोग जो, व्यापें जग को मीत ।
प्रभु शक्ती से दूर हों, प्रभु चरणि जिन प्रीत ॥ २३६२

प्रभु चरणि जिन प्रीत लगाई, जानी उन प्रभु की प्रभुताई ।
गुफा में प्रभु ध्यान लगाते, दर्शन हित जन गण ललचाते ।
किमि वर्णं प्रभु की दिव रचना, वाणी कथ सके नहीं वचना ।
प्रभु जी सूक्ष्म देह रच पाये, बन्द गुफा से बाहिर आये ।
गगन मार्ग से कीन पयान, विस्मित भया तब सकल जहान ।
घटना नासिक की भी जानें, प्रभु की दिव लीला पहचानें ।
दो तन थे तब प्रभु बनाये, एक देह से वहीं समाये ।
दूजा तन जग में रह पाया, भक्तों को जिस ने अपनाया ।

दो० भक्तों को अपनान हित, प्रभु धरावें देह ।
योग शक्ति उन संग हो, भक्तों से हो नेह ॥ २३६३

उच्च हिमालय तप था कीना, सद्गुरु सेवा में मन दीना ।
दीर्घ काल समाधी लगाते, ऋषियों को उपदेश सुनाते ।
जग जंजाल से रह न्यारे, देव जनों के बन के प्यारे ।
दुःखी जनता का फिर भी ध्यान, बस्तिन में आ गये भगवान ।
घनी बस्ती में कीना वास, दुःख हरें रह जनता पास ।
ऐसे राम ही हैं भगवान, त्रस्त जनों को देवें त्राण ।
उस प्रभु को जो जन ध्यावे, श्रद्धा से जो शरणी आवे ।

योग क्षेम उसे मिल जावे, प्रभु किरपा से सुख ही पावे ।

दो० प्रभु किरपा से मिलत है, उस जन को सब सुख ।
शरण प्रभु की जो गहे, और बने गुरुमुख* ॥ २३९४क
गुरुमुख को सब सुख मिले, सहे न वह संताप ।
राम लाल भगवान ने, कथन किया है आप ॥ २३९४ख

गुरुमुख जन बहु सुख को पाता, गुरुमुख जन निज भाग्य विधाता ।
गुरुमुख जन निज जीवन तारे, गुरुमुख जन परलोक सवारे ।
गुरुमुख जन विद्या को पाता, गुरुमुख जन विद्वान कहाता ।
गुरुमुख जन की समता नाहीं, गुरुमुख जन विरला जग माहीं ।
गुरुमुख जन को देव सराहें, गुरुमुख जन को वेद सराहें ।
गुरुमुख जन योगी बन जावे, गुरुमुख जन मुक्ति को पावे ।
गुरुमुख जन ऋद्धी को पाता, गुरुमुख जन सिद्धी पा जाता ।
गुरुमुख जन में हो सन्तोष, गुरुमुख जन में रहत न दोष ।

दो० गुरुमुख जन ऐसा भये, निर्मल उस का चित्त ।
गुरु का ही मुख पेखता, विसर सकल जग वित्त[1] ॥ २३९५क
राम प्रभु की सीख यह, गुरु सेवी हो साध ।
योग भक्ति का लाभ हो, सद्गुरु पग आराध ॥ २३९५ख

राम प्रभु की महिम अपार, दीन दुःखी जन दीने तार ।
दुःखी ब्राह्मण शरणी आया, फांसी से तब पूत बचाया ।
यमकिंकर जब लेने आये, प्रभु बुढ़िया के प्राण बचाये ।

*गुरुमुख—गुरु का आज्ञाकारी शिष्य । 1वित्त—धन संपदा

राम रत्ती का पिता गरीब, खड़ पाया जब गंग करीब ।
वह लगा छलांग लगाने, अपने लागा प्राण गंवाने ।
प्रभु आये तब उसको तारण, उस के दुःख का कौन निवारण ।
उसका जीवन प्रभु बचाया, कौन अलौकिक उस पर दाया ।
पाप पंक से कीना पार, कलंक सम्पूर्ण दीन निवार ।
उस की पुत्री सिद्ध बनायी, पूजन लगी जिसे जगतायी ।
जिस ने कुलटा नारी तारी, भज लो राम वही पापारी ।

दो० राम प्रभु का भजन कर, लागो जग से पार ।
ऐसा दु ख न जगत में, सकें न प्रभु निवार ॥ २३६६क
प्रभु निवारें सकल दुःख, है यह जग प्रसिद्ध ।
हे मन प्रभु का भजन कर, कीने जन जिन सिद्ध ॥ २३६६ख

जिसने कीने बहु जन सिद्ध, विरद है जिस का जग प्रसिद्ध ।
जिस को काक भुषुण्डी जाना, वर्णित कीना कलियुग आना ।
गुरुओं के कथ गुरु जो पाये, प्रभुओं के भी प्रभु बतलाये ।
निराकार के जो अवतारी, वर पावें जिस से नर नारी ।
भक्त जनों को जो अपनावें, दुःख निवारें सुख दे पावें ।
रे मन उसी प्रभु को जपले, गृहण उसी के पग तू कर ले ।
उस को भूल कभी न जाना, चाहो यदि जग में सुख पाना ।
सुख का मूल प्रभु को जान, सुखद प्रभु, जग दुखद महान ।

दो० सुखदायक हैं नाथ जी, दुखदायक संसार ।
मनन शील जो जन भये, लागे भव से पार ॥ २३६७क

लागे भव से पार वह, प्रभु पै रख विश्वास।
भक्त प्रभु को सिमरता, व्यर्थ न खोत श्वास ॥ २३६७ख

आगे स्वामी जी कथ पाया, भक्त जनों को फिर समझाया।
प्रभु भक्ती जिस जिस ने कीनी, प्रभु किरपा से सद्गति लीनी।
माला देवी नार बिचारी, मंद कर्म वह दुख की मारी।
छत से गिर जब मर वह पायी, प्रभु चरणी उसकी रुह आयी।
प्रभु जी किरपा दृष्टी डाली, तभी प्रभु जी रूह संभाली।
दिव विमान में उसे चढ़ाया, दिव्य लोक में उसे भिजाया।
दिव्य लोक के वे हैं स्वामी, प्रभु सुख दायक अन्तर्यामी।
शरण प्रभु की जन जो आये, दिव्य लोक में सुख वह पाये।

दो० शरण प्रभु की पाय कर, सुखी भये नर नार।
दिव्य लोक का सुख मिले, अथवा मोक्ष अपार ॥ २३६८

मोक्ष परम को वह ही पावे, जो जन प्रभु भजन मन लावे।
प्रभु से करे जो निश्छल प्यार, त्यागे लोभ क्रोध वा मार।
मोह जगत का वा अहंकार, करे त्याग कर प्रभु से प्यार।
उस जन पर प्रभु होंय दयाल, परम सुखी वही जन सब काल।
दुःख से पीड़ित भी जन आवे, कर्म जिसे अति घोर सतावे।
प्रभु लें उस का दुख भी भोग, और हरें उस भक्त का सोग।
मानिक चन्द दलाल पधारा, रोगक्षय का था बहु मारा।
उस का रोग प्रभु जी लीना, स्वास्थ्य लाभ उस जन को दीना।
अद्भुत कर्म प्रभु कर पायें, निज तन पर जन के दुख लायें।

दो० निज तन पर जो भोग लें, जन के दुःख अपार ।
रे मन उन को सिमर ले, प्रभु जन पालन हार ॥ २३९९क
प्रभु जन पालन हार हैं, सिमर प्रभु सब काल ।
सिमर २ फिर सिमर ले, प्रभु सम कौन दयाल ॥ २३९९ख
जग में प्रभु सम दयाल न, ऐसा रख विश्वास ।
प्रभु चरणों को सिमरता, जन वह जानो खास ॥ २३९९ग

प्रभु चरणों को जिस ने सिमरा, पाप हरा प्रभु उस का सिगरा ।
पाप हरा तब ताप नसाया, प्रभु की हे मन अद्भुत दाया ।
मारग वामी पापी तारे, मन्दिर से जिस भूत निकारे ।
दूर भया मन्दिर का दोष, मिटा सकल जनता का रोष ।
देवों ने पूजा स्वीकारी, मन्दिर में तब रहें पुजारी ।
प्रभु के गुण हम किस विध गायें, शब्द नहीं जो सब कथ पायें ।
ब्रह्मा भी यदि जीवन हारे, सकल मति निज सरस्वती वारे ।
तो भी प्रभु के गुण की गाथा, सकें न वे सब कथ इक साथा ।

दो० प्रभु के गुण को कथ सके, को पाय कृपा पार ?
परब्रह्म भगवान जी, उतरे ले अवतार ॥ २४००क
रामलाल भगवान हैं, परब्रह्म अवतार ।
शरणी सेवक जब लगे, करते भव से पार ॥ २४००ख

किस किस को न प्रभु जी तारा, शरण पड़ा जो उसे उबारा ।
गुलाब देवी शरणी लागी, अखण्ड समाधी उस की लागी ।
हरस्वरूप शरण में आया, यवनों से था उसे बचाया ।

हरस्वरूप की कन्या प्यारी, छत से जब थी गिरी बिचारी ।
प्रकट भये तब जग के स्वामी, गोद उठायी अन्तर्यामी ।
अग्नि चिखा में जलने लागा, चण्डी भक्त प्रभु पग लागा ।
प्रकट भये तत्काल स्वामी, अग्नि बुझाई अंतर्यामी ।
भक्तहेत निज तन झुलसाया, गुलाब देवी दर्शन पाया ।

दो० भक्त हेतु जो लेंय दुःख, निज तन पर ही धार ।
उस प्रभु के चरणों में, हो सदा नमस्कार ॥ २४०१

नमस्कार हो प्रभु के चरणी, नमस्कार जो राखे शरणी ।
नमस्कार जो भव के त्राता, नमस्कार जो सुख प्रदाता ।
नमस्कार जो बन्ध निवारे, नमस्कार जो जग से तारे ।
नमस्कार जो भक्त सहायी, नमस्कार जो सब सुख दायी ।
नमस्कार जो लाये न देर, नमस्कार जो आये सवेर ।
नमस्कार जो सदकल्याणी, नमस्कार जो टारे हानी ।
नमस्कार जो जग पित–माता, नमस्कार जो सर्व विधाता ।
नमस्कार जो करे इक बार, रक्षक उस के होंय करतार ।

दो० नमस्कार जो जन करे, और झुकावे माथ ।
मन में सिमरण जो करे, रहें प्रभु उस साथ ॥ २४०२क
रहत प्रभु उस साथ ही, भक्त हेत भगवान ।
करत प्रभु निज भक्त का, सदा सदा कल्याण ॥ २४०२ख

सभी भक्तों को प्रभु उबारा, लिया जिन्होंने प्रभु सहारा ।
जब सरस्वती चरणी लागी, रह पायी न राज्य अनुरागी ।

उस को प्रभु तद्रूप बनाया, दर्शन दिव्य उसे दिखलाया ।
उस के दासी दास उबारे, कुछ कमी नहीं प्रभु के द्वारे ।
चिटम्मा दासी भयी कृतार्थ, उस का सिद्धभया परमार्थ ।
दिव दर्शन उस ने भी पाया, प्रभु जी की सब पै बहु दाया ।
हरिहरराय जो जज महान, प्रभु से जब उस लीना ज्ञान ।
उस की बदल गई फिर काया, योग धर्म को उस अपनाया ।

दो० योग धर्म अपनाय कर, लीना व्रत उस धार ।
प्रभु को ही मन धार कर, न्याय करूं सब काल ।। २४०३क
न्याय करूं सब काल में, न्याय होय मम काम ।
दण्डित होंय अपराधी, मुझे ज्ञान दें राम ।। २४०३ख
न्याय से ही जगत चले, न्याय करत भगवान ।
न्याय पै जभी जन चलें, मुदित भयें भगवान ।। २४०३ग

न्याय जगत का है आधार, न्याय कर्ता है खुद करतार ।
न्याय जगत का बन्धन भाई, न्याय बिन जग में न सुख राई ।
न्याय बिन जग में बढ़े क्लेश, न्याय बिन जग में सुख न लेश ।
न्याय बिन हो उपद्रव भाई, न्याय बिना जीवन दुखदाई ।
न्याय बिना जो राज्य चलावे, दण्ड दैव का वह नृप पावे ।
न्याय करे न न्यायाधीश, दण्डित करे उसे जगदीश ।
निरपराधी यदि दण्ड पाये, दैव का आसन भी डुलाये ।
न्यायाधीश ने इमि अनुमान, प्रभु चरणी लगि पाया ज्ञान ।

दो० प्रभु चरणी जब लग गया, भया परम संतोष ।

निज धर्म नित्य पालता, न्याय करत बिन रोष। २४०४क
न्याय करत बिन रोष वह, ऐसा भया सुयोग।
प्रभु चरणी जब जन लगे, सहज करे वह योग॥ २४०४ख
प्रभु जी रक्षा करत हैं, शरण गहे जब दास।
संकट में हों प्राण भी, प्रभु बंधावें आस॥ २४०४ग

बसंती का प्रभु सुत बचाया, यमलोक से उसे लौटाया।
तारा देवी मरने लागी, पुत्री उस की प्रभु पग लागी।
प्राण बचाये प्रभु जी उसके, 'सेवक' किमि कथे गुण प्रभु के।
सत्यवती इक भजन सुनाया, भक्ति भाव से प्रभु रिझाया।
प्रभु ने उसको वर दे पाया, मीरा का ही रूप बनाया।
मास एक की लगी समाधी, मानस की मिटी सभी व्याधी।
प्रभु हैं ऐसे दीन दयाल, भज मन उन को तुम सब काल।
एक भी न क्षण जाये व्यर्थ, लागे जीवन योग के अर्थ।

दो० चित्त योग में ही रमे, प्रभु की ले कर शरण।
'सेवक' को है मिल गई, नौका प्रभु के चरण॥ २४०५

प्रभु चरणों को नौका जानो, पार करे भव जल से मानो।
श्रद्धा से जो होत स्वार, बिन श्रम भव से लागत पार।
ध्यान प्रभु का जो कर पाये, उन को जो फिर चित्त रमाये।
उस के मिटते सकल क्लेश, हे जन सोच तू मन में लेश।
सुन नाथ से गाथ यह खास, उपजा भक्तन चित्त विश्वास।
सब कहें "हे सद्गुरु स्वामी, आप ज्ञानी अन्तर्यामी।

३५. प्रभु स्वरूप के ध्यान की सरल विधियां

हम जानी जो आप बतायी, प्रभु की महिम समझ में आई ।
हमारा मन अब माने बात, प्रभु सेवा में अर्पें गात ।
एक बात अब और बतावें, प्रभु का ध्यान किमी कर पावें ।
प्रभु के ध्यान की विधि बताओ, योग मार्ग में हमें लगाओ ।

दो० ध्यान प्रभु का हम करें, एकाग्र होय चित्त ।
वर्षा किरपा की भये, शांति इसी निमित्त" ॥ २४०६

नाथ सुनी जब उनकी बात, कहन लगे हे सुन लो तात ।
ध्यान प्रभु का मैं बतलाऊं, सरल रीत से सब कथ पाऊँ ।
लक्ष्य ध्यान का यह पहचान, चित्त दर्पन में प्रभु को आन ।
ध्यान करो तुम इमि मम मीत, प्रभु बसें जिमि तुमरे चीत ।
प्रभु के सन्मुख निज को देखो, मन मन्दिर में उन को पेखो ।
उन का सुन्दर रूप पहचान, मन मन्दिर में ईश्वर जान ।
उन का तेजोमय स्वरूप, मन को मोहित करे वह रूप ।
अंग सकल बहु उन के प्यारे, दिव तेज से उज्ज्वल न्यारे ।

दो० दिव्य तेज उन में बसे, ऐसे उज्ज्वल अंग ।
निरख निरख जन दृढ़ करे, भक्ति भाव का रंग ॥ २४०७क
प्रभु चरणों में बैठ मन, करे प्रभु से प्रीत ।
ध्यान योग की जान लो, उत्तम है यह रीत ॥ २४०७ख

मन से ही जन करे उपासन, मन में माने प्रभु का शासन ।
प्रभु चरणों में टेके माथ, भेंट धरे मन पुष्प भी साथ ।

चन्दन काठी ले फिर हाथ, तिलक बनावे प्रेम के साथ ।
तिलक लगावे प्रभु के भाल, गल पहनावे पुष्प की माल ।
दिव पुष्प की माल पहनावे, गन्ध अलौकिक जिस में पावे ।
उन पुष्पन पर भौंरें आवें, निरख प्रभु उन को मुस्कावें ।
प्रभु मुख पर सुन्दर मुस्कान, धवलित उस से सब थल जान ।
प्रभु मुस्कान निरख मन पाये, निज सुध को ही वह विसराये ।
मन जब भूले आपा मीत, ध्यान की जानो सुन्दर रीत ।

दो० सुन्दर रीति ध्यान की, सरल और सुखदाय ।
प्रभु को मन में निरख इमि, नित आपा विसराय ॥ २४०८क
इस विध करता नित्य जो, ध्यान प्रभु का मीत ।
प्रभु चरणों में मन रहे, बढ़े प्रभु से प्रीत ॥ २४०८ख
सुन सद्गुरु उपदेश को, सज्जन भये कृतार्थ ।
सोचें सिमरन हम करें, सिद्ध भये परमार्थ ॥ २४०८ग
प्रभु चरणों के ध्यान की, सुगम बहुत यह रीत ।
आज मिला उपदेश जो, कभी न भूलें मीत ॥ २४०८घ

कभी न यह उपदेश भुलावें, ध्यान प्रभु का नित कर पावें ।
नित्य प्रातः उठ कर मीत, लगावें प्रभु चरणों में चीत ।
मन में उन को शीश झुकावें, मन में उन का आशिष पावें ।
मन में ही हम तिलक लगावें, माला भी मन में पहनावें ।
मन में प्रभु से नाता जोड़ें, मन में ही जग से मुख मोड़ें ।
मन में ही हमें देवें ज्ञान, पावें ध्यान में सुख महान ।

दीना सद्गुरु जो उपदेश, योग जीवन का श्री गणेश ।
सद्गुरु हम को योग सिखाया, दिव जीवन का राह दिखाया ।

दो० ध्यान योग की मिल गयी, सीख हमें है मीत ।
सद्गुरु के उपदेश से, युक्त भये गा चीत ।। २४०९क
कहा सबन ने प्रेम से, दोय जोड़ के हाथ ।
मिली हमें शुभ सीख है, ध्यान योग की नाथ ।। २४०९ख
भये कृतार्थ सभी जन, सुन कर यह उपदेश ।
शिक्षा हम को दीजिये, और यदि कुछ शेष ।। २४०९ग
सुन कर उन की प्रार्थना, सद्गुरु भये दयाल ।
कथन कीन उन ओर तब, ध्यान विधि तत्काल ।। २४०९घ

सुन लो भक्तो इसके आगे, प्रभु पूजन में मन जब लागे ।
आरति की तब करे तयारी, मन लावे इक सुन्दर थारी ।
धूप दीप उस में घर पावे, प्रभु सन्मुख सप्रेम फिरावे ।
जय सद्गुरु जय सद्गुरु गावे, मन ही मन यह धुनी उठावे ।
दीरघ काल करे वह पूजा, विचार करे न कुछ भी दूजा ।
प्रभु के सुन्दर चरण निहारे, आरति में फिर यही उचारे ।
जय सद्गुरु जय सद्गुरु प्यारे, भक्तों के तुम संकट टारे ।
कलिमल के तुम हर्ता स्वामी, आर्त हरो मम अन्तर्यामी ।

दो० आर्त हरो मम नाथ जी, सुन मम आर्त पुकार ।
शरण पड़ा हूं आप की, अपनावो कर्तार ।। २४१०

इस विध ध्यान लगावे साध, प्रभु का पूजन हो निर्बाध ।

प्रभु पूजन में चित्त लगावे, प्रभु पूजन मन में कर पावे ।
स्तोत्र प्रभु का मन में गावे, स्वरूप प्रभु का न विसरावे ।
मन में करे जब जन उपासन, प्रभु के सम्मुख ला कर आसन ।
प्रभु किरपा से ध्यान दृढ़ावे, योग समाधी को पा जावे ।
सरल रीत जो मैं बतलाई, ध्यान विधि जो यह समझाई ।
इसे करे जो नित्य निरन्तर, शुद्ध भये उस का अभ्यन्तर ।
मन जो विषयों का आगार, इस विध बनता प्रभु का द्वार ।
विषय जगत के दुःख के मूल, प्रभु चिन्तन से हों निर्मूल ।

दो० चिन्तन से निर्मूल हों, विषय जगत के मीत ।
पांचों वैरी प्रास्त हों, प्रभु बसें जब चीत ॥ २४११क
बिना प्रभु को चित्त धरे, बने न कुछ भी काम !
हाथ लगे सब सिद्धि तब, चित्त बसें जब राम ॥ २४११ख

राम प्रभु को सिमरो मीत, ध्यान धरो उन को धर चीत ।
जीवन का इमि लाभ उठावो, सुख परम इस जन्म में पावो ।
जो योगेश्वर राम ध्यावे, योगसिद्धि वह सुख से पावे ।
राम की कृपा के फल रूप, सिद्ध बने जन सहज स्वरूप ।
योगेश्वर बिन योग कमाना, बिन जल के है प्यास बुझाना ।
सिद्धि लगे नहीं उसके हाथ, प्रभु किरपा नहीं जिसके साथ ।
हरानन्द जिस सिद्ध बनाया, राम रती का ध्यान लगाया ।
सिमरें जिसे असंख्य सुजान, वनों में योगी करते ध्यान ।
दीर्घ काल समाधी लगावें, राम प्रभु को मन में ध्यावें ।

उस को ही तुम सिमरो भाई, मन एकाग्र सहज हो जाई ।

दो० चित्त एकाग्र सहज हो, चित्त राम में लाय ।
राम बिना तो ध्यान का, व्यर्थ परिश्रम जाय । २४१२क
सदगुरु से सुन वारता, भक्त कीन अरदास ।
नाथ बतायी आप ने, विधि ध्यान की खास ।। २४१२ख

हे नाथ ! हम को बतलावें, कर किरपा अब यह समझावें ।
कर के आरती हे भगवान, किमि करें फिर प्रभु का ध्यान ।
हमारे मन की यह जिज्ञास, तृप्त करें बस यह अरदास ।
श्रवण करी सद्गुरु वह बात, कथन किया उन हे मम तात ।
अब वेला है बहुत विहाना, प्रातकाल तुम फिर आ जाना ।
योग की बात गूढ़ यह मीत, सुनना प्रातः ला कर चीत ।
इतना कथ सद्गुरु उठ पाये, नित्य कर्म हित तभी सिधाये ।
हर्षित थे सब शिष्य सुजान, पाकर योग का ज्ञान महान ।
कहें परस्पर सब यह बात, हम शीघ्र आवें लौट प्रात ।
मिले योगी के दर ही ज्ञान, ऐसा न कोई और स्थान ।

दो० ऐसा थल न जगत में, जैसा योगी द्वार ।
लौटे पा कर बोध जन, जो आये इक बार ।। २४१३

जानो योगी ज्ञान भण्डार, बोध पाये जन उस के द्वार ।
संशय रहे न आ उस द्वार, कृतार्थ जन हो आ इक बार ।
योगी सर्व सुखों का दाता, योगी ज्ञान दिव्य प्रदाता ।
योगी करे भ्रमों का नाश, आवागमन का करत विनाश ।

योगी के दर सिद्धी सर्व, योगी के दर संपत खर्व ।
योगी दीन पे होय दयाल, योगी शरणागत प्रतिपाल ।
योगी को जो करत स्मरण, उस के कटें जन्म व मरण ।
योगी को जो नित्य ध्यावे, पाप ताप उस निकट न आवे ।

दो० पाप ताप उस जीव के, निकट न आवें मीत ।
योगी का जो करत है, ध्यान सदा सप्रीत ॥ २४१४क
ध्यान सदा सप्रीत जो, करत एकाग्र होय ।
वह मानुष तो जगत में, सहज दुःखी न होय ॥ २४१४ख

इस विध सब जन लौट सिधाये, निज निज घर में वे जन आये ।
प्रात भयी फिर आन पधारे, सदगुरु चरणों के वे प्यारे ।
सदगुरु चरणी शीश झुकाया, बैठ गये जब आशिष पाया ।
सदगुरु जाने सब का भाव, योग ध्यान का उन मन चाव ।
कहा नाथ ने सुनिये मीत, समझो ध्यान विधि ला चीत ।
प्रभु ध्यान की सरल जो रीत, हर जन करत उसी से प्रीत ।
पूछी थी तुम ने जो बात, उत्तर उस का दें अब तात ।
प्रभु की आरती कर सप्रीत, प्रभु के अंग भजो मम मीत ।
इक इक अंग प्रभु का ध्यावो, इस विध चित्त प्रभु में लावो ।

दो० प्रभु के हर इक अंग को, जो ध्यावे सप्रीत ।
चित्त एकाग्र सहज में, हो उस का मम मीत ॥ २४१५

प्रथम प्रभु के चरण ध्यावो, दिव्य चरणों में चित्त टिकावो ।
सुन्दर चरण कमल मम भाई, मन में सिमरो वे सुखदाई ।

उनका पल भर का भी ध्यान, प्रदान करत जन मन में ज्ञान ।
प्रभु चरण हैं योग के दाता, प्रभु चरण संतोष प्रदाता ।
प्रभु के चरण परम सुखदायी, सिमरो चरण कमल वे भाई ।
प्रभु चरण ले जो जन ध्याय, जन्म मरण से मुक्त हो जाय ।
प्रभु चरण का दिव्य प्रकाश, बुद्धी का तम करत विनाश ।
मन में प्रभु चरण जब आयें, भव भय तुरत सकल बह जायें ।

दो० चरण प्रभु जो भजत है, मानव तन को पाय ।
योग युक्त वह जन भये, परम गति को जाय ॥ २४१६

प्रभु के कोमल कोमल चरणा, अरुण कमल वत उनका वरणा ।
रेखा दिव हैं उन पै अंकित, सकल विभूती लिखी निशंकित ।
सुन्दर अंगुल और अंगुष्ठ, निरख निरख मन भये संतुष्ट ।
नखमणियों की ऐसी ज्योत, घन तड़ित की मनु प्रद्योत ।
उस ज्योति में चित्त हो लीन, भस्म भयें सब भाव मलीन ।
मन का कलुष तभी मिट पाये, जब जन उसमें चित्त लगाये ।
यही ज्योत है ब्रह्म की ज्योत, भानु जिस से पाये प्रद्योत ।
भाग्यवान जो जन हो भाई, वही निरखे इसे मन लाई ।

दो० प्रभु नख ज्योति चन्द्रमा, जन मन भये चकोर ।
निशिदिन जब निरखत रहे, जन्म न भये बहोर ॥ २४१७

प्रभु के आसन को भी ध्यावो, पद्मासन में चित्त लगावो ।
दृढ़ प्रभु का ऐसा आसन, बैठ करें मन पै वे शासन ।
पांव टिके जंघों पै ऐसे, कमल खिले हो सर में जैसे ।

जानु टिके भूतल के संग, जिमि बैठे दो हंस निसंग ।
जानु ऊपर धरे जो हाथ, उन को भी जन देखे साथ ।
इस आसन का करे जो ध्यान, युक्त चित्त वह बने पुमान ।
कमलासन को कमल ही जान, जग में रहें प्रभु कमल समान ।
निरख निरख यह आसन भाई, अनेकों भक्तन मुक्ति पाई ।

दो० शिक्षा प्रभु दें जगत को, पद्मासन ला मीत ।
रहो जगत में पद्म सम, शुद्ध रहे तव चीत ॥ २४१८

प्रभु जी की फिर कमर निहारो, मन अपना तुम उस पै वारो ।
प्रभु की कमर है सिंह समान, सिंह सम शक्ति प्रभु में जान ।
भक्त करें इस रूप से प्यार, मानें दुष्ट दूर से हार ।
नाभी में फिर चित्त टिकावो, प्रभु नाभी के दर्शन पावो ।
नाभि मध्य भंवर का कल्प, जिस में डूबें सर्व संकल्प[1] ।
चित्त समावे नाभी मांझ, निकल पाये न प्रातः सांझ ।
इस में है आकर्षण भारी, ध्यान करे सो हो बलिहारी ।
देह सुधी वह भक्त भुलावे, प्रभु की नाभी को जो ध्यावे ।

दो० प्रभु नाभि में देख ले, सूरज सम प्रकाश ।
भक्त चित्त है कमल सम, उसका भये विकास ॥ २४१९

प्रभु जी का फिर वक्ष निहारो, वृत्ति को वहां लय कर डारो ।
वहीं मिलेगा एक निशान, भृगु मुनी के पाद का जान ।
जब जब प्रभु जी लें अवतार, संग रहत वह चिह्न अपार ।

[1]श्री प्रभु जी की नाभि संसार सागर के बीच भंवर के तुल्य है। यहां चित्त लगाने पर जन के संकल्प विकल्प डूब कर समाप्त हो जाते हैं। और चित्त सदा उस में मग्न रहता है।

पाद चिह्न भृगु ऋषी लगाया, घोषित तब उस ने कर पाया ।
सब देवों के देव अधिदेव, प्रभु से बड़ा न कोई भी देव ।
ये पूर्ण हैं न्यूनता नाहीं, इन सम नहीं त्रिलोकी माहीं ।
इनकी शरण गहे जो प्राणी, कदापि होय न उस की हानी ।
वक्षस्थल प्रभु जी का जान, भक्तों का वही जीवन मान ।

दो० शरण गहें जो भक्त जन, लावें सीने* संग ।
क्षण में निर्भय करत हैं, निज बनावे अंग ॥ २४२०

स्कंधों को फिर उनके देखो, स्कंध वृषभसम हैं वे लेखो ।
उन कंधों पर जग का भार, उठाया प्रभु ने ले अवतार ।
शरणी जो जन चल के आया, प्रभु ने उसका बोझ उठाया ।
प्रभु का भक्त ले सुख का श्वास, प्रभु शक्ती पर रख विश्वास ।
प्रभु के सुन्दर स्कंध महान, भक्त जनों के संबल जान ।
सकल विश्व के जो आधार, उन स्कंधों पर भार अपार ।
रे मन उन पर हो अस्वार, भव सागर कर सुख से पार ।
तेरा केवल यही सहारा, प्रभु बिन रक्षक को तुम्हारा ।

दो० प्रभु कन्धों का ध्यान धर, प्रभु आश्रित जन जोय ।
प्रभु रक्षक उस भक्त के, मन भी निश्चल होय ॥ २४२१

सुन्दर सुन्दर स्कन्ध महान, पीन पुष्ट और बहु बलवान ।
उनको लीना जिस मन धार, उसको मिले आनन्द अपार ।
रे मन प्रभु का धर तू ध्यान, उन को ही निज लक्ष्य पहचान ।

*सीना—वक्षस्थल

अब तू प्रभु का कण्ठ ले देख, उस की मोहक रेख को पेख ।
मनहर हार जनन पहनाये, चुनचुन पुष्पन के बनवाये ।
उन पै बन जाये चित्त भौर, वही मुक्ति का जान के ठौर ।
कण्ठ माल की गन्ध पहचान, मिले न ऐसी वास जहान ।
गुलाब चमेली आदि फूल, इन की गन्ध में जा तू भूल ।

दो० कण्ठ माल की गन्ध में, जब जाये तू भूल ।
तीन ताप त्रय दोष व, मिटें जगत के शूल ॥ २४२२

मुखारविन्द प्रभु का देखो, उस पै तेज दिव्य है पेखो ।
प्रभु की मनहर है मुस्कान, दिव्य पुष्प जिमि खिला महान ।
वह मुस्कान जगत से न्यारी, उस में किरपा की छवि भारी ।
मांझ हृदय यदि वह बस जावे, अलौकिक शांति को मन पावे ।
शीतल मन्द मधुर मुस्कान, इस के नहीं कुछ और समान ।
चांद की चांदनी होय मात, अथवा शीतल समीर प्रात ।
हिमकन की जो शीतलताई, मधु मास जिमि है सुखदाई ।
तिमि सुखद प्रभु की मुस्कान, इस के नहीं कुछ और समान ।
दिव्य प्रभु की है मुस्कान, इस पै जन वारे निज प्राण ।

दो० भक्त जनों की प्राण है, अद्भुत यह मुस्कान ।
हृदय में जब आ बसत, जन हो सुखी महान ॥ २४२३क
सुख पाना हो जगत में, जन चाहे यदि ज्ञान ।
दर्श करे प्रभु वदन का, निरखे मुख मुस्कान ॥ २४२३ख

प्रभु मुस्कान पै वारे प्राण, प्रभु मुस्कान सुखों की खान ।

प्रभु मुस्कान हरे त्रयताप, दूर करे जन का संताप ।
प्रभु मुस्कान करे जन मुक्त, ऋद्धि सिद्धि से करे वा युक्त ।
प्रभु मुस्कान का बहु प्रताप, जन्म जन्म के काटे पाप ।
प्रभु मुस्कान जो मन में ध्याय, काल भी उसके वश हो आय ।
प्रभु मुस्कान का ध्यान अनूप, रखे जन इसे चित्त में गूप ।
प्रभु की दया का यह प्रतीक, निरख इसे जन भये निर्भीक ।
इसका निशिदिन करत जो ध्यान, उस का मिटत सकल अज्ञान ।

दो० अन्धकार अज्ञान का, हो जाये तब नाश ।
मांझ हृदय मुस्कान का, होत जभी प्रकाश ॥ २४२४क
इस विध गुरु मुस्कान को, जन लाये निज चीत ।
प्रभु किरपा सब काल ही, प्राप्त करे इस रीत ॥ २४२४ख
सुन भक्तन उपदेश यह, कीना मन अनुमान ।
गूढ़ भेद गुरु देव से, लीना हमने जान ॥ २४२४ग

प्रभु की मूर्त हम मन ध्यावें, दिव्य वदन उन का मन लावें ।
प्रभु का सुन्दर रूप निहारें, अपना तन मन उन पर वारें ।
प्रभु जी से हो निःछल प्रीत, समझ योग की गुरु से प्रीत ।
उन के अंग अंग के दर्शन, चित्त से उन का पग स्पर्शन ।
उन का रोम रोम अति पावन, भक्तन के करे दुःख निवारन ।
चित्त बसे इसी ठौर ठिकान, दुःख से हम पायें निर्वान ।
इस विध मन जब उन अनुमाना, कहा तभी "हे कृपा निधाना ।
सरल रीति है तुम कथ पायी, योग भक्ति की विधि बतलायी ।

मन चंचल जो चैन न पावे, इस विध तो वह वश में आवे ।

दो० प्रभु का रूप निहार कर, मन रहत तहां लीन ।
जिस मन में प्रभु बसत हैं, वृत्ति हो वहां क्षीन ॥ २४२५

हम अब करेंगे प्रभु का ध्यान, जैसा पाया आप से ज्ञान ।
अंग अंग का करेंगे ध्यान, मन का ठौर ठिकाना मान ।
नख से मुख तक प्रभु का रूप, लक्ष्य ध्यान का परम अनूप ।
और भी यदि कुछ हो आदेश, कथन करें सद्गुरु योगेश ।
आप की वाणी वेद समान, दिव्य ज्ञान का यह प्रमान ।
अहैतुक कृपा है कर पाई, दिव्य योग की रीति बताई ।
श्रवण करें हम ला कर ध्यान, कहें आप जो और ज्ञान ।
ज्ञान यह मिले न और स्थान, तुम जगद्गुरु हो कृपा निधान" ।

दो० श्रवण करी जब नाथ ने, उन की यह जिज्ञास ।
कर किरपा कहने लगे, हो जिमि दृढ़ विश्वास ॥ २४२६

तुम्हें बताऊँ भक्त समाज, ध्यान विधि इक और मैं आज ।
प्रभु के मस्तक मांझ प्रकाश, भानु भये जिमि उदय आकाश ।
उस प्रकाश का करो ध्यान, प्रभु मस्तक को चित्त में आन ।
जिस मन में वह तेज समाये, भ्रांती वहां नहीं रह पाये ।
जटा मध्य वह दिव्य उद्योत, घन घटा जिमि विद्युत ज्योत ।
पूर्ण चन्द्र का जिमि उजाला, मन हर तेज वहां पै प्यारा ।
उस तेज का महा विस्तार, पा सकोगे नहीं तुम पार ।
उसी तेज में मन हो मौन, विचरे अनन्त काल रह लीन ।

दो० इस विध मन को लीन कर, दिव्य तेज में मीत ।
शरण गहो प्रभु देव की, रहे एकाग्र चीत ॥ २४२७क
रहे एकाग्र चीत तव, जब तक चाहो मीत ।
योग उसी के भाग्य में, जिस को प्रभु से प्रीत ॥ २४२७ख

सुन कर भक्तन यह उपदेश, मिटी थी जिस से भ्रांत निशेष ।
नतमस्तक वे सब हो पाये, मन उन के प्रभु रूप समाये ।
स्वामी जी ने पुनः उचारा, भक्तो मन प्रसन्न हमारा ।
मन में है कुछ और बताऊँ, प्रभु का योग सबन समझाऊँ ।
प्रभु लीना जिस हित अवतार, योग वही मम प्राणाधार ।
उसी योग को जो अपनाये, मम मन में जन बहु वह भाये ।
योग रहित हो मन दुखियार, योगी जन हो जग से पार ।
जग को प्रभु यह भेद बताया, शरण गही जिस उस सुख पाया ।

दो० शरण गही जिस नाथ की, प्रभु से पाया योग ।
कलि में ले अवतार को, प्रभु तारे बहु लोग ॥ २४२८क
प्रभु तारे बहु लोग हैं, कलि में ले अवतार ।
शरण गहो उस नाथ की, हैं जो सुख के सार ॥ २४२८ख

सुख का सार प्रभु को जान, प्रभु ही प्राणन के हैं प्राण ।
उन की दृष्टि को तुम देखो, निज तन पै वह पड़ती पेखो ।
उन की दिव दृष्टि जब होय, दुःख आये न जन पै कोय ।
ध्यान करो तुम अब मम भाई, प्रभु की दृष्टि परम सुखदाई ।
प्रभु दृष्टि तव तन पै डालें, सभी दुःखों से तुझे निकालें ।

देह शिथिल हो यदि मम भाई, अथवा रोग होय दुःखदाई ।
दृष्टी रोग निवारण हारी, भक्त जनों को बहु जो प्यारी ।
दृष्टि वही पड़े तव ऊपर, चमकत हो जिमि सूरज भूपर ।
उस से देह हो दिव स्वरूप, प्रभु दृष्टि में शक्ती अनूप ।

दो० प्रभु दृष्टि तव देह पर, पड़ती है मम मीत ।
दिव्य देह निज निरख लो, लगा ध्यान में चीत ॥ २४२९क

प्रभु में चित्त लगाय कर, दृष्टि में धर ध्यान ।
मग्न रहे जन युक्त हो, दिव मिले तब ज्ञान ॥ २४२९ख

प्रभु दृष्टि तन पर पड़े, तन हो दिव स्वरूप ।
मन पर भी उस दृष्टि का, हो प्रभाव अनूप ॥ २४२९ग

जन्म जन्म का चित्त मलीन, प्रभु दृष्टि से होत नवीन ।
प्रभु दृष्टि से तम का नाश, प्रभु दृष्टि जगमग प्रकाश ।
प्रभु दृष्टि से अन्तर शुद्ध, प्रभु दृष्टि से बुद्ध प्रबुद्ध ।
प्रभु दृष्टि से पाप विनास, प्रभु दृष्टि से कमल विकास ।
प्रभु दृष्टि से अन्तर्ज्योत, प्रभु दृष्टि सब घट उद्योत ।
प्रभु दृष्टि जन भाग्य विधाई, प्रभु दृष्टि जग में सुखदाई ।
प्रभु दृष्टि से जन हो कृतार्थ, प्रभु दृष्टि से मिले परमार्थ ।
प्रभु दृष्टि सब सुख का सार, प्रभु दृष्टि से मोक्ष अपार ।

दो० प्रभु दृष्टी जन पै पड़े, जन का हो कल्याण ।
ऐसा मन में धार कर, करो प्रभु का ध्यान ॥ २४३०

प्रभु का ध्यान परम सुखदाई, रूप प्रभु का सिमरो भाई ।

जटा – जूट – मय उन्हें ध्यावो, शिव जटा सम निरख ही पावो ।
जटा मध्य ललाट तेजस्वी, और प्रभु का मुख ओजस्वी ।
जो जन इसे ध्यान में लावे, ध्यान उसी का स्थिर हो पावे ।
प्रभु की परम पवित्र जटायें, भक्तन के वे चित्त समायें ।
शिव सम रूप प्रभु अवतारी, है जटा में गंग मातारी ।
शिव संकल्पी प्रभु पहचानो, गंगाधारी उन को मानो ।
शिव संकल्प की एक तरंग, भक्तन का चित्त देवे रंग ।

दो० जटा रूप में राम का, करता है जो ध्यान ।
प्रभु किरपा से मिलत है, अन्तकरण में ज्ञान ॥ २४३१

प्रभु के रूप का करिये ध्यान, कीना है जिमि सकल बखान ।
अंग अंग मन में ले आवो, रूप सकल भी उनका ध्यावो ।
जिमि रहे उनमें चित्त लीन, ऐसे ही करो यत्न नवीन ।
प्रभु का रूप हि लक्ष्य हमारा, लागत रूप सबन को प्यारा ।
उसी रूप में विश्व की ज्योत, कन कन जग का करत उद्योत ।
उस ज्योत का दिव्य प्रकाश, पाप ताप का करत विनाश ।
प्रकाश उसी की दिव इक धार, ध्याता का तन करे उज्यार ।
देह भये तब उज्ज्वल भाई, प्रभु ध्यान की है प्रभुताई ।

दो० प्रभु तेज की धार जब, पड़े भक्त के देह ।
दिव्य भये तब देह भी, मिटे सकल सन्देह ॥ २४३२क
मिटे सकल सन्देह तब, देख प्रभु का रूप ।
करे प्रकाशित देह को, ऐसा तेज अनूप ॥ २४३२ख

तेजोमय निज तन को देखे, भाव और न लावे लेखे ।
दिव्य रूप जो प्रभु को ध्यावे, दिव्य रूप वह जन हो जावे ।
दिव्य कहें उस जन का ध्यान, दिव्य मिले उस जन को ज्ञान ।
दिव्य भये उस जन की बुद्ध, भाव रहें नहीं लेश अशुद्ध ।
दिव्य ध्यान की अद्‌भुत युक्ति, रोग शोक से पावें मुक्ति ।
दिव्य ध्यान से हो अनुराग, करो न इसका चित्त से त्याग ।
दिव ध्यान विरला जन पावे, दिव्य देह निज की हो जावे ।
दिव्य ध्यान की ऐसी रीति, वह पाये जिसे गुरु से प्रीति ।

दो० गुरु से प्रीति जो करे, ध्यान करे मन लाय ।
उस योगी के देह में, प्रभु का तेज समाय ॥ २४३३

सुन कर सद्‌गुरु का उपदेश, भक्तन का चित्त मग्न विशेष ।
क्या पूछें अब और ज्ञान, रहा न कुछ भी उन को ध्यान ।
सद्‌गुरु रूप वे सभी ध्यावें, देह बदन की सुधी भुलावें ।
निरख रहे सभी प्रभु का रूप, मन को आंखें लगी अनूप ।
मन को आंख मिले जब साईं, प्रभु दीखें न क्यों तिस ताहिं ।
निरख प्रभु का हे मन रूप, अवसर मिला है तुझे अनूप ।
गया काल फिर आवे नाहीं, गति काल की समझो साईं ।
हे मन प्रभु को नेकु[1] निहार, लगना है जो भव से पार ।
रंक जिमी निज धन को देखे, जीव दुःखी त्यों प्रभु को पेखे ।

दो० दुखी जीव का धन प्रभु, इस में न सन्देह ।

[1]नेकु —जरा

सुखी भये जन सिमर कर, दिव्य प्रभु का देह ॥ २४३४

यदि चाहो तुम लगना पार, भव सागर जो परम अपार ।
प्रभु का मन में रूप संभार, इस से दृढ़ न और आधार ।
सुगम चाहो यदि साधन मीत, प्रभु चरणों से कर लो प्रीत ।
निशिवासर जो प्रभु को ध्याना, यह जानो बहु योग कमाना ।
दिव्य प्रभु दिव्य भये ध्याता, जन भये दिव ज्ञान का ज्ञाता ।
सद्गुरु भक्तन को समझाया, आगे का फिर बोध कराया ।
योग के मार्ग का नहीं अन्त, ईश्वर सम यह मग बे अन्त ।
भक्त जनो तुम लो यह जान, दया निधि की दया पहचान ।
होंय प्रभु जब तुझ पै दयाल, तेरे मन को लेंय संभाल ।

दो० दया प्रभु की जीव पर, होय जभी मम मीत ।
चंचल मन को वश करें, निज चरणीं दे प्रीत ॥ २४३५

प्रभु के तेज को अब लो देख, चित्त पटल पर पड़ता पेख ।
चित्त भये इमि तेज स्वरूप, दिव्य सूरज सम उस का रूप ।
प्रभु के तेज ने कीन कमाल, छिन्न किया तव देह उस डाल ।
प्रविष्टा अन्तकरण के मध्य, जगमग ज्योति भयी वहां सद्य ।
उज्ज्वल भयो तुम्हारा चित्त, टूटें अन्तर के सब भित्त ।
मन पै पड़े जो हों संस्कार, जन्म जन्म के जमे कगार ।
घन अन्धेरा जो था छाया, जिस ने भय से तुझे दबाया ।
दिव्य तेज से भया वह दूर, ध्यान करे अज्ञान को चूर ।

३६. मन देवताओं का स्वामी—कैसे ?

दो० मन भटके अज्ञान में, होय गर्व में चूर।
मिलें भक्त को जब प्रभु, नाशे सकल गरूर ॥ २४३६

इस विध देखो मन को मीत, भया जो उज्ज्वल है इस रीत।
मन का रूप दिव्य है भाई, सभी कथें इस की प्रभुताई।
जन को मुक्त यही कर पाये, माया में भी यही फंसाये।
सब देवों का यह है स्वामी, इस का जीव बनत अनुगामी।
श्रवण किया जब गुरु उपदेश, कहा भक्त इक "हे सर्वेश।
देवों का किमि मन है स्वामी, स्पष्ट करें यह अन्तर्यामी।
देवों का तो स्वर्ग में वास, मन रहता है घट में खास।
इन का होत कैसे सम्बन्ध, प्रभो बतावें यह अनुबन्ध[1]।

दो० मन का देवों से प्रभो, कैसे होवे संग।
एक बसे इस लोक में, दूजे स्वर्ग निसंग ॥ २४३७

सद्गुरु सुन कर उन की बात, मुस्काये कुछ जग के व्रात।
कहन लगे हे भक्त प्यारे, गहन विषय हैं दिव्य न्यारे।
योग विद्या से होवे ज्ञान, व्यापे योग बिना अज्ञान।
प्रकटे देवों का तब रूप, योग दृष्टि जब मिले अनूप।
योग दृष्टि दिव दृष्टि कहाये, देवों के वह दर्शन पाये।
देवों का दर्शन हो जाये, भ्रम कोई न फिर रह पाये।
देवों को नहीं बन्धन मीत, शक्ति रूप में रहें सब रीत।

1सम्बन्ध

शक्ति व्यापक रूप पहचान, सीमित नहीं वह लो यह मान ।

दो० देव व्यापक जगत में, घट में भी हैं जान ।
प्रति अंग में देव रहें, मन को इन्द्र मान ॥ २४३८क
अंगों में जो शक्ति है, दैवी शक्ति जान ।
शक्ति रसना आदि की, सभी अलौकिक मान ॥ २४३८ख
उसी अलौकिक शक्ति का, स्वामी मन पहचान ।
उसी चित्त में देखिये, प्रभु का तेज महान ॥ २४३८ग

तेज प्रभु का चित्त समाये, माया जग की नहीं सताये ।
ज्ञान योग का चित्त आधार, प्रभु का तेज लो उसमें धार ।
एक बात मैं और बताऊँ, बुद्धी का भी गुण समझाऊँ ।
तब ही चित्त होत एकाग्र, बन पाये जब बुद्धी कुशाग्र ।
बुद्धी में प्रभु तेज समाये, कुशाग्र बुद्धी तब हो पाये ।
कुशाग्र बुद्ध में प्रभु का ज्ञान, योग युक्त होय साध महान ।
मन बुद्धि का एक ही रूप, यह जानों तुम योग अनूप ।
ऐसा योग मिले प्रभु ताहीं, हो कृपा बुद्ध तेज समाहीं ।

दो० प्रभु कृपा बिन नहीं मिले, ऐसा योग अनूप ।
शरण गहे जन राम की, होय राम स्वरूप ॥ २४३९क
योग युक्त इस विध भये, प्रभु का कर के ध्यान ।
इसी ध्यान में देख ले, तेजस्वी जो प्राण ॥ २४३९ख

३७. आतम ज्योति का ध्यान और विश्व दर्शन

प्राणों में प्रभु जोत समाये, तेजोमय ही जन हो पाये ।
अन्तर बाहिर दिव्य प्रकाश, ध्यान योग में होय विकाश ।
होय ध्यानी साधक पूर्ण, मिले योग से सुख सम्पूर्ण ।
सुख सम्पूरण वह जन पाये, तेज युक्त जब जन हो जाये ।
इस के आगे का अब ध्यान, कथन करूँ सुनिये ला कान ।
सभी से ऊपर आतम जोत, करत जो तन मन को उद्योत ।
प्रकाशित जिस से बुद्धि प्राण, उस का अब तुम करो ध्यान ।
आत्म जोत का करत जो ध्यान, करे समर्पित तन मन प्राण ।
आतम में दिव्य तेज ले धार, सिमर प्रभु का रूप अपार ।

दो० आतम समर्पण जो करे, सिमरे प्रभु का रूप ।
निज जोत प्रभु जोत में, अविलंब होय गूप ॥ २४४०

प्रभु में आतमा होय विलीन, क्रीड करे वा जिमि जल मीन ।
प्रभु से रहे न कभी वियोगी, सिद्ध पुरुष वह जानो योगी ।
आतमा में प्रभु तेज समाय, परम तेजस्वी जन हो पाय ।
करे निरंतर जब वह ध्यान, परम पुरुष का पावे ज्ञान ।
आतमा महान बने इस रीत, परम पुरुष से कर के प्रीत ।
आतम योग यही कहलाये, पुरुष पुरुषोतम से मिल पाये ।
आतमा को ही पुरुष पहचान, प्रभु जी को पुरुषोतम जान ।
आतम तेज प्रभु से पाये, क्षुद्र जीव महान हो जाये ।

दो० आतम को परमातम से, युक्त करे नर नार ।
योग उसी को जानिये, करता भव से पार ॥ २४४१क

करता भव से पार जो, योग उसी का नाम ।
आतम योग अनूपम, मिलता गुरु के धाम । २४४१ख

गुरु के धाम जो नर सिधाये, आतम योग वहां वह पाये ।
हे भक्तो मम यह उपदेश, देखो तुम निज रूप हमेश ।
प्रभु चरणी वह रूप समाये, योग युक्त सब विध हो पाये ।
जन एक तब कही यह वाणी, हे प्रभो तुम महा कल्याणी ।
आतम योग जो आज बताया, जीवन का सब सार सुनाया ।
आप का सुन्दर यह उपदेश, भूल पाये न हम को लेश ।
तोरी शिक्षा को अपनावें, प्रभु का तेज सदैव ध्यावें ।
प्रथम करे वह देह द्यौतित, पाछे प्राणों को उद्यौतित ।
चित्त करे वह दिव्य स्वरूप, बुद्धी को भी करे तद्रूप ।
आतम को निज तेज दे पाये, इस विध जीव में प्रभु समाये ।

दो० प्रभु समाता जीव में, मिली अनोखी बात ।
सागर बिन्दू में बसे, योगी की करमात ॥ २४४२

नाथ बात इक फिर बतलायें, रूप प्रभु का जिमि हम ध्यायें ।
सुन कर यह उपदेश महान, अघाता मम न मन भगवान ।
आप से श्रवण करें फिर नाथ, सिमरें प्रभु को भयें सनाथ ।
जिस आकार को सदा ध्यावें, उस का वर्णन फिर कर पावें ।
चित्त चंचल मन भूलन हार, उपदेश आप का ही आधार ।
आप बतावें फिर इक बार, चित्त बसे जिमि प्रभु आकार ।
प्रभु के तेज में मन हो लीन, दृश्य गहे नहीं और नवीन ।

और कहां से मिले गा ज्ञान, जग में नहीं गुरु आप समान ।

दो० आप जगत के हैं गुरु, योगिन के सरदार ।
ज्ञान गहें हम आप से, बैठ आप के द्वार ॥ २४४३

ज्ञान आप से जो हम पावें, उस मग पर हम चल दिखलावें ।
जग तो गोरख धन्धा नाथ, भाग्य शिष्य का गुरु के हाथ ।
हम हैं शिष्य शरण में आये, संशय हमरे आप दुराये ।
बस प्रभो है यही अरदास, समझें ध्यान का मग हम दास ।
जो श्री मुख से हम सुन पावें, उन शब्दन पर पुष्प चढ़ावें ।
वेद वचन सम वाणी नाथ, कर श्रवण हम भये सनाथ ।
किरपा कर उपदेश सुनावें, निज शक्ती से चित्त ठहरावे ।
ध्यान करें हम नित्य स्वामी, जिमि उपदेशें अन्तर्यामी ।

दो० सद्गुरु से उपदेश ले, हमरा लागे ध्यान ।
शरण आप की ग्रहण कर, बहुत मिला है ज्ञान ॥ २४४४

हे नाथ हम ने यह जाना, प्रभु के ध्यान से मिले ज्ञाना ।
प्रभु का ध्यान ज्ञान का दाता, प्रभु का ध्यान मोक्ष प्रदाता ।
प्रभु का ध्यान योग का मूल, प्रभु के ध्यान से नाशें शूल ।
प्रभु के ध्यान से मन हो शुद्ध, प्रभु के ध्यान से जन प्रबुद्ध ।
प्रभु के ध्यान से दोष विनाश, प्रभु के ध्यान से पूजे आश ।
प्रभु के ध्यान से लगे न शाप, प्रभु के ध्यान से मिटता पाप ।
प्रभु का ध्यान आप से पायें, प्रभु का ध्यान पाय तर जायें ।
प्रभु के ध्यान से पावें सुख, प्रभु के ध्यान से मेटें दुःख ।

दो० हे नाथ सब सुख मिले, ऐसा देवें ध्यान ।
हे नाथ सब दुख मिटे, ऐसा उपजे ज्ञान ॥ २४४५क
ऐसा उपजे ज्ञान जी, होय बुद्ध प्रबुद्ध ।
किरपा हम पै कीजिये, चित्त परम हो शुद्ध ॥ २४४५ख

इस विध उन निज भाव बताया, सद्गुरु चरणी शीश झुकाया ।
सद्गुरु जान के उन का भाव, प्रकट किया उन निज सद्भाव ।
भक्त जनो मैं फिर बतलाऊँ, प्रभु ध्यान की रीत सुनाऊँ ।
परम-दिव्य यह जानो ध्यान, ऋषियन जिस का कीना मान ।
वेदों में जिमि मिले बखान, सुनिये ला कर वह तुम ध्यान ।
परम दिव उस ध्यान की रीत, समझे जो जन सहित प्रीत ।
करे जो उस का नित अभ्यास, गुरु वचनों में रख विश्वास ।
उस की बुद्धि भये उजागर, सहज तरे वह भव का सागर ।

दो० बुद्धि उजागर जब भये, अन्तर भये प्रकाश ।
मन का तामस दूर हो, आत्म जोत विकाश ॥ २४४६क
आतम जोत विकास हो, दिव ध्यान की रीत ।
गुरुमुख से जन जानकर, करे योग से प्रीत ॥ २४४६ख

योग से करता योगी प्रीत, त्याग सकल जो मग विप्रीत ।
योगी यौगिक मग अपनावे, मन अनन्य से प्रभु को ध्यावे ।
प्रभु से भिन्न न दृष्टी आवे, प्रभु से भिन्न ना कुछ सुहावे ।
अन्तर में भी प्रभु का रूप, बाहिर कण कण वही स्वरूप ।
प्रभु के रूप में ही अनुराग, अन्य सरूप में लेश न राग ।

प्रभु रूप में दृढ़ कर प्रीत, तब मिले दिव ध्यान की रीत ।
सूरज चान्द प्रभु उपजाये, लोक लोकान्तर दिव बनाये ।
सूरज से भी भव्य खगोल, रचन हार हैं रचे अडोल ।
दिव्य महिमा में प्रभु विराजे, अपनी रचना में वह साजे ।

दो० अपनी रचना में रहे, जग का सिरजन हार ।
भक्त निहारें ध्यान में, ज्योति परम अपार ॥ २४४७क
सूरज सम वह जोत है, या भव्यतर मीत ।
भव्य उसी ही जोत में, देख प्रभु ला चीत ॥ २४४७ख

भव्य जोत में प्रभु विराजे, जिन्हें निरख जोत भी लाजे ।
प्रभु का तेजोमय यह ध्यान, सूरज मध्य हो प्रभु का स्थान ।
परम दिव यह ध्यान कहावे, मन एकाग्रता यहां पावे ।
इस विध कर जो प्रभु का ध्यान, योग युक्त वह भये पुमान ।
उस का अन्तर भये पवित्र, उस का भये आदर्श चरित्र ।
उस को अन्तर से हो ज्ञान, चित्त रहे नहीं लेश मलान ।
प्रभु ध्यान से बुद्धि उजागर, प्रभु ध्यान से मन एकागर ।
प्रभु ध्यान से अन्तर शांत, प्रभु ध्यान से मिटत भ्रांत ।

दो० ध्यान प्रभु का जो करे, दिव्य रूप में मीत ।
योग निष्ठ वह जन बने, रहे प्रभु से प्रीत ॥ २४४८क
करे प्रभु से प्रीत वह, मन हो दृढ़ विश्वास ।
दिव्य योग यह जानिये, नित्य करो अभ्यास ॥ २४४८ख

इस विध सद्गुरु जी बतलाया, दिव्य योग का पाठ पढ़ाया ।

दिव योग दिव लोक ले जाये, बैठ समाधी जन सुख पाये ।
प्रभु जी रहें सदा ही संग, भक्त होय जिमि प्रभु का अंग ।
दिव्य लोकों की सृष्टी दिव, निरखें भक्त ला प्रभु में लिव ।
प्रभु भक्त को संग ले जायें, स्वर्ग लोक उस को दिखलायें ।
वहां की दिव्य अलौकिक रचना, सकत प्रकट न कर जन वचना ।
उसे निरख कर जन विस्माये, चित्त एकाग्रता को पाये ।
दिव्य लोक में चित्त हो दिव्य, प्रभु दिव्य और भक्त भी दिव्य ।

दो० दिव्य लोक में जाय कर, दिव दर्शन में लीन ।
भक्त भये दिव रूप ही, ध्यान योग प्रवीन ॥ २४४९

इस विध दिव्य लोक को ध्यावें, स्वर्ग लोक जो प्रभु दिखलावें ।
ऐसा ध्यान बने जब जन का, दोष मिटे सब उस के मन का ।
बहुर जन्म न जगत में पाये, तन छोड़ सुर लोक में जाये ।
एक लोक का और बखान, मैं करूं सुनो ला तुम ध्यान ।
सत्य लोक में भी जन जायें, सत्य ज्ञान जहां पर पायें ।
क्षण में भ्रांती का भये हान, ऐसा सत्य लोक का ज्ञान ।
संशय निवृत्त भये तत्काल, तीन गुणों की मिटत कुचाल ।
वहां रूप भी रूपातीत, किमि वर्णों वहां की सब रीत ।

दो० उस लोक की रीत जो, कथ सके नहीं कोय ।
प्रभु किरपा जिस पर करें, अनुभव करता सोय ॥ २४५०क
अनुभव का ही लोक वह, ज्ञान खण्ड लो जान ।
ज्ञान सत जहां मिलत है, और मिटत अज्ञान ॥ २४५०ख

उस लोक में ज्ञान प्रकाश, सूरज चान्द का नहीं विकाश ।
वह हैं शुद्ध सत्व का लोक, आनन्द विराजत, लेश न शोक ।
उस लोक जब प्रभु ले जायें, परमानन्द तभी हम पायें ।
सभी भक्त सुन गुरु की बात, कहन लगे "हे जग के त्रात ।
जिन लोकों का कौन बखान, कहां लोक वे हैं विद्यमान" ।
श्रवण करी जब उन की वाणी, लागे कहन गुरु महादानी ।
चिरञ्जीव ये सारे लोक, घट में ही उन का आलोक ।
घट में स्वर्ग नरक परलोक, घट में विष्णु लोक शिव लोक ।
घट में ब्रह्म लोक लो जान, घट में ही सत लोक पहचान ।
घट में ही ब्रह्माण्ड लखाये, घट में ही सब कुछ दिख पाये ।

दो० घट में ही विदमान हैं, लोक लोकान्तर जान ।
योगी घट में बैठ कर, गहे विश्व का ज्ञान ॥ २४५।

ज्ञान विश्व का योगी ग्राहे, घट में ही सब दर्शन पाये ।
सृष्टि अनन्त प्रभु की रचना, प्रकट करें किमि मुख के वचना ।
प्रभु शक्ती से योगी देखे, बैठ समाधी में सब पेखे ।
प्रभु किरपा सब कुछ दिखलावे, बिन प्रभु किरपा न कुछ पावे ।
प्रभु किरपा ही योग आधार, प्रभु किरपा ही सत का सार ।
प्रभु किरपा ही सुख का मूल, प्रभु किरपा से निकसें शूल ।
प्रभु किरपा ही ज्ञान की जननी, प्रभु किरपा से अद्भुत करनी ।
प्रभु किरपा जो जन पा जाये, *हस्त आमल वत सब लखाये ।

* जैसे हाथ पर धरा आंवला स्पष्ट दिखलाई देता है। ऐसे ही प्रभु कृपा से योगी समाधी में विश्व का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है ।

दो० कर आंवल वत सब लखे, योगी बैठ समाध ।
प्रभु किरपा जिस पै भये, पावे ज्ञान अगाध ॥ २४५२

सुन कर सतगुरु की शुभ वाणी, जन बोले "हे जग कल्याणी ।
प्रश्न उठा है मन में एक, उसे निवारें जन की टेक ।
सृष्टी को जब जन वह देखे, निज तन को भी क्या वह पेखे ।
निज तन की क्या सुध रह पाये, अथवा देह की सुध भुलाये" ।
उन की श्रवण करी जब बात, कथन किया तब सद्‌गुरु, "तात ।
मन जब दिव्य लोक ले देख, लोक लोकान्तर को ले पेख ।
विसर जाये तब देह की सुध, रहे न लेश भी लौकिक बुद्ध ।

३८. ध्यान में शरीर की सुधि न रहना

श्री स्वामी जी महाराज का निज अनुभव

प्राण बिना जिमि देह लखावे, तिमि उस जन का तन हो जावे ।

दो० प्राण बिना जिमि देह हो, तिमि हो उस का देह ।
मन जिस का दिव रूप हो, विसरे देह व गेह ॥ २४५३

निज अनुभव की मैं बतलाऊं, स्पष्ट बात इस विध कर पाऊं ।
प्रभु शरणी जब मुझ को लीना, था प्रेम में मन रंग दीना ।
श्रवण करूं जो प्रीत की बात, प्रभु चरणों में गिरता गात ।
सुध बुद्ध भूलूं प्रभु के प्रेम, ऐसा बनाया प्रभु मम नेम ।
इक दिन गोल बाग आसीना, मित्र भी इक संग में लीना ।
शीतल मधुर थी बहुत समीर, गंगा का जिमि पावन नीर ।

सुन्दर सुन्दर वृक्ष सुहायें, पक्षी जिन पर चह चहायें ।
सैलानी थे इत उत बैठे, निकल घरों से सुख में पैठे ।

दो० घर से जनता आय कर, बैठी उपवन मांझ ।
प्रकृती माँ की गोद में, सुखी सभी उस सांझ ॥ २४५४क
इक सज्जन था गा रहा, मीठी उस की तान ।
कान रमे उस तान में, श्रवण किया मैं गान ॥ २४५४ख
पुरातन कथा प्रेम की, वारिशाह की हीर ।
सरिता वह अनुराग की, बहे प्रेम का नीर ॥ २४५४ग
मेरे मन भी आ लगी, उसी तान की चोट ।
बैठा प्रभु से दूर था, गहुँ अभी जा ओट ॥ २४५४घ
प्राण छोड़ तब देह को, गये नाथ के पास ।
देह गिरी उस बाग में, साथी भया उदास" ॥ २४५४ङ
इतनी घटन सुनाय कर, नाथ भये कुछ मौन ।
क्या बसे उस चित्त में, सकत जान वह कौन ॥ २४५४च

पुनः नाथ ने गाथ चलायी, अपनी बीती पुनः सुनायी ।
बेसुध हो जब तन गिर पाया, मेरा मीत बहुत घबराया ।
उस की समझ में कुछ न आवे, कैसे मुझे होश में लावे ।
यत्न अनेकों उस ने कीने, पकड़ पकड़ कर झूने दीने ।
मुझे भया नहीं कुछ प्रतीत, प्रभु के पास था मेरा चीत ।
अन्त हार कर मुझे उठाया, थाम बगल में मुझे चलाया ।
मेरे कदम चले उस संग, उस के मुख पै आया रंग ।

धीरे धीरे मुझे चलाया, ले मुझ को वह घर पै आया ।
मुझे न तन की सुध थी लेश, प्रभु चरणी मम सुधी अशेष ।

दो० घर में आया मीत मम, ले मुझ को इस रीत ।
मुझ को छोड़ा द्वार पै, भागा वह भयभीत ॥ २४५५क
मुझ को तो थी सुध नहीं, तुरत गिरा उस काल ।
लगी चोट बहु माथ पर, मां आई तत्काल ॥ २४५५ख
हे भक्तो यह जान लो, ध्यान मगन जब चित्त ।
जन को विसरे तब सभी, देह गेह वा वित्त ॥ २४५५ग

देह गेह उस जन को भूले, समाधि में जिस का मन झूले ।
शीत वात ना उसे सतावे, ग्रीष्म भी कुछ कर नहीं पावे ।
व्यापे उसे न भूख प्यास, प्रभु में विचरे उस का श्वास ।
प्रभु को सागर लो तुम जान, योगी का मन तरंग समान ।
प्रभु को त्याग कहां वह जावे, अनुभव से ही जानन पावे ।
प्रभु का रूप होय वह योगी, पल इक भी ना होत वियोगी ।
देह की रहे न उसको सुध, जग से भी वह होय बेसुध ।
चोट लगे नहीं हो प्रतीत, योग की जानो अद्भुत रीत ।

दो० दिव्य योग की रीत यह, प्रभु महिमा लो जान ।
मैं गिरा उस काल जब, भया न दुख का भान ॥ २४५६क
मेरा मन तो लीन था, प्रभु के चरणों मांझ ।
माता व्याकुल थी भयी, दीन दुखी उस सांझ ॥ २४५६ख
घर में थी वह एकली, क्या करती उस काल ।

हाटी पर उस जाय कर, सकल बताया हाल ॥ २४५६ग
दौड़ा दौड़ा मम पिता, छोड़ छाड़ सब काम ।
लगा पुकारन आय कर, ले ले कर मम नाम ॥ २४५६घ
मैं ना आया होश में, लहू बहे मम माथ ।
गया बुलाने वैद्य वह, ले कर आया साथ ॥ २४५६ङ

वैद्य साथ वह ले कर आया, मेरा माथ उसे दिखलाया ।
उस कीना मेरा उपचार, आई न सुध मानी उस हार ।
लौटा वैद्य निराशा छायी, मम माता दुख में कुरलाई ।
मुझे तो था न बाह्य ज्ञान, प्रभु चरणों में दृढ़ था ध्यान ।
प्रभु जी व्याकुलता को देख, अन्तर्यामी कीन उल्लेख ।
चिरञ्जीव ! अब नयन उघारो, मात पिता का विरह निवारो ।
ये जन जानें तुझे बेहोश, यत्न करें नहीं आवे होश ।
बोलो अब तुम इन के साथ, दूर हो चिन्ता भयें सनाथ ।

दो० मात पिता के दुःख को, करो दूर अब तात ।
ये जन जाने लेश न, ध्यान योग की बात ॥ २४५७

आदेश जभी प्रभु का पाया, आंख खुली सब लख मैं पाया ।
मात पिता को देखा पास, घेरे और भी जन उदास ।
मेरा मन मस्ती को माने, बाह्य जगती को न सन्माने ।
सब जन मुझ को बहुत बुलावें, मुझे न उन की बातें भावें ।
अर्न्तमुख जो जन हो जावे, जगत न उस को लेश सुहावे ।
प्रभु को केवल माने नात, भूले मात पिता और तात ।

माने प्रभु का वह आदेश, ढील न लावे उस में लेश ।
रहे प्रभु के रूप में लीन, जिस विध विचरे जल में मीन ।

दो० विचरत जल में मीन जिमि, तिमि जो प्रभु का संग ।
अन्तर में जब जन लखे, शिथिलित उस के अंग ॥ २४५८क
शिथिलित जन के अंग हों, ऐसा अनुभव मीत ।
समाधि में तब जन रमे, जब हो प्रभु से प्रीत ॥ २४५८ख

प्रभु प्रीती की रीती जान, भूले जन तन मन का भान ।
प्रभु चुम्बक चित्त आयस होय, चान्द प्रभु मन चकवा सोय ।
प्रभु दीपक मन भंवरा जान, चित्त पंकज प्रभु भानु मान ।
प्रभु तो घन श्याम हैं भाई, मन मयूर को हैं सुखदाई ।
मैं था प्रभु की गोद आसीन, और प्रभु के ध्यान में लीन ।
मात पिता जब भये बेहाल, प्रभु कहा तब "प्रिय हे लाल ।
अब देह की सुधी संभालो, मात पिता की आज्ञा पालो" ।
श्रवण करी जब प्रभु की बात, सचेत भया मम पूर्ण गात ।
मात पिता सुख सांस को लीन, शुकर प्रभु का भी उन कीन ।

दो० मोह जगत का जानिये, बचा न उस से कोय ।
सत पथ पर भी सुत लगे, मात सशंकित होय ॥ २४५९

स्वामी जी इस विध समझाया, निज अनुभव से सबन बताया ।
समाधि में जब जन चलि जाये, तन की वह सुध को विसराये ।
स्वामी जी का यह उपदेश, सुन भक्तन मन हर्ष विशेष ।
सब के चित्त बस इक ही चाव, श्रवण करें शुभ नाथ के भाव ।

३९. पं: चक्रधारी बेज़र का सद्गुरु शरण में आना

नित्य प्रति इमि बहु जन आते, योगिराज से शिक्षा पाते ।
इक दिन पण्डित वर इक आया, सद्गुरु को आ शीष झुकाया ।
अपना नाम उस कौन बखान, "चक्रधारी मम है अभिधान ।
बेज़र भी मेरा उपनाम, कविता लिखना मेरा काम ।
प्रभो मुझे कुछ सेव बतायें, निज चरणों में मुझे लगायें ।

दो० निज चरणों की सेव में, मुझे लगावें नाथ ।
सार्थक मेरा जन्म हो, गा कर प्रभु की गाथ ॥ २४६०क
यश तुम्हारा श्रवण कर, आया चरणी दास ।
शरणी सेवक लीजिये, बेज़र की अरदास" ॥ २४६०ख
इस विध कर अरदास उस, दीना शीष झुकाय ।
सद्गुरु ने आशीष दी, और कहा समझाय ॥ २४६०ग

"चिरञ्जीव तुम हो विद्वान, और कवी भी एक सुजान ।
सरस्वती का तव मुख वास, भया है मेरे मन विश्वास ।
गीत प्रभु के गावो मीत, भक्तन के चित्त उपजे प्रीत ।
प्रभु के गुण जो कवि है गाता, सरस्वती को वही रिझाता ।
प्रभु के गीत न जो कवि गावे, काव्य कला को व्यर्थ गंवावे ।
सरस्वती भी है पछताती, वाणी जब न प्रभु गुण गाती ।
प्रभु महिम जिस काव्य में होय, उत्तम काव्य कहावे सोय ।

जिस कवि पर प्रभु की दाया, गुण प्रभु का उसी ने गाया ।
प्रभु हैं तुम को शरणी लाये, भक्ति भाव सुन्दर उपजाये ।

दो० गुण गाथा प्रभु की कहो, सिमरो प्रभु का नाम ।
गूंगा भी बोलन लगे, करें कृपा जब राम" ॥ २४६१

इस विध सद्गुरु आशिष दीनी, शरण प्रभु की बेज़र लीनी ।
उस के चित्त के खुले द्वार, देखी प्रभु की महिम अपार ।
उस के मन में उपजा ज्ञान, प्रभु प्रकटे कलि में भगवान ।
राम लाल कलि में अवतार, ले कर प्रकटे शक्ति अपार ।
इन की महिमा यदि गा पाऊँ, जीवन का शुभ फल पा जाऊँ ।
गुरु देवें जब मुझ को ज्ञान, करूं मैं प्रभु का तब गुण गान ।
मन में ऐसा जब उस लाया, अपना भाव तभी कथ पाया ।
"हे नाथ ! मैं हूँ अनजान, प्रभु महिमा का न कुछ ज्ञान ।
कृपा आप की यदि हो जाये, यह जन तभी ज्ञान को पाये ।

दो० ज्ञान प्रभु का सद्गुरो, आप यदि दे पांय ।
चरित प्रभु के मैं कहूं, भक्तन मन जो भांय" ॥ २४६२

सद्गुरु विनय जभी सुन पाई, बेज़र को तब कथा सुनाई ।
काक भुशुण्डी जिमि लिख पाया, परब्रह्म तिमि जग में आया ।
गण्डा राम के घर अवतारे, भागवन्ती के नयनन तारे ।
देव जनों के मन हर्षाये, ऋषी मुनी सब पूजन आये ।
गण्डा राम ज्योतिषि भारी, उन जाना हैं प्रभु अवतारी ।
बेज़र को इस विध समझाया, कूचे का भी नाम बताया ।

कटड़ा संत सिंह मन भाये, अमरितसर में ही प्रभु जाये ।
दिवस राम नवमी का प्यारा, प्रभु जगत में देह जब धारा ।

दो० राम नवमी के दिवस, प्रकटे जग त्रात ।
राम लाल के नाम से, भये जगत विख्यात ॥ २४६३

सद्गुरु कथन किया इतिहास, उपजी बेजर चित्त जिज्ञास ।
कहन लगा सद्गुरु महाराज, ज्ञान अलौकिक मिला है आज ।
कलियुग में प्रभु जी का आना, तुमरे मुख से ही मैं जाना ।
किरपा कर अब नाथ सुनाओ, प्रभु की दिव लीला कथ पाओ ।
जब भी लें प्रभु जी अवतार, धारें देह जब वे साकार ।
उन के कर्म अलौकिक भारे, भक्त जनों को लागें प्यारे ।
लीला जो उन की सुन पाये, अथवा जो भी उसे सुनाये ।
परम पुण्य वह पुरुष कमावे, जीवन में बहु सुख को पावे ।
हे नाथ ! हूँ परम सुभागा, जो तव चरणी हूं आ लागा ।
लाभ जन्म का अब मैं पाऊँ, प्रभु लीला जो सुन के जाऊँ ।

दो० प्रभु लीला को मैं सुनूँ, बैठ चरण तव नाथ ।
चारों फल नर जन्म के, मिलें सकल इक साथ ॥ २४६४

हे नाथ प्रभु का अवतारा, किस हेतु उन यहां तन धारा ।
बालपने के कौतुक नाथ, वे भी कथन करें इक साथ ।
तारनहार तराये जो जन, श्रवण करूं मैं उन्हें ला मन ।
सिगरी लीला प्रभु की स्वामी, सुनना चाहूँ अन्तर्यामी ।
जग में लें जब प्रभु अवतार, विरला जन ही पावे पार ।

व्याप्त रहे जगती पर माया, जाने वह जो शरणी आया ।
अथवा ज्ञानी भक्त पहचाने, अज्ञानी सब रहें भुलाने ।
अथवा जिस पर गुरु की दाया, ज्ञान प्रभु का उस भी पाया ।
दो० दया करें हे नाथ जी, दीजो मुझ को दान ।
प्रभु लीला को श्रवण कर, पाऊँ प्रभु का ज्ञान ॥ २४६५क
इस विध विनय सुनाय कर, भया बेज़र नत माथ ।
सद्गुरु तब कहने लगे, प्रभु लीला की गाथ ॥ २४६५ख
नाथ कहा बेज़र हे प्यारे, शुद्ध बहु हैं भाव तुम्हारे ।
शुभ कर्म तुम्हें यहां लाये, प्रभु प्रेम तव चित्त समाये ।
अथवा प्रभु स्वयं हैं लाये, पुण्य जिमि तब उदय हो पाये ।
प्रभु का ज्ञान तुझे हो पाय, श्रवण करो तुम नित यहां आय ।
प्रभु के कर्म हैं दिव्य महान, समझ सकें जब प्रभु दें ज्ञान ।
प्रभु के जन्म कर्म हैं दिव्य, समझ सके जिस का चित्त दिव्य ।
अथवा वह जन समझे मित्त, जिसने समर्पा गुरु पग चित्त ।
ज्ञान प्रभु का वह जन पावे, जो चल चरणी सद्गुरु आवे ।
दो० सद्गुरु द्वारे आय कर, चरणी जाय लाग ।
ज्ञान प्रभु का वह गहे, और उदय हो भाग ॥ २४६६
इस विध सद्गुरु जी समझाया, निज शक्ती दे बोध कराया ।
बेज़र की तब दिव बुद्ध, चित्त भया उसका बहु शुद्ध ।
प्रभु के गुण तब गाने योग, मिला बेज़र को परम सुयोग ।
सद्गुरु से नित सुन कर जाता, प्रभु लीला रस अमरित पाता ।

शिशु लीला सद्गुरु बतलायी, जिमि बुढ़िया की जान बचायी ।
मरनासन्न पड़ी थी ऐसे, यमदूतों ने बांधी जैसे ।
प्रभु के वर्श जभी उस पाये, उस के प्राण लौट तब आये ।
तीन वर्ष की आयु प्रभु की, कौतुक प्रभु किया यह जब ही ।

दो० तीन वर्ष की आयु में, कौतुक कीन अनूप ।
यह लीला प्रभु राम की, रही परन्तु गूप ॥ २४६७

स्वामी जी फिर वह बतलाया, मात पिता जिमि पढ़ने पाया ।
गुरु जन चकित भये बहु भारी, प्रभु की बुद्धि देख के न्यारी ।
सिद्ध पुरुष की कथा सुनाई, जिस ने प्रभु की स्तुति थी गाई ।
राम तीर्थ का कौन बखान, सिद्ध मिलन जहां प्रातः जान ।
सहपाठी जो रोकन आये, किमि प्रभु से सभी डर पाये ।
जान गई सब जन समुदाई, राम विलक्षण बालक भाई ।
प्रभु खेलें जब साथिन साथ, उन के आते नहीं वे हाथ ।
देखत देखत होते लुप्त, जाने कौन बात यह गुप्त ।

दो० स्वामी जी इस विध कही, प्रभु लीला की बात ।
बालपने जो करत थे, राम लाल साक्षात ॥ २४६८क
कौतुक सिगरे जो किये, बालपने में नाथ ।
बेज़र को बतलाय कर, स्वामिन कीन सनाथ ॥ २४६८ख

इक दीपक था जल में राखा, फिर उसे आदेश दे भाखा ।
दीपक खुद ही जलने लागा, और पात्र भी चलने लागा ।
देख अलौकिक दृश्य न्यारा, भया अचंभा सब को भारा ।

अलौकिक शक्ति प्रभु दिखायें, डसे सर्प तो जन यदि आयें ।
मार चपेट वे विष उतारें, इस कौतुक को सब सत्कारें ।
आगे स्वामी जो बतलाया, उन बेज़र को ज्ञात कराया ।
विद्या प्रेमी प्रभु थे भारी, विद्या ग्रहण करें हम सारी ।
ऐसी इच्छा ले कर चाले, काशी में था इक विद्याले ।
शिव कुमार पण्डित विद्वान, उस से ग्रहण किया प्रभु ज्ञान ।

दो० ग्रहण किया था ज्ञान को, शिव कुमार से मीत ।
प्रभु भी गुरु से ज्ञान लें, यही जगत की रीत ।। २४६९क
कनखल में भी नाथ जी, रहे गुरु के पास ।
गुरु जी बहु विद्वान थे, शास्त्र पढ़े प्रभु खास ।। २४६९ख

कई गुरुओं से विद्या पाय, घर में लौट प्रभु जब आय ।
मात पिता ने ब्याह रचाया, गृहबन्धन उन के गल पाया ।
कहा नाथ बेज़र हे प्यारे, प्रभु राम के करतब न्यारे ।
जिस की माया सब जग बांधे, उस प्रभु को किमि कोई बांधे ।
परवैराग्य प्रभु मन जागा, और योग में मन अनुरागा ।
पिता जभी थे स्वर्ग सिधाये, राम प्रभु वन ओर सिधाये ।
खोजें गुरु जो योगी होय, मायामल को योगी धोय ।
वन में कष्ट बहु प्रभु पाये, बेज़र को सद्गुरु बतलाये ।
कुछ तपस्वी नाथ ने पेखे, लेकिन शून्य योग से देखे ।

दो० प्रभु ने त्यागे सकल जन, ज्ञात न जिन को योग ।
घोर वनों को चल पड़े, छोड योग हित भोग ।। २४७०

इस विध बेज़र को बतलाया, शरणी जो सद्गुरु चलि आया ।
प्रभु जी का अति दिव्य अवतार, और उन के अति दिव्य विचार ।
प्रभु के योग धर्म का सार, कथन किया सब सह विस्तार ।
नित नूतन प्रसंग चलाते, बेजर को सद्गुरु समझाते ।
भया फिर बेज़र को विश्वास, प्रकटे राम ले शक्ति खास ।
इक बात उस और भी जानी, गुरु किरपा से जो पहचानी ।
मुलख राज भी प्रभु का रूप, जिस घट में प्रभु रहते गूप ।
जिस पर करें मुलख जी दाया, प्रभु कृपा को उसी जन पाया ।
प्रभु योगेश्वर हैं अवतारी, मुलख को दीनी शक्ति भारी ।
मुलख की कृपा प्रभु की दाया, वह पाये जिस भेद भुलाया ।

दो० इस विध बेज़र को स्वयं, सद्गुरु दीना ज्ञान ।
प्रतिभा का उस को मिला, साथ उसी के दान ॥ २४७१क
महिमा प्रभु की लिपि करत, बैठ सदा एकान्त ।
सुनते सद्गुरु ध्यान से, बैठ भक्त भी शांत ॥ २४७१ख

गुरु ढिग आ निज कृति सुनाता, पुरस्कार गुरु जी से पाता ।
प्रभु लीला भजनों में गाता, इस विध गुरु का चित्त रिझाता ।
भजनों का संग्रह लिख पाया, भक्त जनों ने वे अपनाया ।
जिन में वर्णित दिव्य इतिहास, प्रभु लीला की घटनें खास ।
बेज़र ने जो भजन बनाये, भक्त जनों ने जो अपनाये ।
सत्संगों में गाये जाते, प्रभु भक्तों के मन को भाते ।
वे भजन जो गाये सुजान, प्रभु की महिम का पाये ज्ञान ।

काक भुषुण्डी जो था गाया, हरिहरानन्द जो वर पाया ।
रामरत्ती व रामाबाई, दिव्य समाधी जिसने लाई ।
चान्द पुर का दिव्य इतिहास, कृपा प्रभु की जहां भयी खास ।
ऐसे ऐसे बहु प्रसंग, मिलते भजनों के बन अंग ।
उन भजनों को जो जन गावे, प्रभु प्रीत का स्रोत बहावे ।

दो० प्रभु प्रीत के स्रोत को, जो बहावें मीत ॥
गुरु किरपा से चल पड़ी, उन भजनों की रीत ॥ २४७२क
कवि के देख प्रेम को, योग्य उसे पहचान ।
गुरु किरपा उस पर भयी, और अधिक महान ॥ २४७२ख

प्रभु की जब भयी दया महान, आरती प्रभु की रची सुजान ।
जिस में प्रभु की महिमा गाई, लीला प्रभु की जिस में आई ।
जिस में प्रभु की है गुण गाथ, जो गायें सो भयें सनाथ ।
जहां योग की मिले बढ़ाई, ऐसी आरती कवि बनाई ।
आर्तजन जब आरती गावें, विनय प्रभु उन की सुन पावें ।
बेज़र से प्रभु यह बनवाई, हर्षित भई भक्त समुदाई ।
देव भी हर्षित भये विशेष, भये प्रफुल्लित शेष महेश ।
आरती यह जगत को तारे, दुखियों के दुख दर्द निवारे ।
इसको जन जो गाने हारे, प्रभु के होंगे खास प्यारे ।

दो० नित्य करे जो आरती, प्रभु लिखाई जोय ।
चित्त एकाग्र सहज में, जन उसी का होय ॥ २४७३क
चित्त उसी का सहज हो, एकाग्र लो तुम जान ।

मधुर ध्वनि से आरती, करत जो नित सुजान ॥ २४७३ख

प्रभु की आरती भयी प्रसिद्ध, इसी को गावें जन* व सिद्ध ।
इस को गावें शेष महेश, गावें इस को देव गणेश ।
मुनी मुनीश्वर इस को गावें, प्रभु की पूजा सब कर पावें ।
इस को गावें सब नर नार, जिन को प्रभु चरणों से प्यार ।
इस को गावें भक्त सुजान, करते हैं जो प्रभु का ध्यान ।
गावे दुःख में यदि पुमान, सुखी भये जन यह लो जान ।
अर्थार्थी यदि कोई गावे, मनोकाम वह जन पा जावे ।
जिज्ञासु करे आरती मीत, धार के मन में प्रभु से प्रीत ।
ज्ञान मिले उस जन को भाई, आरती प्रभु सबन सुख दाई ।

दो० मूल सुखन की आरती, सुख दाता प्रभु जान ।
नित्य करें जो आरती, दुर्लभ सुख वे पान ॥ २४७४
राम लाल अष्टोत्तरी, भी लो निशि दिन फेर ।
पूरण हों सब कामना, मोक्ष न लावत देर ॥ २४७५

और रचना जो प्रभु लिखाई, उस का नाम सुनो मन लाई ।
'संकट मोचन' प्रभु लिखाया, संकट टलता जिस ने गाया ।
रचन और जो है लिखवाई, उसका भी हो वर्णन भाई ।
"राम लाल चालीसा" जानो, भक्त जनों का प्रिय वह मानो ।
"सद्गुरु स्तोत्र" एक लिखाया, बृहत्पाठ जो है बन पाया ।
और ग्रंथ का करें बखान, "सद्गुरु गीता" उस को जान ।

* भक्तजन

संस्कृत का यह ग्रंथ पुरान, भाषा में अनुवाद है मान ।
बेज़र और कीन इक रचना, जिस में वर्णित अद्भुत घटना ।
स्वामी जी जब गये मद्रास, उन की यात्रा थी वह खास ।

दो० उस यात्रा का वर्णन, जिस में आया खास ।
जानो नाम ग्रंथ का, है "यात्रा मद्रास" ॥ २४७६क
अब बतलाऊँ नाम मैं, उस ग्रंथ का मीत ।
प्रभु लीला जिस में कथी, है बेज़र सप्रीत ॥ २४७६ख

४०. श्री योग महादिव्य रामायण की रचना, उस के पाठ का विधान व फल

प्रभु लीला का ग्रंथ जो, "महा दिव्य रामायण" ।
प्रथम काण्ड उस का रचा, बेज़र ने है जान ॥ २४७६ग
उस से अगले काण्ड सब, रचना 'सेवक' जान ।
"सेवक" तो इस योग्य न, प्रभु जी दीना मान ॥ २४७६घ
प्रभु ने दीना मान है, "सेवक" तो मतिमन्द ।
"सेवक" में सामर्थ्य न, रचे एक भी छन्द ॥ २४७६ङ
महादिव्य रामायण यह, महा योग का ग्रंथ ।
है रचना यह नाथ की, स्वयं रचा प्रभु ग्रंथ ॥ २४७६च
इस ग्रंथ को जो पढ़े, नित्य लाय कर चित्त ।
ज्ञान मिले दिव योग का, सफलकाम हो मित्त ॥ २४७६छ
सफलकाम हो मित्त वह, प्रभु महिमा मन लाय ।

मार्ग योग अपनाय कर, प्रभु कृपा को पाय ॥ २४७६ज

प्रभु कृपा को पाय वह, जो सब सुख की खान ।

रामायण के पाठ से, जानो लाभ महान ॥ २४७६झ

लाभ रामायण के बहु जान, पढ़े सुने जो ला कर ध्यान ।
उसके दुःख दर्द सब नाशें, भव बन्धन न लेश व्यापें ।
दुःखी पढ़े सुखी हो जाये, अज्ञानी ज्ञानी बन पाये ।
रोगी रोग से मुक्ति पावे, योग साध कर धर्म कमावे ।
पांच क्लेश हों उस के दूर, नित्य पढ़े जो ग्रंथ जरूर ।
अविद्या अस्मित राग द्वेष, और क्लेश जो अभिनिवेश ।
इन से मुक्ती जन वह पावे, नित्य पाठ में चित्त लगावे ।
काम क्रोध वा लोभ महान, मोह रिपु अहंकार पहचान ।
इन को वश में वह कर पावे, नित्य पाठ में मन जो लावे ।

दो० नित्य पाठ जो जन करे, कर के प्रभु का ध्यान ।

प्रभु किरपा से सब मिले, उस को सुख महान ॥ २४७७

उसको मिले गा सुख महान, नित्य करे जो प्रभु ध्यान ।
ग्रंथ पढ़े वा सबन सुनावे, नित्यकर्म में ढील न लावे ।
दीना प्रभु ने ग्रंथ महान, योग का जिस में सकल ज्ञान ।
मानव जीवन का सब सार, भरा है जिस में प्रभु अपार ।
कर्म भक्ति व ज्ञान का सार, सज्जन पुरुषों का व्यवहार ।
जिस में मिलें सभी इक संग, और योग के आठों अंग ।
ऐसा ग्रंथ दीना भगवान, पढ़ो उसे तुम ला कर ध्यान ।

पाठ करें हो मन प्रबुद्ध, पाठ करें हो चित्त भी शुद्ध ।
पाठ करें प्रभु की हो दाया, पाठ करें प्रनाश हो माया ।

दो० पाठ करें जो भक्त नित, धरें प्रभु का ध्यान ।
माया का न काम वहां, चित्त बसें भगवान ॥ २४७८क
महादिव्य रामायण का, पाठ करे जो प्रात ।
सफल काम वह जन भये, सुखी रहे दिन रात ॥ २४७८ख
सुखी रहे वह दिवस भर, पाठ करे जो प्रात ।
सायं को भी पाठ कर, सुखी बितावे रात ॥ २४७८ग

पाठ करे जन सुख को पावे, पाठ करे दुख दर्द नसावे ।
पाठ करे हो आतम शुद्धी, पाठ से हो उजागर बुद्धी ।
पाठ से तीन लोक में सुख, पाठ से दूर भये बहु दुख ।
पाठ से रोग शोक का नाश, पाठ से हो सब पाप विनाश ।
पाठ से हो जन का कल्याण, पाठ से देवं लोक में मान ।
पाठ से उच्च गति को पाये, सन्मारग में वह लग जाये ।
सब संकट से उस की मुक्ति, जो जन जाने पाठ की युक्ति ।
दिव्य रामायण का कर पाठ, पावें नव निधि सिद्धी आठ ।

दिव्य रामायण पाठ कर, पावें सिद्धी आठ ।
दया नाथ की जन गहें, नित्य करें जो पाठ ॥ २४७९क
रामायण में राम का, जानों है अधिवास ।
पाठ करे जो नित्य जन, रहे राम के पास ॥ २४७९ख
जन चाहे यदि राम का, चित्त में होय वास ।

पाठ करे रामायण का, मन में धर विश्वास ॥ २४७६ग
सरल रीत यह योग की, प्रभु बतलायी आप ।
दिव्य रामायण को पढ़े, भूले सकल संताप ॥ २४७६घ
रीति पाठ की अब बतलायें, जन सकल जिमी जानन पायें ।
सहज पाठ तुम एक लो जान, दूजा पाठ अखण्ड पहचान ।
दोनों के कुछ नेम बनाये, नाथ यहां जो हैं लिखवाये ।
आसन शुद्ध जन लेय लगाय, शांत भाव से प्रभु को ध्याय ।
सुन्दर चौकी तभी सजाय, ग्रंथ उसी पर वह रख पाय ।
ग्रंथ में मान प्रभु का वास, बैठे बन वह प्रभु का दास ।
दिव्य रामायण का 'सहगान', कण्ठ मधुर से गाये सुजान ।
कर फिर प्रभु जी को प्रणाम, करे शुरु वह पाठ अभिराम ।
जितना पाठ आज कर पावे, उसी से आगे कल चलावे ।
इस विध पढ़े सम्पूर्ण ग्रंथ, यह है सहज पाठ का पंथ ।
दो० ग्रंथ होय संपूर्ण जब, करे प्रभु का ध्यान ।
विनय करे भगवान से, जिन की दया महान ॥ २४८०
"हे नाथ है आप की दाया, जिस ने सुन्दर मग दिखलाया ।
भव बहतों को दीन उपदेश, योग भक्ति का दिव्य आदेश ।
अलौकिक रूप आप का प्यारा, और अलौकिक जीवन सारा ।
जिस ग्रंथ में है यह गाया, आप की कृपा से पढ़ पाया ।
किरपा करिये जग के स्वामी, आप प्रभु हो अन्तर्यामी ।
मैं हूँ दोषों का आगार, मुझ में लोभ क्रोध वा मार ।

मुझ को भी प्रभो दीजो दान, योग करूं मैं भी भगवान ।
योग मार्ग में मैं लग जाऊं, आशीर्वाद आप से पाऊं ।
बारबार पढ़ आप की गाथ, ध्यान भजन कर बनूं सनाथ ।

दो० गाथ आप की नाथ जी, पढ़ूं नित्य मन लाय ।
चरण आप के जगत में, मेरे बनें सहाय ॥ २४८१क
मेरे बनें सहाय जी, चरण आप के देव ।
जग में मेरा हो धर्म, योग भक्ति व सेव" ॥ २४८१ख

इस विध बहु विनय कर पाय, और चित्त में प्रभु को ध्याय ।
फल मिले तभी उसे महान, पाठ रामायण का कर जान ।
सहज पाठ की विधि बतलाई, नित करे जो जन चित्त लाई ।
उस पर राम की होय दाया, जिस कीना उस सुख को पाया ।

४१. श्री योग महादिव्य रामायण के अखण्ड पाठ की विधि, पाठ का माहात्म्य

अब बतलावें दूजा पाठ, भक्त कहें अखण्ड जो पाठ ।
अखण्ड पाठ की जानो रीत, करता जो जन सहज प्रीत ।
वह अखण्ड भक्ती को पावे, और न जीवन में दुख पावे ।
अखण्ड पाठ करे चित्त लाय, उस का भाग्य उदय हो जाय ।

दो० अखण्ड पाठ की रीत को, समझे जन ला ध्यान ।
सब सज्जन मिल कर करें, इस का कथें विधान ॥ २४८२

निश्चित तिथि प्रथम कर पावे, भक्तन को संदेश भिजावे ।

सब से करे विनीत निवेदन, बनें सहायक तब सब आ जन ।
स्वच्छ करे वह सकल स्थान, प्रभु का आसन रचे महान ।
पुष्पन से वह उसे सजाये, धूप धुपाये दीप जलाये ।
ग्रंथ की वेदी हो मनोहर, पाठक का भी आसन सुखकर ।
भक्त जनों से करे निवेदन, पाठ में बारी दें सभी जन ।
पाठ न खण्डित जिमि हो पाये, पाठ की श्रृंखल तिमि चलाये ।
पाठ करें सब अपनी बारी, सभी जनों को जो सुख कारी ।
रात दिवस का भेद न आय, पाठ करें सब जन चित्त लाय ।
ज्योति प्रभु की बुझ न पाय, पाठ में भी न बाधा आय ।
शांती पूर्वक चाले पाठ, बीतें इस विध पहर जो आठ, ।

दो० ग्रंथ संपूर्ण जब भये, प्रभु कृपा से मीत ।
स्तवन प्रभु का तब करें, सब जन मिल सप्रीत ॥ २४८३

प्रभु के गीत सभी मिल गावें, प्रभु का धन्यवाद कर पावें ।
प्रभु की कृपा सभी पर भारी, पाठ की दीनी शक्ति सारी ।
और भरा सब के चित्त भाव, पाठ अनूपम का बहु चाव ।
अखण्ड पाठ से भक्ति बाढ़े, अखण्ड पाठ सभी दुख काढ़े ।
अखण्ड पाठ से भाग्य प्राप्त, पढ़ सुन कर सब अनिष्ट समाप्त ।
शुभ कर्मन पर करे जो पाठ, प्रभु किरपा से बढ़ता ठाठ, ।
कष्ट पड़े पर करत जो पाठ, उस का संकट जाय सब नाठ ।
शोक में पाठ यदि कर पावे, धैर्य तभी सब के मन आवे ।

दो० रोग शोक दुख आदि को, पाठ करे यह दूर ॥

सुख संपद जन की बढ़े, प्रभु किरपा भरपूर ॥ २४८४क
प्रभु किरपा भरपूर हो, उन जन पर मम मीत ।
जो रामायण का करें, अखण्ड पाठ सप्रीत ॥ २४८४ख
पढ़ें सुनें जो ग्रंथ को, धारें प्रभु को चित्त ।
प्रभु का ही पूजन करें, कर्म भी प्रभु निमित्त ॥ २४८४ग

ऐसे जन प्रभु कृपा पावें, ऐसे जन भव से तर जावें ।
ऐसे जनन को लगे न दोष, ऐसे जन सदैव निर्दोष ।
ऐसे जन की उपमा नाहीं, रहें सदा प्रभु भक्ति समाहीं ।
ऐसा जन मुक्ती को पावे, जीवन में बहु गुण अपनावे ।
प्रभु किरपा से रहत निरोग, बसे न उस के चित्त में सोग ।
प्रभु की सीख रहे मनमाहीं, यम नियमों को भूले नाहीं ।
रहता हिंसा से वह दूर, सत्य के पथ पर चले ज़रूर ।
अस्तेय धर्म उस को प्यारा, ब्रह्मचारी जगत से न्यारा ।
अपरिग्रह का राखे ध्यान, इस विध पाये जग में मान ।

दो० रामायण में यम कहे, योग धर्म के अंग ।
पाठ करे जो जन सदा, रहें उसी के संग ॥ २४८५क
रामायण का पाठ कर, पाले नेम निसंग ।
शौच धर्म को पालता, हो संतोषी संग ॥ २४८५ख
स्वाध्याय रामायण का, करे निरन्तर जोय ।
उस का तप से प्रेम हो, भक्त प्रभु का सोय ॥ २४८५ग

यम नियम को पाल दिखलावे, आसन की भी शिक्षा पावे ।

प्राणायामी बने सुजान, प्रत्याहार का मिले ज्ञान ।
धारणा धरे राम के रूप, ध्यान मिले तब उसे अनूप ।
प्रभु कृपा से समाधिस्थ होय, योगी बन निर्वाण को गोय ।
सप्त साधन जो प्रभु बताये, प्रवृत्ति उन में भी वह लाये ।
ऐसी प्रभु की दया अनूप, मिले पाठ कर योग अनूप ।
षट्कर्मन में उपजे प्रेम, नेती धौती का हो नेम ।
नौली कर वस्ती कर पाये, त्राटक इक टक वही लगाये ।
कपाल भाति को करे सुजान, पा कर षट्कर्मन का ज्ञान ।

दो० रामायण जो जन पढ़े, योग में हो प्रवृत्त ।
पूरण योगी वह बने, प्रभु में ला कर चित्त ॥ २४८६क
आसन प्राणायाम कर, मुद्रा सीख सुजान ।
प्रत्याहार ध्यान कर, समाधि पाव सुजान ॥ २४८६ख

गुण पाठ के कथ क्या पायें, पाठ करें सो जानन पायें ।
इस विध पाठ करें संपूरण, भाग जगे उन जन का पूरण ।
सभी फिर मिल करें प्रभु पूजा, छोड़ छाड़ के कारज दूजा ।
प्रभु चरणों से लेय प्रसाद, धार के मन में प्रभु के पाद ।
विदा भयें सब सज्जन लोग, अखण्ड पाठ का जानो भोग ।
यह रामायण प्रभु लिखाई, मुलखराज की किरपा पाई ।
आशीष महाप्रभु का पाया, दिव्य ग्रंथ तभी बन पाया ।
भक्त जनों को यह सुखदाई, पढ़ें सुनें वे सब लिवलाई ।
राखें इस को सदा संभाल, सुन्दर ले कर एक रूमाल ।

बांध के राखें साफ स्थान, इस ग्रंथ का करते मान ।

दो० मान करें जो ग्रंथ का, प्रभु भयें तब दयाल ।
प्रभु का चरित पुनीत है, राखो यह संभाल ॥ २४८७क
प्रभु के सब उपदेश हैं, इस में आये मीत ।
प्रभु लीला इसमें लिखी, इस से परम पुनीत ॥ २४८७ख
प्रभु भक्तों का चरित भी, इस में वर्णित सांइ ।
भक्ती रस उन से बहे, हमरे जीवन तांइ ॥ २४८७ग

भक्ती रस का ग्रंथ अनूप, योग के साधन इस में गूप ।
हठ योग भी ग्रंथ में आया, राज योग भी है कथ पाया ।
और योग के हैं जो भेद, मिलें इसी में बिन वे खेद ।
इस में ज्ञान का है उपदेश, गुरु भक्ती का शुभ आदेश ।
भिन्न मतों के जो उपदेश, इस ग्रंथ में मिलें अशेष ।
ईश्वर के जो भये अवतार, धर्म हेतु लीना तन धार ।
उन का वर्णन भी मिल पाये, प्रसंग कई यहां मन भाये ।
इस में बहु दृष्टांत समाये, प्रभु जी ने जो मुख से गाये ।
उन से मिले उपदेश महान, योग धर्म लो उत्तम जान ।
मुनियों ने लिख पाये जो ग्रंथ, अथवा संत जनों का पंथ ।
उन का सार भी इस में जान, दिव्य रामायण को दिव मान ।

दो० दिव्य रामायण को दिव, मान चित्त में मीत ।
पढ़े सुने जो प्रेम से, भये सुखी सब रीत ॥ २४८८क
पढ़ कर इस को प्रेम से, अथवा सुन सप्रेम ।

भक्त प्रभु का जो भये, नित्य निभावे नेम ॥ २४८८ख
आगम निगम पुराण जो, शास्त्र रचे अनेक ।
दिग दर्शन उनका मिले, पढ़ रामायण एक ॥ २४८८ग
इस रामायण में जन पाये, भक्तों ने निज ध्यान बताये ।
ध्यान मध्य जो उन लख पाया, वर्णन में वही यहां आया ।
योग पुरातन विद्या भाई, योग धर्म की थी प्रभुताई ।
योग में ही सब का विश्वास, रामायण कथन करे इतिहास ।
योगिन का इतिहास पुनीत, शिव से चली थी जो यह रीत ।
जिन जनों ने रीत अपनाई, उन के नाम कथे हैं भाई ।
जगत में कीना उन प्रचार, योग धर्म का बहु विस्तार ।
श्रद्धा से जो उन्हें ध्यावे, किरपा शंकर की वह पावे ।
वही सूत्र आ प्रभु विस्तारा, पुरातन योग जग प्रचारा ।
सिमरे जो जन प्रभु की शक्ति, उपजे योग में उस की भक्ति ।
दो० रीत योग की यह सकल, जो पढ़े इस ग्रंथ ।
प्रभु किरपा को ग्रहण कर, चले योग के पंथ ॥ २४८९क
कलियुग में जो हो रहा, पुनः योग विस्तार ।
प्रभु शक्ती से हो रहा, ऐसा निश्चय धार ॥ २४८९ख
सकल विश्व में योग का, बजा नगारा मीत ।
किस शक्ती के आसरे, है चली यह रीत ॥ २४८९ग
जग अपनाता योग को, भेद लेश न चित्त ।
किस शक्ती के आसरे, होता है यह मित्त ॥ २४८९घ

देश देशान्तर में जा देख, योग का आदर सब थाँ पेख ।
राजा रंक इसे अपनावें, विद्वज्जन इस को कर पावें ।
धर्मी जन इस का यश गाते, और सभी कर सुख को पाते ।
प्रभु शक्ती का यह प्रभाव, योग प्रति सब का सद्भाव ।
प्रभु योगेश्वर हैं अवतार, उन की शक्ती परम अपार ।
जो जन उन की शक्ती जाने, भेद बुद्धि न चित्त वह आने ।
पढ़ रामायण को जब पावे, भेद बुद्धि तब चित्त न आवे ।
उस को भये मन में विश्वास, प्रभु ही करते योग विकास ।

दो० प्रभु शक्ती से हो रहा, जग में योग विकास ।
प्रभु कृपा वह पाये जन, जिस मन यह विश्वास ॥ २४६०क
प्रभु का दृढ़ संकल्य जो, और दिव्य प्रभाव ।
जग में उस से हो रहा, इस का प्रादुर्भाव ॥ २४६०ख

प्रभु गुरुओं के गुरु अवतारे, प्रभुओं के भी प्रभु अवतारे ।
देव जनों के नयनन तारे, ऋषी मुनियों के अति प्यारे ।
युग पुरुषों का जो उपदेश, ऋषि मुनियों का दिव्य संदेश ।
शास्त्रों का शुभ धर्म विधान, प्रभु जी ने दृढ़ कीना आन ।
योग विद्या जो जग भुलाई, प्रभु जी ने सब आन सिखाई ।
धर्म मर्यादा का हो मान, प्रभु जी ने जग को कहा आन ।
रामायण शास्त्र को लिखवाय, जग को दीना प्रभु समझाय ।
युग युगांतर योग संदेश, जग नहीं भूले फिर यह लेश ।

दो० प्रभु का दिव संदेश यह, रामायण जो ग्रंथ ।

सरल रीत से योग का, कथन करे यह पंथ ॥ २४६१क
इस ग्रंथ को जो पढ़े, लाय प्रभु में चित्त ।
उस के मन में ऊपजे, भक्ती इसी निमित्त ॥ २४६१ख
प्रभु को जाने मात पित, जान प्रभु को ईश ।
प्रभु चरणों से प्रीत कर, योगी बने मुनीश ॥ २४६१ग

योगी बन वह जग में रहता, प्रभु का योग सबन बतलाता ।
जो शिक्षा है प्रभु दे पाई, जिस आचरणी वह है लाई ।
सकल जगत में वही प्रचारे, योग प्रभु का इमि विस्तारे ।
योग धर्म खाण्डे की धार, इस पर चलना है दुश्वार ।
प्रभु किरपा जिस पर हो पाये, वही योग का नेम निभाये ।
सत पै चलना योग का नेम, वही चले जिसे प्रभु से प्रेम ।
सतवादी जो जन हो पाया, उस ने जग में नाम कमाया ।
सत्य से बढ़ कर तप न भाई, पाला सत उस कौन कमाई ।

दो० सतवादी राजा भये, दशरथ वा हरिचन्द ।
जब तक सूरज चांद हैं, रहे गा यश अमन्द ॥ २४६२क
ऐसी शिक्षा जो गहे, इस ग्रंथ से मीत ।
ग्रहण किया उस नेम को, जान योग की रीत ॥ २४६२ख
योग धर्म का सार है, समझे वही सुजान ।
रामायण जिस ने पढ़ी, ला कर पूर्ण ध्यान ॥ २४६२ग
ला कर पूर्ण ध्यान को, पढ़ रामायण मित्त ।
प्रभु महिमा तब बसत है, सदा भक्त के चित्त ॥ २४६२घ

ग्रंथ और कुछ प्रभु लिखाये, भक्तन के बहु मन जो भाये ।
सद्गुरु मुलख राज महाराज, जिन का भक्तन के चित्त राज ।
करें जगत का बहु कल्याण, उन से मिले योग का दान ।
जो भी गुरु चरणी चलि आया, ज्ञान दिव्य उस जन ने पाया ।

४२. ब्रह्माण्ड योग शक्ति ग्रंथ की रचना और उस का विषय

रचना उन की एक महान, योग ब्रह्माण्ड शक्ती जान ।
ग्रंथ अनुपम एक जो भाई, कथा योग जिस में सुखदाई ।
विषय अनेकों उस में आये, पढ़ सुन जन ज्ञान को पाये ।
ग्रंथ लघु पर ज्ञान महान, ऐसी सुन्दर रचना जान ।

दो० रचना सुन्दर एक यह, योग शक्ति की जान ।
पढ़े सुने जो ग्रंथ को, योगी बने सुजान ॥ २४६३

इस ग्रंथ का विषय लो जान, इस में योग का सरल ज्ञान ।
गुरु बिना नहीं योग कमावे, योग गुरु से ही शिष्य पावे ।
यह शिक्षा सद्गुरु दे पायी, इस ग्रंथ में प्रथम है आई ।
जनता मन जो भ्रांती भारी, योग कठिन समझे बहु भारी ।
सद्गुरु ने वह भ्रांति टारी, सरल रीत बतलाई सारी ।
योग के साधन सरल महान, जिन से जन का बहु कल्याण ।
ऐसा सद्गुरु का उपदेश, भय माने न कोई मन लेश ।
ऋषि मुनियों की हम संतान, यौगिक मिला उन्हीं से ज्ञान ।

दो० ज्ञान योग का था मिला, ऋषि मुनियों से मीत ।
भूल गये उस ज्ञान को, दुखी भये इस रीत ॥ २४६४क
अंधकार में हैं पड़े, फिर रहे दर बदर ।
पुन: योग की सीख लें, जा अब गुरु के दर ॥ २४६४ख
प्रेरक गुरु के ये वचन, पढ़े सुने जो जीव ।
अंधकार से निकल कर, गहे ज्ञान की सीव ॥ २४६४ग

इस ग्रंथ के विषय बताऊँ, सद्गुरु जी जो लिखा सुनाऊँ ।
प्रथम विषय योग का लक्षण, योग करे जन भये सुलक्षण ।
दूज विषय षट कर्म का जान, नेती धौती आदी मान ।
धौती के सब भेद बताये, लाभ संग उन के लिख पाये ।
बस्ती नेती न्यौली भाई, इस ग्रंथ में स्पष्ट बताई ।
त्राटक कपाल भांति लो जान, सद्गुरु ने यहां कीन बखान ।
सभी भेद भी उन बतलाये, प्रसंग स्पष्ट जिमि हो पाये ।
देह जिमि होय निर्मल मीत, और करे मन प्रभु से प्रीत ।
ऐसे साधन हैं लिख पाये, जन करे और सुख को पाये ।

दो० षट्कर्मन की साधना, वर्णित कर गुरुदेव ।
आसन के प्रसंग को, लिपित किया गुरुदेव ॥ २४६५

बाईस आसन हैं बताये, सरल रीत से सब समझाये ।
शास्त्रोक्त सब लिखी है बात, निज अनुभव भी संग है तात ।
बहु उपयोगी यह प्रसंग, हों अभ्यास से पुष्टित अंग ।
आगे प्राणायाम बताया, कठिन विषय कर सरल जताया ।

त्रिमि जीवन के प्राण आधार, प्राणायाम योग का सार ।
प्राण सधे तो मन सध जाये, प्राण चले तो मन विचलाये ।
प्राणायामे अमृत ग्राहे, लेश भी संशय न रह पाये ।
सद्गुरु जी इक बात बताई, बात पुरातन है समझाई ।

४३. अमृत मंथन व योग

समुद्र मंथन कहें जो वेद, योग बतावे उस का भेद ।

दो० समुद्र मंथन जान लो, देव असुर मिल कीन ।
अमृत पाया रीत इस, देवन ने ग्रह लीन ॥ २४९६

देव तो दैवी वृत्ति जानो, भावासुरी असुर पहचानो ।
दोनों का इस घट में वासा, वास करें जब तक है श्वासा ।
क्षीर सागर निज मस्तक जान, सुमेरु मेरुदण्ड पहचान ।
मन्थनी जान सुषुम्ना नाल, श्वासों की कर डोरी डाल ।
सद्गुरु विष्णु रूप पहचानो, गुरु की शक्ती लक्ष्मी मानो ।
चलें सुषुम्ना में जब श्वास, क्षीर का मन्थन हो तब खास ।
अमृत स्राव होय उस काल, कुण्डली जाग पड़े तत्काल ।
असुरों की वह माता जानो, अमृत पान की लोलुप मानो ।
अमृत पान करने को धाये, मूर्धा में प्रवेश को पाये ।
वहां तो सद्गुरु हैं भगवान, जिन की शक्ति अतीव महान ।
कुण्डलिनी न वह अमृत पावे, खाली हाथ लौट के जावे ।

दो० उस अमृत का पान कर, साधक परम सुधीर ।

लाभ अमरत्व का करे, जरा विमुक्त शरीर ॥ २४९७क
जरा विमुक्त शरीर हो, गुरु बतलाई बात ।
योग साधना जो करे, होवे उसे साक्षात ॥ २४९७ख

श्वास सुषुम्ना में जब जाये, अमृत धार भी तब बह पाये ।
संयम से चले जन का श्वास, ज्योतिर्मय जो दीर्घ खास ।
चित्त रमे उस में ही मीत, प्राणायाम की है यह रीत ।
प्राणायाम यह नाथ बतांय, योग का सुन्दर मग दरशांय ।
कीना जगत पै बहु उपकार, भ्रांती को उन दीन निवार ।
प्राण के आश्रित जानो योग, प्राण के आश्रित जग का भोग ।
प्राण के आश्रित सिद्धि जान, प्राण के आश्रित जीवन मान ।
प्राण के आश्रित सब संसार, प्राण जगत का मुख्य आधार ।

दो० सद्गुरु दीना प्राण का, भक्त जनों को ज्ञान ।
प्राणायाम को जन कर, करता वश में प्राण ॥ २४९८क
जिस के वश में प्राण हो, उस के वश संसार ।
लेश न संशय मन धरो, साधन का यह सार ॥ २४९८ख

वश करें जब इस विध प्राण, होवे मन भी वश लो जान ।
मन वा प्राण का गठन अटूट, जाय विषयों से पीछा छूट ।
वासना बहु तब होवे क्षीण, प्राण सहित जब मन हो लीन ।
आत्म बोध तब जन ले पाय, इस विध जब वह योग कमाय ।
तत्व उस के होयें अधीन, रहे जगत में सुखी अदीन ।
प्राणायाम करे जन योगी, प्राण साध जन रहे न रोगी ।

प्राण से मुद्रा का भी नात, स्पष्ट कीनी सद्गुरु यह बात ।
प्राण व मन दो, कर के एक, केन्द्रित हों जब अंग में एक ।
वह मुद्रा का रूप पहचान, अनेकों मुद्रा इस विध मान* ।
दो० सद्गुरु ने निज लेख में, मुद्रा कीन बखान ।
पचीस मुद्रा लिख कर, दीना सब को ज्ञान ।। २४९९
ध्यान का सद्गुरु कीन बखान, करता दूर जन का अज्ञान ।
धारणा जिस का पहला रूप, जिस में त्रिकुटी रहे अनूप ।
ध्याता, ध्येय ध्यान, लो जान, त्रिकुटी का यह रूप पहचान ।
धारणा से ऊपर है ध्यान, स्थिरता उस में अधिक पहचान ।
ध्याता ध्येय में चित्त लगाय, वृत्ति स्थिरता को झट पाय ।
ध्यान का जानो वही स्वरूप, ध्याता ध्येय की स्थिति अनूप† ।
धारणा का फल लो तुम जान, पाप की हानि इस से मान ।
ध्यान से गुणों का हो विकास, ईश्वर का चित्त में प्रकाश ।
ऐसा ध्यान शिष्य गुरु से गोय, स्पष्ट करत है सद्गुरु सोय[1] ।
दो० पूरण सद्गुरु जब मिलें, श्रद्धालु हो शिष्य ।
योग साधन से शिष्य का, उज्ज्वल बने भविष्य ।। २५००क

* "वायु की शक्ति में मानसिक संपूर्ण लहरों को मिला कर किसी केन्द्र में स्थिर करना मुद्रा है" ।
ब्रह्मांड योग शक्ति वर्षा पृष्ट ४३

† "धारणा में ध्याता, ध्यान और ध्येय इन की त्रिकुटी होती हैं" पृष्ट ६० ब्रह्माण्ड योग शक्ति वर्षा
" ध्यान में केवल ध्याता और ध्येय, इन दोनों की स्थिति रहती है" पृष्ट ६१ ब्रह्माण्ड योग शक्ति वर्षा

1 उपर्युक्त शास्त्रीय प्रमाणों से हमें पता चलता है कि योग साधन से ही मनुष्यों के कर्म बन्धन (पाप) दूर होते हैं । शास्त्र कथन पूर्ण रूपेण सत्य है । किन्तु इन साधनों को बिना पूर्ण गुरु के कौन करा सकता है ।
पृष्ट ७१ ब्रह्माण्ड योग शक्ति वर्षा

उज्ज्वल बने भविष्य तब, गुरु पग रहे ध्यान ।
आशा तृष्णा त्याग जब, करे गुरु का मान ॥ २५००ख
गुरु की कृपा जब भये, ऐसा बने ध्यान ।
*जन्म २ के पाप सब, भस्म करें भगवान ॥ २५००ग
अजपा जप जब जन जपे, चले श्वास की माल ।
ध्याता के मन में रमे, सद्‌गुरु ही सब काल ॥ २५००घ
सद्‌गुरु का तो रूप है, अति आकर्षक मीत ।
दृष्टिगत यहां पर भये, चकोर चन्द्र की प्रीत ॥ २५००ङ

इस विध सद्‌गुरु जी लिख पाया, ग्रंथ रचा जो सबन सुहाया ।
मुलख राज भगवान का ज्ञान, जिसे मिला सो तरा सुजान ।
ऋषिकेश का आश्रम प्यारा, मुलख राज जी बहुत संवारा ।
प्रभु की जान के रचन पवित्र, जहां कीन प्रभु दिव्य चरित्र ।
उसी आश्रम वे करते वास, था मुलख का खास आवास ।
इक दिन भक्त कई चलि आये, हरिद्वार वसनीक सुहाये ।
कहन लगे वे मिल के सारे, "नाथ ! भाव कुछ मन हमारे ।
आज्ञा मिले तो करें बखान, नाथ ! हमें ना बहुत ज्ञान ।
भाव नित्य ये मन में आयें, आ आप से ज्ञान को पायें ।
नित्य आना हमरा दुश्वार, त्याग सकें नहीं जग के कार ।

४४. कनखल (हरिद्वार) में आश्रम स्थापना

*"योगी सद्‌गुरु कृपा कर ध्यान अथवा अभ्यास द्वारा शिष्य के पूर्व जन्मों के सम्पूर्ण पापों का फल सूक्ष्म शरीर द्वारा भोग करा कर भस्म कर देते है" ब्रह्माण्ड योग शक्ति वर्षा पृष्ट ७३

दो० नाथ विनय इक मानिये, करें अनुग्रह आज ।
आश्रम का निर्माण हो, हरिद्वार महाराज ॥ २५०१क
हरिद्वार में होय जब, आश्रम का निर्माण ।
बहु जनता का हे प्रभो, होगा फिर कल्याण ॥ २५०१ख
हम को अवसर नित मिले, दर्शन का हे नाथ ।
आश्रम का निर्माण करि, हम को करें सनाथ ॥ २५०१ग
गंगा तट पर नाथ जी, ले कर भूमि एक ।
आप बनाईये आश्रम, हमें मिले तव टेक" ॥ २५०१घ
ऐसी विनय सुनाय कर, सभी भये नत माथ ।
सद्गुरु तब कहने लगे, दे आशिष इक साथ ॥ २५०१ङ
"भक्त जनो तुम सच उच्चारा, हरिद्वार है तीरथ भारा ।
बहु भक्त वहां होंय एकत्र, इस की विदित महिम सर्वत्र ।
देश विदेशी जन चलि आयें, गंगा मां के दर्शन पायें ।
ऋषि मुनियों की कुटिया देखें, हरि की महिमा को भी पेखें ।
हरिद्वार है हरि का द्वार, असंख्य जीव आ लागें पार ।
गंगा मां का निर्मल नीर, निर्मल उस तट बहत समीर ।
निर्मल मन से ऋषि मुनि सारे, करते वास हैं हरि के द्वारे ।
श्रद्धा से जो जन चलि आये, निर्मल तन मन कर के जाये ।
दो० निर्मल छटा अनूप है, हरिद्वार की मीत ।
धन्य सकल जन आप हैं, जिन की हरि से प्रीत ॥ २५०२
हरि से प्रीत करत हैं जो जन, सिमरें हरि को ला निज जो मन ।

योग द्वारे वे चलि आवें, प्रभु जी से अशिष को पावें ।
प्रभु जी हैं करुणा के धाम, होंय शरणागत पूरण काम ।
पूर्ण करें तवभाव भगवान, उन के चरणों का करो ध्यान ।
सृष्टि सकल उन की उपजाई, उन के लिए न कुछ कठिनाई ।
हरिद्वार आश्रम बनवायें, भक्त सकल भी चलि के आयें ।
आप की इच्छा होय पूरी, दूर भये आश्रम की दूरी ।
ऐसा स्थल अब देखो जाय, प्रभु का आश्रम जहां बन पाय" ।

दो० हर्षित होकर चल पड़े, आशिष गुरु की पाय ।
भूमि देखें हम अभी, हरिद्वार में जाय ।। २५०३क
द्वार हरि के पहुँच कर, कीना उन प्रयास ।
कनखल में फिर मिल गया, खण्ड भूमि का खास ।। २५०३ख
सुन्दर भूमि देख कर, आ विनती उन कीन ।
"नाथ गंग के तीर पर, देखी भूमि नवीन ।। २५०३ग
गंग नहर के पास है, गंगा तट पर नाथ ।
राजमार्ग के साथ ही, चलि देखें हम साथ" ।। २५०३घ

हरिद्वार तब नाथ पधारे, संग भक्त भी आये सारे ।
उन सब ने फिर थल वह देखा, सुन्दर थल है सबन उलेखा ।
सद्गुरु के भी मन वह भाया, भक्त कहें 'हे प्रभु कर दाया ।
आश्रम का करिये निर्माण, आप से मांगें हम यह दान' ।
सद्गुरु सुन कर उन की बात, कहन लगे 'हे प्रिय मम तात ।
तीन दुनिया के वाली नाथ, करन करावन उन के हाथ ।

सृष्टी के जो रचने हारे, उन के आश्रित हैं हम सारे ।
किरपा उन की यदि हो जाये, आश्रम शीघ्र यहां बन पाये ।

दो० आश्रम के निर्माण में, कारण खुद हैं नाथ ।
जिन के आश्रित सब जगत, उन के ही यह हाथ' ॥ २५०४क
ऐसा कह कर नाथ जी, बैठे अन्तर्ध्यान ।
क्षण में गये वहां जहां, राम लाल भगवान ॥ २५०४ख

प्रभु का भया था जो आदेश, वह तो विदित न किसी को लेश ।
आश्रम उस थल जो बनवाया, उस का नया नाम रखवाया ।
'साधन' का कर के 'अभ्यास', आश्रम बना 'योग अभ्यास'* ।
यह लीला प्रभु जी की न्यारी, विरला समझ पाय नर नारी ।
भवन हेतु बहु धन जुट पाया, न्यून न मायापतिघर माया ।
†राजा राज कृष्ण रंग राय, सह पत्नी खुद आश्रम आय ।
अपने राज से दीना दान, शीघ्र भया आश्रम निर्माण ।
सद्गुरु देव रह कर सब काल, रचना निरखें दीन दयाल ।
श्रमहारी खुद श्रम बहु कीन, भक्तों ने भी योग था दीन ।
भव्य भवन का भया निर्माण, प्रभु की प्रतिमा का प्रतिष्ठान ।

दो० सुन्दर प्रभु की मूर्ति, युगल रूप में मीत[1] ।

---

* श्री १००८ योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज ने अपने आश्रमों का नाम 'योग साधन आश्रम' रखा था । परन्तु कनखल में जो आश्रम श्री स्वामी मुलख राज जी महाराज ने बनवाया उस का नाम किसी कारण वश 'योग अभ्यास आश्रम रखा'

† बोबली स्टेट चिकवेरम (मद्रास) के राजा राज कृष्ण रंगा राओ और उनकी धर्मपत्नी रानी सरस्वती ।

युगल रूप : श्री १००८ प्रभु राम लाल जी महाराज और श्री १०८ स्वामी मुलख राज महाराज का इकठा चित्र

शोभ रही उस भवन में, मोहे भक्तन चीत ॥ २५०५

भक्त जनों का बहु समुदाय, दर्शन हित आश्रम में आय ।
'सेवक' को वह थल है प्यारा, तीर्थ भूमि में तीर्थ न्यारा ।
योग, भक्ति का दृढ़ आधार, निकट बहे जिस के गंगधार ।
खुद था जिस को गुरु संवारा, प्रभु कृपा की बही थी धारा ।
कनखल तीर्थ अति प्राचीन, प्रभु आश्रम अब बना नवीन ।
*दो तीर्थन का संगम जान, भक्त एकत्र होते आन ।
शिव थी शक्ति यहां प्रकटाई, दक्ष यज्ञ में जो दिखलाई ।
योग की शक्ति परम महान, जिस को जाने सकल जहान ।
राम प्रभु वही शक्ति लाये, योग के आश्रम उन बनाये ।

दो० आश्रम में जन आय कर, सीख लेंय जब योग ।
शक्ती पायें योग से, व्यापें लेश न रोग ॥ २५०६

ग्रहण करें जन योग की सीख, ध्यान भजन की लेवें दीख ।
ऐसा आश्रम वह बन पाया, सब जनता के मन जो भाया ।
सद्गुरु रहें इस में बहु काल, लोक आगन्तुक होंय निहाल ।
रोगिजन जब शरण में आयें, सद्गुरु साधन योग करायें ।
साधन से वे होंय नीरोग, हर लेता है रोग को योग ।
ऐसे ऐसे करें वे योग, जानें जिन को नहीं हैं लोग ।
आर्ष विद्या थी गुरु के पास, प्रभु दीनी जो इन को खास ।
मुलख राज था प्रभु को प्यारा, ज्ञान दिया प्रभु उन को सारा ।

* एक दक्ष प्रजापति का प्राचीन मन्दिर, दूसरा योग का नया आश्रम

दो० सिद्ध बनाया योग से, ज्ञान दीन संपूर्ण ।
राम लाल भगवान ने, मुलख किया था पूर्ण ॥ २५०७क
मुलख किया था पूर्ण उस, नहीं न्यूनता लेश ।
पूरण से पूरण भये, यह इक रहस विशेष ॥ २५०७ख
पूरण सद्गुरु जब मिले, शिष्य भी पूर्ण होय ।
मिले न ऐसा सद्गुरु, शिष्य अधूरा सोय ॥ २५०७ग
'सेवक' को गुरु मिल गये, मुलख जी पूर्ण राज ।
खोटा पैसा भी चला, मुलख राज के राज ॥ २५०७घ
कनखल के उस धाम में, "सेवक" रहता पास ।
सद्गुरु जो सेवा कहें, कर लेता था दास ॥ २५०७ङ

सेवा सेवक की स्वीकारी, सीख योग की दीनी भारी ।
निज शक्ति दे कीन निहाल, योगी सद्गुरु परम दयाल ।
योगी सद्गुरु का जो दान, उस सम नहीं अन्य वरदान ।
देह के रोग व मन का सोग, हरें शिष्य के दे कर योग ।
योग औषध है उन के पास, आधि व्याधि का करती नास ।
आधि व्याधि से जग दुखारी, योगी सद्गुरु करें सुखारी ।
योगी सद्गुरु शरण में लीन, सब विधि 'सेवक' को सुखी कीन ।
जभी से शरण गुरु की पायी, नाशी व्याधी सब दुखदायी ।

दो० व्याधि सकल का नाश कर, सुखी करें गुरुदेव ।
भाग्य विधाता शिष्य के, गुरु देवन के देव ॥ २५०८

सद्गुरु कनखल आश्रम रहते, क्षेम योग भक्तन का वहते ।

भक्त जनों के दुःख कलेश, हरते सद्गुरु स्वयं निशेष ।
जो भक्त निज कलेश बताते, अथवा लिख कर ही भिजवाते ।
कलेश सकल उन के मिट जाते, ऐसी अद्भुत किरपा पाते ।
दूर रहत ही सब दुःख जाते, शक्ति विलक्षण प्रभु दिखाते ।
सद्गुरु मूर्ति का कर ध्यान, भक्त यदि निज दुःख कथ पान ।
उन के दूर हों दुख वा रोग, विलक्षण सद्गुरु का यह योग ।
जिस ने योग यह लीना जान, सद्गुरु से वही युक्त सुजान ।

दो० सद्गुरु से वह युक्त हो, योगी बने सुजान ।
श्रद्धा भक्ति चित्त बसे, सद्गुरु से पा ज्ञान ॥ २५०६

जिस ज्ञान सद्गुरु से पाया, सिमरण में जिस सद्गुरु लाया ।
श्रद्धा से जिस शीष झुकाया, कर विश्वास शरण जो आया ।
तन मन धन जिस सकल समर्पा, अपना जीवन उन कर अर्पा ।
घर परिवार न अपना जाना, सब कुछ सद्गुरु का ही माना ।
श्वास श्वास गुरु का गुण गाये, लेश न और भाव मन लाये ।
गुरु पिता गुरु मात पहचाने, गुरु को ही निज बांधव माने ।
गुरु ही जिस का सखा सहायी, गुरु ही जिस का मांजा* भाई ।
गुरु को ही धन दौलत मान, गुरु को ही सर्वस्व पहचान ।
करता जो सद्गुरु का ध्यान, उस के कलेश सकल मिट जान ।

दो० सभी कलेश उस भक्त के, सद्गुरु करत निशेष ।
इस विध जो सिमरण करत, सद्गुरु चरण विशेष । २५१०क

* मांजा - एक माता से ही जन्मा, अर्थात सगा भाई

सद्गुरु के जो चरण को, स्मरण करे सब काल ।
भव बाधा उस की सकल, दूर भये तत्काल ॥ २५१०ख
कनखल आश्रम नाथ जी, रहते आठों याम ।
रहें समाधी में सदा, सिमरें सद्गुरु राम ॥ २५१०ग
राम लाल भगवान भी, शिष की देखें कार ।
संग रहें उस के सदा, रूप अनेकों धार ॥ २५१०घ
रूप अनेकों प्रभु जी धारें, निज सेवक को प्रभु स्वीकारें ।
प्राकृत नर न जान यह पायें, लीला निरख भक्त विस्मायें ।
कर कृपा जब प्रभु थे आते, मुलख राज उन के गुण गाते ।
मधुर गीतों से प्रभु रिझाते, गाते गाते सुध विसराते ।
मुलख राज की भक्ती देख, जन गण करते सभी उलेख ।
ऐसा योगी विरला भाई, सुधि प्रेम में जो खो जाई ।
एक कहे तुम ना यह जानो, यह तो रूप प्रभु का मानो ।
प्रभु वा इन में भेद ना लेश, बसत प्रभु घट इसी हमेश ।
यह घट ही प्रभु का घट जानो, तन मुलख प्रभु का तन मानो ।
दो० तन मुलख में प्रभु बसत, मन मुलख प्रभु मांहि ।
नीर खीर वत जानिये, सकत किमि बिलगांहि ॥ २५११
अन्य कहे यह बात है ठीक, मुलख राज का कौन शरीक* ।
यह महाशक्ति का अवतार, इस का पा सकें नहीं पार ।
यह तो जन्म सिद्ध है मीत, जन्म से ही प्रभु चरणी प्रीत ।

* अर्थात उन जैसा और कौन हो सकता है।

बालपने से है वैरागी, ईश्वर दर्शन की लिव लागी ।
साधु संगत का बहु प्यारा, गुरु खोजन का था व्रत धारा ।
यह तो ध्रुव प्रह्लाद समान, बाल्यकाल से भक्त महान ।
चाची जब इस की मर पाई, तब जिज्ञासा इस मन आई ।
जीव कहां मर कर है जाता, और जगत का कौन विधाता ।
योगी गुरु से मिलता ज्ञान, सुन पाया यह बाल सुजान ।

दो० योगी गुरु से मिलत है, जन्म मरण का सार ।
गुरु योगी खोजन चला, रहा न घर से प्यार ॥ २५१२क
सुन कर उस की बात को, कहा अन्य ने मीत ।
बाल्यकाल में त्यागनी, घर से कठिन प्रीत ॥ २५१२ख
मुलखराज मैंने सुना, था बालक धीमान ।
साधू सेवी था बड़ा, सब का करता मान ॥ २५१२ग

सत्संग हेतु नित था जाता, हर मन्दिर में समय बिताता ।
जो भी मिलता साधु सुजान, करता मुलख था उस का मान ।
केवल उस की एक ही साध, गुरु मिलें मुझ को कोई साध ।
उस का लक्ष्य यही बस एक, गुरु योगी की ग्रांहू टेक ।
बहु काल उस खोज बीताया, अन्त राम लाल प्रभु पाया ।
यह तो मिलन था दिव्य अनूप, मुलख भया तब राम का रूप ।
गुरु अवतारी शिष अवतारी, वह मिलन की घड़ी भी न्यारी ।
देह की सुध मुलख विसराई, ऐसी सुन्न समाधि लगाई ।

दो० सुन्न समाधि में मुलख, रहन लगे सब काल ।

उसी अवस्था में रहे, सुन पाया चिर काल ॥ २५१३क

अन्य भक्त ने तब कहा, बात ठीक है मीत ।

दश वर्ष तक रहे मुलख, विसरी जग प्रतीत ॥ २५१३ख

जगती सकल मुलख विसराई, विलक्षण इक समाधि लगाई ।
समाधि में सब करते काम, चित्त बसे उन के प्रभु राम ।
हाटी पर भी वे थे जाते, काम वणिज के सब कर पाते ।
आश्चर्य चकित भये थे लोग, अद्भुत करता है यह योग ।
कहा अन्य ने मेरे भाई, कौन मुलख ने बहुत कमाई ।
सारी रात समाधि लगावे, सोने का न चित्त में लावे ।
झट इक बोला अन्य सुजान, बिलकुल ठीक यह सच लो मान ।
सारी रात समाधि लगावे, चोटी छत से बांध दिखावे ।

दो० चोटी छत से बांधता, नींद यदि आ जाये ।

झटका लागे डोर का, खुल नींद तब जाये ॥ २५१४

चकित भये तब सज्जन सारे, सुन मुलख के करतब भारे ।
कहन लगे स्वर इक में सारे, धन्य मुलख हो राम प्यारे ।
राम प्रभु तप वन में कीना, तुम ने बस्तिन में तप कीना ।
सब सुख दीने तुम ने त्याग, योग साधन में इक अनुराग ।
जगत हेतु तुम यह तप कीना, निज तप से जग को सुख दीना ।
प्रभु से पाई शक्ति महान, जिस को देखे आज जहान ।
करे जो तेरा सिमरन नाथ, सब दुख त्यागें उस का साथ ।
जिस ने मुलख राज को ध्याया, लाभ जन्म का उस ने पाया ।

योग शक्ति के तुम हो स्वामी, भक्त तेरे हों पूर्ण कामी ।

दो० पूरण कामी भक्त हो, तेरी चरणी लाग ।
शरण गहे जो मुलख की, जागें उस के भाग ॥ २५१५

एक भक्त तब गिरा उचारी, जानो मुलख की शक्ति भारी ।
इन के सन्मुख पाप न आयें, भय प्रेत भी इन से पायें ।
एक काल की मैं बतलाऊं, आँखों देखी घटन सुनाऊं ।
अमृतसर की एक है नार, लगावे चौकी हफ़ते वार ।
रूह एक फकीर की आये, उस में आ प्रवेश को पाये ।
यह तो विदित नहीं है भाई, कब से चौकी वह चलि आई ।
पूछन हेतु आयें नर नार, भीड़ लगे वहां हर इक बार ।
चित्त में जो धार के आवे, उत्तर उस का वह जन पावे ।

दो० ऐसी लागे चौकड़ी, भवन उसी हर बार ।
पूछन हेतु वहां भयें, एकत्रित नर नार ॥ २५१६क
कुछ भक्त वहां एक दिन, गये मुलख के साथ ।
देखन कौतुक वह बड़ा, बैठ रहे इक हाथ ॥ २५१६ख
सब साज वहां था रचा, सिरफ रूह की देर ।
समय गया तो बीत था, लोग रहे थे हेर ॥ २५१६ग
सब जन भये अधीर थे, जो आये ले आस ।
नारी भी वह देखती, उस का चित्त उदास ॥ २५१६घ
उधर रूह थी ताकती, उसे न सूझे काज ।
भीतर कैसे जा सके, वहां मुलख का राज ॥ २५१६ङ

योगी जन जहां स्थित हो, वह शुद्ध प्रदेश ।
अशुद्ध रूह का संभव, वहां नहीं प्रवेश ॥ २५१६च
रूह वहां ना आ सके, उस की नहीं बसात ।
योगी जन के सामने, चले न उस की बात ॥ २५१६छ

प्रभु जी ने भी कौतुक देखा, जनता को भी आतुर पेखा ।
तब संकेत मुलख को कीन, उठ चलो आदेश यह दीन ।
मुलख ने पाया जब संकेत, उठ के निकले, आया प्रेत ।
ऐसी मुलख राज की शक्ति, देख के उपजी सब मन भक्ति ।
प्रेत भूत जो जन कथ पायें, योगी से सब भय को खायें ।
एक भक्त ने तब उच्चारा, मैं देखा इक कौतुक भारा ।
मुलख राज जिस को छू पावे, उस में भी शक्ती आ जावे ।
ऐसी घटना इक कथ पाऊँ, प्रभु महिमा को मैं बतलाऊँ ।

दो० एक दिवस सो वार्ता, प्रभु आश्रम आसीन ।
इक नारी ने आय कर, विनय नाथ से कीन ॥ २५१७

महिमा नाथ आप की भारी, नगर डगर में विस्तृत सारी ।
मैं दुखिया हूं चल कर आई, करिये मेरी भी सुनवाई ।
कहा नाथ निज बात बताओ, क्या सकें हम कर समझाओ ।
नारी बोली हे महाराज, मैं दुखियारी भरसक आज ।
पति मेरे को लागा भूत, औषध कोई न आवे सूत ।
घर की वस्तु फैंक दिखलावे, वश किसी के वह नहीं आवे ।
मन्तर जन्तर तन्तर देव, कर हम हारे बहु विध सेव ।

आप की हैं अब शरणी नाथ, बनो सहायक करो सनाथ ।

दो० नाथ आप की शरण में, पड़ी हूँ मैं अशरण ।
कहीं कोई न आश्रय, गहूं आप के चरण ॥ २५१८

अनाथ नाथ जब सुनी पुकार, दीन दुखिया की जो लाचार ।
क्षण एक उन ध्यान लगाया, मुख से फिर था उन फरमाया ।
मुलख राज को जा मिल पाओ, उस का कुर्ता मांग दिखाओ ।
पुराना वस्त्र उस से लेना, और नया सिलवा के देना ।
मुलख राज का कुर्ता पावे, भूत प्रेत फिर रह न पावे ।
प्रभु जी की सुन कर यह बात, मुलख को कीना आ साक्षात ।
सुना मुलख जब प्रभु आदेश, विलंब लाया न उस ने लेश ।
शीघ्र अपनी कमीज़ उतारी, नारी को उस ने दे डारी ।

दो० उस कमीज़ को लेय कर, गई पति के पास ।
दौड़ा उस को मारने, देख वह वस्त्र खास ॥ २५१८क
अपनी जान बचान को, भाग चली वह नार ।
दीनी फैंक कमीज उस, पति अपने पर हार ॥ २५१८ख

स्पर्श कमीज का जब उस पाया, बेसुध हो वह धर्त समाया ।
धक्का देय भूत था भागा, भाग गया वह दुष्ट अभागा ।
लौट आयी यह लख कर नार, पति अपने को लीन संभार ।
कर यत्न उसे सुध में लायी, सुला शय्या पर उस को पायी ।
कुछ देरी में वह जग पाया, स्वास्थ्य लाभ था उस ने पाया ।
सुख का श्वास पत्नी ने लीन, धन्य प्रभु का उस ने कीन ।

प्रभु किरपा से उस सुख पाया, प्रभु ने उस का पती बचाया ।
प्रभु की मुलख राज पर दाया, उन के देह में प्रभु समाया ।
अद्भुत शक्ति उन को दीनी, सब जनता ने सन्मुख चीनी ।

दो० राम लाल भगवान ने, शक्ति मुलख को दीन ।
मुलख राज की शरण में, सुखी भये बहु दीन ॥ २५२०क
उस जन की सभी वार्ता, श्रवण कीन मन लाय ।
धन्य धन्य सब ने कहा, मुलख मुलख के राय ॥ २५२०ख

इक सज्जन ने तब उच्चारा, किया श्रवण प्रसंग न्यारा ।
घटना इक मम भी मन आई, स्वामी जी जो स्वयं सुनाई ।
इक दिन स्वामी ध्यानासीन, दिव्य दर्शन में थे वे लीन ।
जिस जिस लोक प्रभु ले जायें, आदर मान वहीं वे पायें ।
एक देव तब सन्मुख आया, उस ने आ कर बहुत डराया ।
खुल गया स्वामी जी का ध्यान, प्रभु के चरण गहे तब आन ।
प्रभु जी अन्तर्यामी देव, लीना जान सभी जो भेव ।
मुलख को युक्ति योग बताई, प्रभु सिमरो तुम जा चित्त लाई ।

दो० प्रभु जी के आदेश से, बैठा मुलख समाध ।
वही देव फिर आ गया, आ डाली उस बाध ॥ २५२१क
हठ देखा जब मुलख ने, उस देव का मीत ।
योग युक्ति उस धार कर, सिमरा प्रभु को चीत ॥ २५२१ख
प्रभु का सिमरन जब किया, उसी गया डर काल ।
बैठ गया इमि दुबक वह, भीगा जिमि बिडाल ॥ २५२१ग

मुलख राज की बात निराली, राम करें इस की रखवाली ।
इस की ओर जो आंख उठाये, वह खुद ही तो मुंह की खाये ।
इस को है जिस टेढ़ा देखा, प्रभु जी लीना उस से लेखा ।
देव दनुज वा दानव होय, भूत प्रेत वा मानव होय ।
रंक होय वा राजा कोई, जो बिगड़े फल पावे सोई ।
उस सज्जन की सुन कर वाणी, सभी जनों ने बहु सन्मानी ।
धन्य धन्य कहते सब लोग, मुलख राज का अद्भुत योग ।
धन्य राम लाल महाराज, जिन के शिष्य मुलख भी राज ।

दो० धन्य धन्य सब जन कहें, कर श्रवण यह बात ।
कहें मुलख के सम नहीं, आज जगत में तात ॥ २५२२क
इक सज्जन ने तब कहा, मुझ को आई याद ।
ठगना चाहे मुलख को, पछतावे वह बाद ॥ २५२२ख
सज्जन सब कहने लगे, जल्दी कहो तुम तात ।
हम सब को बहु चाव है, श्रवण करें वह बात ॥ २५२२ग

उस सज्जन ने तब बतलाई, बात अनोखी सबन सुनाई ।
करता मुलख राज व्योपार, प्रभु की आज्ञा कर स्वीकार ।
पिता की हाटी पर आसीन, आंखें मूंदे समाधी लीन ।
इक दिन आया एक कुम्हार, बिनौले का उस लीना भार ।
लाद गधे पर ले वह चाला, मान के लाला को मतवाला ।
बंद आंख जो है आसीन, क्या जाने किस ने क्या लीन ।
पैसा टका न उस ने दीना, बोरी लादी चल वह दीना ।

समझे अपने को होश्यार, सौदा लीना मुफत में मार ।

दो० सौदा वैसे ले गया, दीना न कुछ मोल ।
समझ मुलख को बावला, मांगा न जिस मोल ॥ २५२३क
प्रभु तो थे सब देखते, अन्तर्यामी नाथ ।
बिगड़े क्या उस भक्त का, प्रभु हों जिस के साथ ॥ २५२३ख

प्रभु जी प्रकट भये तत्काल, पकड़ लिया कुम्हार का माल ।
मोल बिना क्यों तुम यह लाया, उस को प्रभु जी भय दिखलाया ।
मार्ग में ही उसे ठहराया, और गधा उस का रुकवाया ।
मानी उस ने अपनी भूल, और जाना निज गलत असूल ।
उलटे पांव लौट के आया, सौदे का सब मोल चुकाया ।
बहुत भया कुम्हार हैरान, किस ने पकड़ा था वहां आन ।
वह पुरुष कहीं दीख न पाया, अद्भुत ही थी वह तो माया ।
प्रभु की महिमा कथी अपार, कौन सके पा उस का पार ।
मुलख राज भी प्रभु का रूप, कर्म करे वह सभी अनूप ।

दो० प्रभु की महिम अपार है, मुलख उसी का रूप ।
दोनों ने हैं जगत में, कीने कर्म अनूप ॥ २५२४क
आगे फिर उस पुरुष ने, कही सबन से बात ।
इक घटन मैं और कहूँ, सुन राखो जो तात ॥ २५२४ख

मुलख राज है प्रभु का रूप, इस मन प्रभु का प्रेम अनूप ।
सदा रहें प्रभु इस के संग, अभिन्न प्रभु का ही यह अंग ।
इस पै दुःख ना आवे लेश, राखें प्रभु जी ध्यान विशेष ।

एक बार की बात है मीत, बैठा मुलख ला प्रभु में चीत ।
घर की छत पर था आसीन, माता ने आवाज़ थी दीन ।
कहा मुलख को नीचे आओ, शीघ्र आओ न देरी लाओ ।
मुलख राज सुन मात पुकार, झट से उठा चला तत्काल ।
जल्दी में था फिसला पांव, धडांव गिरा वह आय कुठांव ।
माता ने तब दौड़ संभाला, देह मुलख का देखा भाला ।
चोट लगी न कोई विशेष, सुख का सांस लिया तब लेश ।

दो० नहीं थे अमृतसर प्रभु, अन्य थे वे प्रदेश ।
थे काश्मीर विराजते, मुलख राज हृदयेश ।। २५२५क
भक्त जनों के बीच में, बैठे थे उस देश ।
प्रभु जी देखी निज भुजा, हिले न वह तो लेश ।। २५२५ख

प्रभु की भुजा तो हिले न लेश, यह क्या भई है बात विशेष ।
भक्त जनों ने आ वह देखी, उस में सूजन भी उन लेखी ।
कहें "प्रभो ! यह कैसी बात, चोट लगी तो है नहीं गात ।
फिर भी सूजन इस में आई, जैसे अस्थि टूट हो पाई ।
इस का कहें प्रभो ! उपचार, बुलावें डाक्टर को इस काल ।
जैसी आज्ञा हो कर पावें, प्रभो ! आप ही हमें बतावें" ।
सुन कर प्रभु जी उन की बात, कहन लगे तब जग के त्रात ।
भक्त जनो ! तुम लो यह जान, मुझे कष्ट इस काल महान ।
मेरा बालक मुलख जो राज, छत से गिर पड़ा है आज ।

दो० छत से वह है गिर पड़ा, लगनी थी बहु चोट ।

प्रभु ने उसे संभाला, दे कर अपनी ओट ॥ २५२६

प्रभु ने उसे लिया संभाल, मुझे बताया है तत्काल ।
उसी का जानो यह निशान, औषध का नहीं यहां विधान ।
प्रभु ही देंगे इसे आराम, यहां न डाक्टर का कुछ काम ।
सुन कर भक्त जनों ने बात, "धन्य धन्य" कहा जग के व्रात ।
भक्तों की लो सुध संभाल, बांका हो न भक्त का बाल ।
अपने तन पर तुम ले लेवो, भक्तों के तुम दुख हर लेवो ।
तुम सतगुरु हो ईश्वर रूप, अनन्त शक्ति है तुम में गूप ।
दया के तुम असीम भण्डार, जानो घट घट का तुम सार ।
दूर देश की तुम लो जान, अन्तर की भी लो पहचान ।
तुम तो ईश्वर हो साकार, ब्रह्मा, विष्णु शिव अवतार ।
परब्रह्म की शक्ती नाथ, तुम में देख हम भये सनाथ ।

दो० भक्त खड़े आश्चर्य में, विनय करें बहु रीत ।
निज बाजू संभाल कर, प्रभु बैठे ला चीत ॥ २५२७

इस विध कही उस सज्जन बात, कहें सभी "तुम धन्य हो तात ।
प्रभु की महिमा तुम बहु जानो, मुलख प्रभु का प्रियतम मानो ।
स्मरण होय जो और भी बात, हमें सुनाओ वह भी तात ।
हमें भया है यह विश्वास, मुलख प्रभु का प्रिय है खास ।
सुन कर सब की ऐसी बात, लगा कहन सुनो मम भ्रात ।
प्रभु संग जब जन का हो प्यार, प्रभु भी जन से करते दुलार ।
मुलख राज ने सब कुछ त्याग, कीना प्रभु से ही अनुराग ।

भया मुलख का दृढ़ इमि योग, क्षण भी एक न होय वियोग ।
एक बार की बात सुनाऊँ, मुलख राज का नेम बताऊँ ।

दो० एक दिवस की वारता, प्रभु आसन आसीन ।
मुलख राज सन्मुख खड़ा, प्रभु दर्शन में लीन ॥ २५२८क
प्रभु की ओर निहारता, सेव कहें कुछ नाथ ।
प्रभु जानें मन मुलख का, खड़ा जोड़ जो हाथ ॥ २५२८ख

कृपा नाथ चित्त कृपा लाय, कहन लगे उसे सहज सुभाय ।
मुलख राज तव सेव महान, मांग लेवो तुम कुछ वरदान ।
सुना मुलख, शिर चरणि टिकाया, और कहा "प्रभु तुमरी दाया ।
मैं तो बस वर यह ही मांगू, तव चरणों की सेवा लागू" ।
कहा नाथ फिर "मुलख प्यारे, वर मांगो तुम प्रभु दुलारे" ।
मुलख राज फिर भी कह दीन, "चरण सेव में राखिये लीन" ।
प्रभु जी कही पुनः यह बात, "तीसरी बार कहें हम तात ।
प्रभु दयाल हैं तुम पर मीत, मांग लेवो जो आवे चीत" ।
सुन कर प्रभु जी का वरदान, कहा मुलख "मैं हूँ नादान ।
मैं मांगन ना कुछ भी जानू, प्रभु चरणों को उत्तम मानू ।

दो० मुझ पर यदि प्रसन्न हैं, यह देवें बरदान ।
तव चरणों का ही प्रभो, करूँ सदैव ध्यान ॥ २५२९

आप के चरणों का वरदान, बस मैं मांगू हे भगवान" ।
मुलख राज की सुन कर वाणी, "तथास्तु" कहा महाप्रभु दानी ।
"अटल रहे गा यह वरदान, अनन्त काल तक लो यह जान ।

सूरज चान्द का तो है अन्त, यह जानो वरदान बेअन्त ।
इस में काल की न को सीम, यह जानो वरदान असीम" ।
उसी काल हे मित्रो जानो, दीन वधाई देवन मानो ।
नभ से सुन्दर भई आवाज, "तुझे वधाई मुलख हो राज ।
मिला न किसी को यह वरदान, तुझे दिया जो प्रभु ने आन" ।
देवन की सुन कर यह वाणी, टेका माथ मुलख सन्मानी ।

दो० मुलख झुकाया माथ तब, प्रभु चरणों में मीत ।
उस के मन जो प्रेम था, बेअन्त वह प्रीत ॥ २५३०

उस सज्जन की सुन कर वाणी, प्रीती परम सबन मन आनी ।
करें सभी उस का सन्मान, कहें सभी "तुम भक्त सुजान ।
धन्य धन्य हो प्रभु के प्यारे, जिस मधुर ये शब्द उच्चारे ।
मुलख राज की महिम महान, बसी हमारे चित में आन ।
और यदि कुछ याद हो भाई, कहो सुनेंगे हम चित्त लाई ।
सभी जनों का आग्रह जान, बोला तब वह भक्त धीमान ।
प्रभु के प्रियतम मुलख जी राज, रहते प्रभु के संग विराज ।
ब्रह्मपुरी में नाथ पधारे, पीछे छोड़ भक्त वे सारे ।
केवल मुलख राज था संग, *चलता वाम जो प्रभु के अंग ।
वहां था वन्य घोर प्रदेश, गंगाधार बहे उस देश ।
ऋषियों की तपभूम प्यारी, कुदरत की वहां छवि न्यारी ।
प्रभु पल एक वहां रुक पाये, और मुलख को वे कह पाये ।

* शिष्य सदैव गुरु की बाईं ओर रहता है ।

दो० मनहर उस प्रदेश में, रुक पाये इक हाथ ।
कहन लगे दिखलाय कर, मुलख राज को नाथ ॥ २५३१
यह जो सन्मुख है इस्थान, गंगा जल जहां रुकता आन ।
जहां है भूमि सहज सपाट, जहां घास का बिछा है टाट ।
जहां पखेरू करते वास, मंद समीर बहे जहां खास ।
धूप वा छां का जहां सुपास, प्रकृति मां का सुन्दर हास ।
जहां पर छल छल करता नीर, खेले जिस से आय समीर ।
जहां देखो इक शिला विशाल, बिछी जिमि हो वहां मृगछाल ।
उसी शिला पर बैठ के लाल, योग किया हम ने बहु काल ।
आओ चलें उसी थल भाई, समय बितावें हम मन लाई ।
दो० स्थान उसी पर आय कर, खड़े भये जगनाथ ।
औषधी एक उखाडी, प्रभु जी ने निज हाथ ॥ २५३२क
वह औषध उन मुलख को, देय कहा मुख डाल ।
गंगा जल का पान फिर, तुम करो मम लाल ॥ २५३२ख
मुलख राज गुरु आज्ञा पाली, औषध उस निज मुख में डाली ।
गंगा जल का कीना पान, खड़ा भया तब होय हैरान ।
वचन न मुख से कुछ कह पाये, देख उसे प्रभु तब मुसकाये ।
चुप तुम क्यों हो मेरे लाल, चित्त में आया क्या इस काल ।
प्रभु का वचन वह सुन कर धीर, गले उतारा उस मुख नीर ।
और कहा हे जग के नाथ, कौन वह औषध दी निज हाथ ।
मुख में जो मैंने ली डाल, और है देखा एक कमाल ।

पानी का भया शरबत नाथ, और सुगंधित भी है साथ ।

दो० ऐसी कौन यह औषध, दीनी जो निज हाथ ।
औषधी का यह है गुण, किरपा वा तव नाथ ॥ २५३३क
हे मित्रो यह श्रवण कर, निज बालक की बात ।
कहन लगे जग नाथ तब, "बात बतावूं तात ॥ २५३३ख
वन में जो जन रहत हैं, प्रभु आश्रित मम मीत ।
अतिथि जनों का वे करें, आतिथ इस ही रीत ॥ २५३३ग
बस्तिन में तो बहुत से, पेय पदार्थ आँई ।
वन में केवल जल मिले, अतिथि जनों की तांई ॥ २५३३घ
इस कारण कुछ औषध, प्रभु उगाईं साथ ।
वनवासी जो दे सकें, अतिथि जनों के हाथ" ॥ २५३३ङ

प्रभु जी की सुन कर यह वाणी, मुलख राज कहा "महादानी ।
अपनी सृष्टि आप ही जानें, जगत न लेश उसे पहचाने ।
आप के मन में सब का प्यार, मात पिता सम करो दुलार ।
इस सृष्टि में नहीं कुछ तोट, मिले उसे जो तेरी ओट ।
यह प्रकृती तव गोद समान, जिस से सब कुछ पाये जहान ।
सकल पदार्थ वा तव प्यार, और अनोखा मिलत दुलार ।
जो आवे तव गोद में नाथ, मिलता सब सुख एक ही साथ ।
सब सुखों के आप हैं वाली, दर तेरे के सभी सवाली ।

दो० तेरे दर पर जगत सब, आ कर करे सवाल ।
निहाल करो जन वह तुम, जिस पर आप दयाल" ॥ २५३४क

इस विध जब थे मुलख जी, कथन करत निज बात ।
आय खड़ा उन सामने, चीता इक साक्षात ।। २५३४ख
उस चीते को देख कर, कहा प्रभु महाराज ।
"राजा जी क्या जानते, जीव मिला जो आज" ।। २५३४ग

मुलख राज कहा "हे भगवान, आप की रचना सकल जहान ।
सुन्दरता की न कोई सींव, एक से एक प्यारे जीव ।
यह लागे मुझे प्रिय विशेष, भय नहीं मेरे मन में लेश" ।
क्षण कुछ चीता था खड़ पाया, फिर वह वन की ओर सिधाया ।
दर्शन हित था प्रभु के आया, प्रभु किरपा को उस ने पाया ।
प्रभु किरपा को पाने हेत, आतुर होंय सब जड़ वा चेत ।
चीते ने प्रभु किरपा पाई, जग देखी प्रभु की प्रभुताई ।
चित्त मुलख वह जीव सुहाये, प्रभु की किरपा को जो पाये ।

दो० प्रभु कीं किरपा पाय जब, प्राणी जग में कोय ।
प्रिय लागे वह मुलख को, भाग्यवान जन सोय ।। २५३५क
श्रवण कीनी सब वार्ता, भक्त जनन मन लाय ।
धन्य धन्य कहने लगे, हो हर्षित विस्माय ।। २५३५ख
कथन किया तब सबन ने, "परम धन्य तुम मीत ।
प्रभु महिमा को जाम कर, कीन कथन इस रीत । २५३५ग

प्रभु महिमा को तुम बहु जानो, प्रभु शक्ती को तुम पहचानो ।
मुलख राज है प्रभु का रूप, मुलख में प्रभु की शक्ति अनूप ।
धार मुलख को मन के मांहि, प्रभु किरपा से जन सुख पांहि" ।

सब की श्रवण करी जब वाणी, बोला फिर वह जन कल्याणी ।
सत्य बात सब ने कह पायी, घट मुलख प्रभु शक्ति समायी ।
मुलख को मनहिं जन जो ध्यावे, ज्ञान निरंजन का वह पावे ।
ज्ञान तभी सरस्वती पाया, जभी मुलख में ध्यान लगाया ।
निराकार दिव्य ज्योति देख, निज अनुभव तब कौन उल्लेख ।

दो० निज अनुभव की बात को, रानी कौन बखान ।
"मुझे मुलख में दीखता, निराकार भगवान ॥ २५३६क
स्थूल रूप ना दीखता, दीखे ज्योति ललाम" ।
जगमग जगमग दीखता, विग्रह मुलख ललाम ॥ २५३६ख

रानी के अनुभव जो न्यारे, लेख में किमि सकें आ सारे ।
स्वरूप दिव्य मुलख का देखे, जग के भोग न लाये लेखे ।
राज्य सम्पत्ति सारी भारी, उसे न लागे वह भी प्यारी ।
रूप मुलख का दिव वह देखे, जग वैभव ना लावे लेखे ।
सद्गुरु रूप हिरदय में ध्यावे, गुरु की महिमा ही कथ पावे ।
जिमि था उस निज गुरु पहचाना, विरले ने तिमि मुलख को जाना ।
'सेवक' मान करे उस जन का, जिस के मन दिव रूप मुलख का ।
स्वरूप मुलख दिव अति प्यारा, सिमर सिमर जग विसरे सारा ।
'सेवक' चित्त रूप वह आवे, तत्क्षण परमानन्द समावे ।

दो० इस विध वर्णें सकल जन, मुलख राज प्रभाव ।
प्रभु मिलन का मुलख चित्त, बसत सदा ही चाव ॥ २५३७

४५. श्री स्वामी मुलख राज जी महाराज का समाधि अवस्था में देह त्याग कर प्रभु चरणों में महा प्रस्थान

मुलख उच्चारे प्रभो प्यारे, जा रहे दिन विरह में सारे ।
चिरकाल विरह किमि सह पाऊँ, मन चाहे अब चरणि समाऊँ ।
चित्त मुलख का चैन न पाये, प्रभु मिलने की पीड़ सताये ।
जहां प्रभु हैं वहां चलि जाऊँ, जग में क्यों मैं अब रह पाऊँ ।
यह जग घोर महा जंजाल, निकलूँ तोड़ इसे तत्काल ।
स्थूल रूप प्रभु का जिस देश, प्राण जायें मम उसी प्रदेश ।
मैं चिरकाल से रहा वियुक्त, वियोग लेश न है अब युक्त* ।
चल मना अब प्रभु के पास, जहां प्रभु वहां पहुचें श्वास ।

दो० प्रभु बसें जिस धाम अब, जहां करें दिव लील ।
हे मन अब तुम ले चलो, क्यों करत हो ढील ॥ २५३८क
जिस थल में श्री प्रभु बसें, दिव लीला जिस देश ।
वहीं मुझे तुम ले चलो, विलंब करो न लेश ॥ २५३८ख
हे मन तुम तो जानते, प्राण तड़प की पीर ।
चलो चलें प्रभु पास अब, नश्वर छोड़ शरीर ॥ २५३८ग
यह तन विष की बेलरी, करत प्रभु से दूर ।
चलो चलें अब तोड़ कर, इस का सकल ग़रूर ॥ २५३८घ
हे मन तेरी प्रीत है, प्रभु चरणों के साथ ।

* युक्त - उच्चित

चलो प्राण को ले चलो, अपने ही अब साथ ॥ २५३८ङ
मैं मानूँ उपकार तव, यदि करो यह काम ।
प्राणों को तुम ले चलो, जहां बसें मम राम ॥ २५३८च
हे मन तेरी शक्ति से, बन पाये सब काम ।
चलो चलें अविलंब वहीं, जहां बसें प्रभु राम ॥ २५३८छ
जहां बसें प्रभु राम जी, वह कौन सा धाम ।
ले चलो उसी धाम में, जहां बसें प्रभु राम ॥ २५३८ज
तू तो मन सर्वज्ञ है, गति तेरी अविराम ।
चलो चलें उस देश में, जहां बसें प्रभु राम ॥ २५३८झ
त्रय काल त्रिलोक का, तुझे सभी है ज्ञान ।
चलो चलें उस देश में, जहां राम भगवान ॥ २५३८ञ
तू तो ज्योती रूप है, तुझ से ना कुछ गूप ।
उसी देश में ले चलो, जिस जां राम अनूप ॥ २५३८ट
हे मन अब तो मान लो, मेरी विनय पुकार ।
उड़ चलो उसी देश में, जहां राम साकार ॥ २५३८ठ
तुझे न होवे श्रम कभी, साची है यह बात ।
देर करो किस हेतु अब, त्याग चलो तुम गात ॥ २५३८ड
त्याग चलो इस गात को, क्यों लगावो देर ।
सहन विरह ना हो सके, सकल ओर अंधेर ॥ २५३८ढ
हे मन मेरी बात को, लो मान मम मीत ।
चलने में न देर कर, क्यों जगत से प्रीत ॥ २५३८ण

लिया देख तू जगत को, क्या मिला यहां चैन ।
बिन प्रभु के रहें सदा, दुखी प्राण दिन रैन ।। २५३८त

दुख में बीते काल सब, प्रभु बिना मम मीत ।
निकल चलें इस देह से, करें प्रभु से प्रीत ।। २५३८थ

प्रभु से साची प्रीत हो, लें जग से मुख मोड़ ।
चलो चलें प्रभु पास ही, तिनका जग से तोड़ ।। २५३८द

तिनका जग से तोड़ कर, उड़ चलें उस देश ।
जहां बसें प्रभु राम जी, भक्तन के हृदयेश ।। २५३८ध

भक्तन के हृदयेश जो, साची उन से प्रीत ।
करें निरन्तर जाय कर, यही भक्ति की रीत ।। २५३८न

यही भक्ति की रीत है, इसे निबाहें तात ।
चलें प्राण को लेय कर, बस आज ही प्रात ।। २५३८प

बस आज ही प्रात हम, मिलें राम से जाय ।
सोच सकल तुम छोड़ दो, मग में राम सहाय ।। २५३८फ

मग में राम सहाय हैं, नहीं सोच की बात ।
चल चलें जहां राम हैं, बस आज ही प्रात ।। २५३८ब

देख लिया संसार को, मतलब के सब यार ।
चल चलें जहां राम हैं, साचा जिन का प्यार ।। २५३८भ

साचा उन का प्यार है, भक्त जनों से तात ।
चल चलें जहां राम हैं, चलो आज ही प्रात ।। २५३८म

राम विछोड़ा ना सहूं, तुम साक्षी मम मीत ।

चलें संग ले प्राण को, यही प्रीत की रीत ॥ २५३८य
वियोग प्रभु का न सहूँ, जा कर पग समाऊँ ।
साध हमारी जान लो, शांति इस विध पाऊँ ॥ २५३८र
रे मन मेरी बात को, श्रवण करो मम मीत ।
करो न देरी लेश भी, गहें प्रीत की रीत ॥ २५३८ल
वह देखो प्रभु राम जी, देख रहे मम बाट ।
चलो प्राण को लेय कर, सारे खुले कपाट ॥ २५३८व
इस जग से क्या नात है, झूटा इस का प्यार ।
भीड़ पड़े न संग रहें, मतलब के सब यार ॥ २५३८श
चलो चलो अब चल चलें, द्वार दशम को खोल ।
"ओं नमो श्री राम लाल", निकला मुख से बोल ॥ २५३८ष
द्वार दशम तब खुल गया, कीन महा प्रस्थान ।
गए चले थे मुलख जी, प्रभु रहें जिस स्थान ॥ २३५८स

जिस प्रदेश में प्रभु का वास, मुलख राज का निकल के श्वास ।
पहुंच उसी देश में ठीक, पाली प्रेम की साची लीक ।
साचा प्रेम जो होवे चित्त, प्रेमी से मिले प्रेमी नित्त ।
निकल पायें जब तन से प्राण, पहुँचें प्रेमी के जा स्थान ।
मुलख राज की साची प्रीत, साची प्रेम की पाली रीत ।
त्याग देह वे वहीं पधारे, जहां पर रहें प्रभु जी प्यारे ।
देख मुलख का यह प्रस्थान, "धन्य मुलख" कहा देवन आन ।
"धन्य धन्य हैं मुलख जी राज, धन्य राम सद्गुरु महाराज ।

धन्य मुलख धन्य प्रभु दयाल", कीनी देवन उच्च पुकार ।

दो० मुलख राज योगेश इमि, नश्वर देह त्याग ।
मिले जाय निज नाथ से, अद्भुत मन अनुराग ॥ २५३९क
कनखल के शुभ धाम में, त्यागा मुलख शरीर ।
फैल गई यह सूचना, सब जन भये अधीर ॥ २५३९ख
उमड़ उमड़ सब आ गये, दर्शन हेतु लोग ।
बहुत सबन के चित्त में, था काल उस सोग ॥ २५३९ग
तीन नवंबर साठ सन, पवित्र कार्तिक मास ।
*पूर्णिमासी के दिवस, मुलख त्यागे श्वास ॥ २५३९घ
मुलख त्यागे श्वास जब, सब भक्तन के प्राण ।
कण्ठागत तब हो गये, लागे शून्य जहान ॥ २५३९ङ

शून्य जगत भक्तन को लागे, फूट फूट बहु रोने लागे ।
कोई कहें हम भये अनाथ, बैठा को निज पकड़ के माथ ।
सिसक सिसक को भये अधीर, सह सकें नहीं मन की पीर ।
अश्रूधार बहावें नार, शोक का वहां न पारावार ।
आकस्मिक था यह वज्रपात, दैवी लीला का उत्पात ।
स्वप्न में भी था न यह ज्ञान, पड़ी जो आ कर विपद महान ।
सद्गुरु का जो भया वियोग, उस से दुखी हुए सब लोग ।
'सेवक' के जो चित्त का हाल, लिख सके नहीं वह त्रिकाल ।

* श्री १००८ स्वामी मुलखराज जी महाराज ३ नवंबर १९६० बृहस्पतिवार तदनुसार १८ कार्तिक संवत २०१७ पूर्णिमा को प्रात.काल ७-३० कनखल आश्रम में समाधिस्थ होकर शरीर लीला रमा अपने सद्गुरु के परम धाम को पधार गये ।

दो० सेवक के जो चित्त में, ताप भया तत्काल ।
प्रभु किरपा से ही भया, सहन योग उस काल ।। २५४०क
कभी न ऐसा दुख भया, जो भया उस काल ।
'सेवक' के मन की दशा, जानें दीन दयाल ।। २५४०ख

४६. सेवक पर प्रभु कृपा

दीन दयाल ने कृपा कीनी, सुन्दरतम अनुभूति दीनी ।
"मैं तो रहूँ सदा तव पास, और मुलख जो प्रिय मम खास ।
संग तुम्हारे हम रह पावें, जन आवें तो योग करावें ।
शोक को तुम अब देवो त्याग, जावो योग कार्य में लाग ।
निमित्त मात्र तुम बन के मित्त, योग का कार्य करो ला चित" ।
प्रभु का श्रवण किया उपदेश, भूल गया तब दुख कुछ लेश ।
चित्त में धारा यही विचार, मम जीवन के प्रभु आधार ।
प्रभु कारज में जीवन अर्पूं, उन को ही सर्वस्व समर्पूं ।

दो० प्रभु का है आह्वान जिमि, प्रभु का जिमि उपदेश ।
उस के ही अनुसार हो, मेरा कर्म हमेश ।। २५४१क
इस विध मन में धार कर, प्रभु को कर प्रणाम ।
चित्त बसायी बात यह, प्रभु सब सुख के धाम ।। २५४१ख
प्रभु सब सुख के धाम हैं, प्रभु ही पालन हार ।
अनन्तकला अवतारी, योग धर्म रखवार ।। २५४१ग
शरण मुलख जिन लेय कर, कीना जग उद्धार ।

उन के अश्रित मैं रहूँ, करूँ योग प्रचार ।। २५४१घ
सब भक्तन ने मिल करि, शास्त्र विधि अनुसार ।
मुलख राज के देह का, था कीना संस्कार ।। २५४१ङ
देवन ने तब दुन्दुभी, वादन कीनी आय ।
जिन के भाग्य महान थे, लख वही यह पाय ।। २५४१च

इस विध मुलखराज महाराज, प्रभु के रूप में गये विराज ।
दिव्य रूप को उन अपनाया, 'सेवक' सेवा मग अपनाया ।
दिव्य रूप उन का जो प्यारा, 'सेवक' का वह बना सहारा ।
वही रूप सब कार्य करावे, शरणी 'सेवक' को रख पावे ।
दोषों का यह जन आगार, तो भी भया प्रभु को स्वीकार ।
इस भेद को न कोई जाने, प्रभु की माया प्रभु पहचाने ।
प्रभु किरपा जिस पर कर पायें, रहस उसी को यह समझायें ।
प्रभु की दिव संस्था यह भारी, साधन योगाश्रम की क्यारी ।
इस का जग में हो विस्तार, दिव्य योग का होय प्रचार ।
प्रभु की संस्था प्रभु का नाम, साधन योग आश्रम का काम ।
जिन की प्रभु चरणों में प्रीत, वही चलावें इस की रीत ।

दो० करते प्रभु से प्रीत जो, योग धर्म से प्यार ।
प्रभु के आश्रम का जन, वही करें प्रचार ।। २५४२

यम नियम जो पाल दिखावे, और प्रभु से प्रीत बढ़ावे ।
योग में जिस का हो विश्वास, वह प्रचारक जानो खास ।
निमित्त प्रभु का निज को मान, चित्त में ला न कुछ अभिमान ।

शक्ति प्रभु की जान महान, अपने को तुच्छ सेवक जान ।
आश्रम का जो करता काम, प्रचारक जानें उस को राम ।
चित्त में राखे जो अभिमान, अपने में बहु शक्ति जान ।
निज नाम का करत प्रचार, बड़पन अपने आप में धार ।
वह है करता उलटा काम, स्वीकार करें न उस को राम ।

दो० अपने ही जो नाम का, करत रहत प्रचार ।
योग धर्म को भूल कर, प्रभु की शक्ति विसार ॥ २५४३क
उस नर की हम न कहें, कथें न उस की बात ।
योग धर्म से दूर वह, मायावी साक्षात ॥ २५४३ख

माया से मैं डर बहु खाऊँ, प्रभु की शरणी ही रह पाऊँ ।
प्रभु को छोड़ न कुछ भी चाहूँ, निज मन से बस प्रभु ध्याऊँ ।
प्रभु का नाम सदा जप पाऊँ, मुख पे और नाम न लाऊँ ।
मात पिता मैं प्रभु को जानूँ, बन्धु सखा मैं प्रभु को मानूँ, ।
धन दौलत हैं प्रभु जी मेरे, वे ही विद्या ज्ञान घनेरे ।
उन को छोड़ न कुछ भी मेरा, मेरा बस उन चरणि बसेरा ।
उन के आश्रित मैं रह पाऊं, और न इच्छा मन में लाऊं ।
उन का काम करूँ दिन रात, और करूँ नहीं कुछ भी बात ।

दो० प्रभु का कारज मैं करूँ, जब तक घट में प्राण ।
प्रभु प्रभु ही करत मना, घट से निकलें प्राण ॥ २५४४क
दिव लीला उस नाथ की, करत रहूँ मैं गान ।
मम प्राण में रम रहे, प्रभु का सिरफ ध्यान ॥ २५४४ख

प्रभु जी मम यह विनय पुकार, श्रवण करो चित्त किरपा धार ।
मेरा तन मन धन परिवार, करिये किरपा कर स्वीकार ।
मेरा ना कुछ भी रह पाये, सब कुछ तेरा ही हो जाये ।
तेरा बन, कर पाऊँ काम, मेरी बस यह विनय है राम ।
ऐसा जब इस मन कह पाया, रूप प्रभु का सन्मुख आया ।
"तथाऽस्तु" कहा कर स्वीकार, कीना 'सेवक' को स्वीकार ।
'सेवक' का सब उतरा भार, प्रभु कीना जब से स्वीकार ।
खुल गये सुख के सभी द्वार, प्रभु संभाला जब से भार ।

दो० प्रभु उठाया भार जब, इस 'सेवक' का आप ।
रहा कर्म बस एक तब, नाम प्रभु का जाप ॥ २५४५

'सेवक' कुछ नहीं करता काम, करें सभी कुछ आ कर राम ।
संभाला घर बार सब राम, आश्रम का भी सारा काम ।
करें करावें आ कर योग, हरते जनता के बहु रोग ।
भक्तन को उपदेश सुनावें, ध्यान समाधी भी दे पावें ।
प्रभु का आश्रम प्रभु का योग, योग करें बहु आ कर लोग ।
'सेवक' सब को यही बतावे, योग बिना ना जन सुख पावे ।
तन के साधन मन का योग, यम नियम सभी पालें लोग ।
राम मुलख को सदा ध्यावें, सेवा आश्रम की कर पावें ।
महाप्रभु तब रहें अनुकूल, दैव भी देवे दुःख न भूल ।
प्रभु जी दिव्य योग जो लाया, मुलख राज ने जग फैलाया ।
'सेवक' को भी भया आदेश, योग प्रचारे देश विदेश ।

योग ही केवल धर्म का मूल, अधर्म का उखड़े उस से शूल ।

दो० प्रभु पधारे धर्म हित, लेय मुलख को संग ।
'सेवक' को भी शरण दी, लाया अपने अंग ॥ २५४६क
ला कर अपने अंग से, कर्म करावें आप ।
आश्रम की सब सेव भी, और जपावें जाप ॥ २५४६ख
लिखवाई जो गाथ हैं, लिख पाई इस दास ।
दिव्य काण्ड पूरण भया, प्रभो सुनो अरदास ॥ २५४६ग
पढ़ें सुनें जो यह कथा, सुखी रहें सब काल ।
ध्यान आप का वे करें, मार सके न काल ॥ २५४६घ

—: इति :—

ॐ तत्सदिति श्री सद्गुरु योगेश्वर स्वामी मुलख राज के शिष्य 'सेवक'
चमन लाल कपूर कृत "श्री योग महादिव्य रामायण" का दिव्य
काण्ड आज १८ फाल्गुण संवत २०३९ तदनुसार
१ मार्च १९८३ मंगलवार को संपूर्ण हुआ।

❖ योग साधन आंश्रम के नियम ❖

(श्री योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज द्वारा रचित)

1. आश्रम में किसी प्रकार की फीस नहीं ली जाती।
2. पुरूषों को पुरूष और स्त्रियों को स्त्रियां साधन सिखलाती हैं।
3. आश्रम के विद्यार्थी तीन श्रेणियों में विभक्त किये जाते हैं : –
   (क) जो सर्वदा आश्रम में रहकर अपने साधन को करते हुए आश्रम की यथा योग्य परिचर्य्या और अन्य भाईयों की प्रेम पूर्वक सेवा करेंगे।
   (ख) जो साधक यथा अवकाश आश्रम में रहकर स्वयं साधन सीखकर अपने देश में जाकर दूसरों को भी अपने अनुभव से लाभ पहुंचाते हुए प्रचार करेंगे।
   (ग) जो आश्रम में आकर साधनों से लाभ उठाएंगे।
4. प्रत्येक साधक को अपने सब खर्च का प्रबन्ध आप करना होगा।
5. रोगी साधक को अपने रोग निवारणार्थ कम से कम एक मास रहने का प्रबन्ध करके आना चाहिये, किन्तु जो भगवद्भक्ति मानसिक शान्ति के लिये योग के अन्तरंग साधन करना चाहते हों उनका श्री गुरू जी के ही विचार पर सदा निर्भर रहना होगा।
6. प्रत्येक साधक को अपनी दिनचर्य्या तथा रात्रिचर्य्या (टाईम टेबल) श्री गुरू जी की आज्ञानुसार नियत करनी होगी।
7. योग चिकित्सा से चिकित्सक होने वाले साधक को अपने चिकित्सा काल के अन्दर किसी भी डाक्टर वैद्य या हकीम की दवाई खाना निषिद्ध है।
8. यदि कोई साधक अन्य साधकों के किसी साधन को देखकर बिना अनुमति स्वयं उन साधनों को करेगा तो उस से लाभ हानि का जिम्मेवार वह स्वयं होगा और आश्रम के आचार्य के अनुशासन का भी भागी होगा।
9. २० वर्ष से कम आयु वाले को उसके संरक्षकों की सम्मति से प्रविष्ट किया जायेगा।
10. स्त्रियों को संबन्धियों के साथ आना चाहिये या वृद्ध स्त्री को जो संरक्षक हो उसी के साथ आना चाहिये।
11. साधकों को जो भी कोई उपासना या साधन दिया जावे उसे नित्य नियम पूर्वक करना होगा और आचार्य जी की आज्ञा के बिना अन्य कोई मनमानी नूतन उपासना या धारणा नहीं करनी होगी।

●●●●